TIGHT BINDING BOOK

UNIVERSAL LIBRARY
OU_182261
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No H83
S53 B

Accession No. H 2054

Author शर्मा, शिवनाथ.

Title भिखारिणी १९५२

This book should be returned on or before the date last marked below

भिखारिणी

लेखक

पं० विश्वम्भरनाथशर्म्मा कौशिक

प्रकाशक

बीसवीं सदी पुस्तकालय

गऊघाट, मिर्जापुर सिटी,

यू० पी०

प्रकाशक
महादेवप्रसाद सेठ,
बीसवीं सदी पुस्तकालय,
गऊघाट, मिर्जापुर सिटी।

प्रथम बार, एक हज़ार

मूल्य ३) रुपये

Checked 1969

मुद्रक
महादेवप्रसाद
बीसवीं सदी प्रिं
गऊघाट, मिर्जापुर

दीपक

—:o:—

"मधुकरी"की भूमिकामें, हिन्दोमें अपने ढंगके निराले कहानी-लेखक, प्रसन्न-मुख, भाई विनोदशङ्कर व्यासने माननीय "कौशिक"जी-का परिचय देते हुए लिखा था—"हिन्दीके चुने हुए कहानी लेखकोंमें कौशिकजीका उच्च स्थान है।" इस पर, यदि मैं भूलता नहीं हूं तो, "कर्मवीर"के विदित विनय मोहनजीने यह राय दी थी कि—"कौशिकजी प्रेमचन्द-स्कूलके प्रथम श्रेणीके कहानी-लेखक हैं।" नाप-तौलके ऐसे असाहित्यिक-साहित्यिक प्रश्नोंपर अखबारी विनय मोहनजीसे अक्सर असहमत होते हुए भी उनकी उक्त सम्मति मुझे ठीक जँचती है। और वैसे तो सच बात यह है कि आधुनिक हिन्दी गल्प-साहित्यमें नामधारी स्कूल चाहे जितने हों, मगर सभी अभी बन रहे हैं। अस्तु, यत्रतत्र बिखरी ईंटें, सुर्खी और सीमेन्टके ढेरोंका नाम यदि स्कूल हो सके तो हिन्दी गल्प-साहित्यमें एक या एकाधिक स्कूल हो सकते हैं। अन्यथा न तो अभी कोई माननीय स्कूल है और न अध्यापक ही। मेरी रायमें प्रेमचन्दी-स्कूल बहुधा हृदयसे दूर और माथेके निकट दिखाई पड़ता है। कौशिकजी हृदयकी दृष्टिसे, प्रेमचन्दी-स्कूलसे ऊँचे हैं, आगे हैं, गहरे हैं—मेरी नजरोंमें, और दुनियाकी नजरोंका मैंने कोई ठेका नहीं लिया है।

कहानी-लेखन-कलाकी दृष्टिसे "कायाकल्प" और "प्रतिज्ञा"मे

अद्वय श्रीप्रेमचन्द्रजी जितने ही असफल हुए हैं, "भिखारिणी" में कौशिकजी उतनेही सफल। जानकर अभागिनी जस्सो या यशोदाका चित्र तो सुचतुर चित्रकारने खूबही सँवारा है। उसके सुन्दर हृदयके उथल-पुथलको पढ़ते-पढ़ते अक्सर गला भर आता है, आँखे सजल हो जाती हैं। ठाकुर अर्जुनसिंहका चित्र बहुत स्वाभाविक और मनोरञ्जक है और परिस्थितियोंके गुलाम, दुर्बल-हृदय रामनाथके अभिन्न मित्र व्रजकिशोरके संवादोंका ढंग आकर्षक, मर्मस्पर्शी और गुदगुदीसे भरा है। सचमुच कौशिकजी संवाद या "डायलाग" लिखनेमे अपने ढङ्गके बेजोड़ हैं। कौशिकजीको [illegible] किसीके स्कूलमे खपने योग्य नहीं, बल्कि, स्कूल-निर्मात्री होने योग्य हैं। मुझे विश्वास है, समय मेरी बातोंकी सचाई साबित करेगा।

प्रायः १६ वर्षोंसे माता हिन्दीके आँगनमें घूमघूम कर थिरकने वाली आदरणीय कौशिकजीकी कलामयी प्रतिभा षोडशीकी विशेषताओंका वर्णन मेरे द्वारा होना, वही दिवाकरको दीपक दिखाना है। मगर हम हिन्दू लोग आज ही नहीं, अनन्त कालसे सूर्यको अद्धया दीपक दिखानेके आदी है। अतः मैं इसे धृष्टता नहीं कर्त्तव्य समझता हूं।

मेरा विश्वास है, "भिखारिणी"से हिन्दी-कहानियोंके पाठक-पाठिकाओंका भरपूर मनोरञ्जन होगा।

मतवाला मण्डल
मिर्ज़ापुर। } पाण्डेय बेचन शर्मा "उग्र"

—*—

भिखारिणी

१

"हरद्वारी। ओ हरद्वारी !!"

"हुजूर।"

"दरवाजेपर यह कैसा शोर मचा है ?"

"हुजूर, एक भिखारी बड़ा शोर मचा रहा है, कई बार कहा, पर जाता ही नहीं।"

"नहीं जाता। क्या कहता है ?"

"कहता कुछ नहीं, कुछ मागता है।"

बाबू साहबने चार पैसे जेबसे निकालकर नौकरकी ओर फेंक दिये और बोले—जाओ, यह पैसे उसे दे दो।

नौकर पैसे लेकर बाहरकी ओर चला गया, परन्तु कुछ ही क्षणों पश्चात् पुनः लौट आया और बोला—सरकार वह चार पैसे नहीं लेता।

बाबू साहब—चार पैसे नहीं तो फिर क्या चार रुपये लेगा ?

नौकर—हुजूर, वह कहता है कि भोजन करा दिया जाय, मैं पैसे नहीं लूंगा।

बाबू साहब—अकेला है ?

नौकर—नहीं सरकार, साथमें एक लड़की भी है।

बाबू साहब—लडकी कितनी बड़ी है ?

नौकर—होगी कोई चौदह-पन्द्रह बरस की।

बाबू साहब—तब तो पूरे दो आदमी समझो।

नौकर—जी हुजूर।

बाबू साहब कुछ क्षणों तक सोचकर बोले—अच्छा चलो देखें क्या खायगा।

यह कहकर बाबू साहब बाहरकी ओर चले।

बाहर आकर उन्होंने देखा कि एक भिखारी जिसकी वयस ४०, ४५ वर्षकी होगी, फटे-पुराने कपड़े पहने खडा है। पास ही एक लडकी एक मलिन तथा जीर्ण-शीर्ण धोती पहने सिकुड़ी हुई खड़ी है। बाबू-साहबने भिखारीसे पूछा—क्या चाहते हो ?

भिखारी हाथ जोड़कर क्षीण स्वरमें बोला—बाबू जी, और कुछ नहीं, खाली पेटभर भोजन।

बाबू साहब—क्या खाओगे ?

भिखारी—जो बाबू साहबकी मर्जी हो।

बाबू साहबने एक क्षण सोचकर पूछा—बाजार का बना हुआ खा सकते हो ?

भिखारी—हां खा लूंगा।

बाबू साहबने जेबसे एक रुपया निकालकर नौकरको दिया और बोले—जाओ, बारह आनेकी पूड़ियां और चार आनेकी मिठाई ले आओ।

भिखारी बोल उठा—बारह आनेकी बहुत होंगी, इतनी हम दोनो नहीं खा सकेंगे, आठ आनेकी बहुत है।

बाबू साहबने नौकरसे कहा—अच्छा आठ ही आनेकी ले आना।

नौकर बाजारकी ओर चल दिया। बाबू साहबने भिक्षुकसे कहा—यहा पत्थरपर बैठ जाओ, वह अभी ले आयेगा—खा लेना।

यह कहकर बाबू साहब घरके भीतर जानेको उद्यत हुए। उसी समय भिक्षुक हाथ जोड़कर बोला—बाबू जी, भगवान आपका भला करें, आपने इस समय बडी दया की। जहां इतना किया वहा एक दया और कीजिए।

बाबू साहब ठिठक गये और बोले—वह क्या ?

भिखारी—इस कन्याके लिए एक फटी-पुरानी धोती मिल जाती ता बड़ी दया होती।

इस बार बाबू साहबने लड़कीको दृष्टि भरके देखा। लड़कीके शरीरमें जो धोती थी, वह कई स्थान पर फटी हुई थी, जिसमेंसे उसका शरीर दिखाई पड़ रहा था। लड़की अपना अङ्ग छिपानेके लिए बहुत ही सिकुड़ी हुई खड़ी थी।

बाबू साहब कुछ क्षणों तक सोचते रहे। उन्होंने देखा कि लड़कीके शरीरपर यौवनके चिन्ह प्रस्फुटित होने लगे है। उन्होंने सोचा—'सत्य ही इसे वस्त्रकी आवश्यकता है। जवान कन्याका ऐसा वस्त्र पहने रहना, जिसमेंसे उसका अङ्ग दिखाई पड़े, अनुचित है।' यह सोचकर वह चुपचाप भीतर गये और अपने सन्दूकसे एक धुली हुई नई धोती

निकालकर ले आये। धोती भिखारीको देकर बोले—'लो यह इसे अभो पहना दो।'

भिक्षुकने बाबू साहबको अनेक आशीर्वाद दिये और कन्यासे कहा—ले बिटिया इसे पहनले।

लड़की धोती लेकर पहननेको उद्यत हुई परन्तु फिर कुछ सोचकर बोली—बाबा, नहा लूं तब पहनूं तो अच्छा है।

भिखारी—हां हां नहा डाल। वह सामने पम्प लगा है, वहाँ नहा ले।

लडकी सडक पर लगे हुए पम्पकी ओर चली, इधर बाबू साहब धीरे-धीरे भीतर चले आये।

थोड़ी देर पश्चात् हरद्वारी कुछ कार्यवश उनके कमरेमें पहुंचा। बाबू साहबने उससे पूछा क्यों हरद्वारी, खाना ले आये?

हरद्वारी—हां सरकार ले आया, दोनों बैठे खा रहे हैं।

बाबू साहब पुनः उठे और बाहर पहुंचे। बाहर जाकर उन्होंने देखा कि पिता-पुत्री दोनों भोजन कर रहे हैं। बाबू साहब चुप-चाप खडे होकर उनकी ओर देखने लगे।

लडकी बाबू साहबकी दी हुई धोती पहने थी। बाबू साहबने कन्याको गौरसे देखा। उसका रङ्ग गोरा था—मुखमण्डल गोल, आंखें बडी-बडी तथा अत्यन्त काली थीं। इस समय श्वेत धोती पहने हुए वह बाबू साहबको अत्यन्त सुन्दर दिखाई पड़ी। बाबू साहब सोचने लगे—'ऐसी सुन्दर कन्या—और भिखारिणी! ईश्वरकी लीला भी समझमें नहीं आती। यह तो इस योग्य थी कि किसी सद्गृहस्थकी अर्द्धाङ्गिनी होती, सुखसे जीवनके दिन व्यतीत करती। इसकी यह

वयस खेलने-खाने और यौवनका सुख लूटने की है—न कि गली-गली ठोकरें खानेकी।' बाबू साहबके हृदयसे एक दीर्घ निश्वास निकली।

बाबू साहब खड़े इस प्रकारकी बातें सोचते रहे। थोड़ी देरमें वे दोनों भोजन कर चुके।

हरद्वारीने आकर दोनोंको पानी पिला दिया। इसके पश्चात भिखारी चलनेको उद्यत हुआ। उसने बाबू साहबको सैकड़ों आशीर्वाद दिये। बाबू साहब इस समय अत्यन्त दयार्द्र हो रहे थे। अतएव वह भिखारीसे बोले—जब तुम्हे कहीं भोजन न 'मिले तो तुम यहां आ जाया करो।

भिखारी पुनः बाबू साहबपर आशिर्वादोंकी वर्षा करने लगा। बाबू साहब घरके भीतर चलनेको उद्यत हुए—उन्होंने एक दृष्टि कन्या पर डाली। उन्होंने देखा कि कन्या उनकी ओर स्थिर दृष्टिसे देख रही है। बाबू साहबकी आंखे कन्याकी आखोंसे जा मिलीं। एक क्षणके लिए चारों आंखें एक हो गईं, परन्तु तुरन्तही कन्याने लज्जाकर अपनी आंखें नीची कर लीं। बाबू साहबके हृदयमे एक धक्का-सा लगा। उन्होंने अपने नेत्र बन्दकर लिये। कुछ क्षणों पश्चात जब उन्होंने पुनः नेत्र खोले तो उन्होंने देखा कि भिखारी कन्याका हाथ पकड़े धीरे-धीरे एक ओरको जा रहा है। बाबू साहब खड़े देखते रहे। थोड़ी दूर पहुंचकर कन्याने पुनः घूमकर बाबू साहबको देखा और बाबू साहबको अपनी ओर देखते हुए देख जल्दीसे मुंह घुमा लिया।

बाबू साहब मनहीमन कुछ सोचते हुए धीरे धीरे घरके भीतरकी ओर चले।

२

बाबू रामनाथ घरके रईस है। इनकी वयस २२, २३ वर्षके लगभग है। बाबू रामनाथ अभी अविवाहित है। बी० ए० पास कर लेने पर इनका विवाह होगा। इनके पिता विकालत करते हैं—विकालतसे उन्हे बहुत अच्छी आमदनी है। इनकी एक छोटी भगिनी है और माता-पिता—इनके अतिरिक्त परिवारमे अन्य कोई नही।

बाबू रामनाथको भिक्षुककी कन्याका ध्यान रह-रह कर आ जाता था। उस घटनाको अत्यन्त साधारण समझकर वह उसे भूल जाने की चेष्टा करते थे, परन्तु नहीं भूलते थे, जब तक अन्य किसी कार्यमे लगे रहते तब तक तो ध्यान नहीं आता था परन्तु जहां कार्यसे छुट्टी पाकर अकेले बैठते—बस, मस्तिष्कमें उसीकी बातें घूमने लगतीं। वह सोचते—'ऐसी सुकुमार कन्या भीख मागती फिरती है? वह भीख मांगने योग्य तो है नहीं। चलते समय उसने कैसी स्थिर दृष्टिसे मेरी ओर देखा था। वह दृष्टि विचित्र थी। इच्छा होती है कि उसे उसी प्रकार अपनी ओर देखते हुए एक बार और देखूं। और जब सड़कपर जा रही थी तब पीछे घूमकर भी तो देखा था। श्वेत धोतीमें वह कितनी सुन्दर मालूम होती थी। है कोई उच्च जाति की, नीच जातिकी कन्या इतनी सुन्दर नहीं हो सकती। बड़ी गलती हुई—जाति पूछना भूल गया। अब दुबारा आवेगी तो अवश्य पूछूंगा। परन्तु क्या अब वह भिक्षुक और उसकी कन्या पुनः आवेगी? कौन

कह सकता है—आवे न आवे, इन भिखारियोंका कौन ठीक आज यहां है कल वहां। ऊंह! होगा भी, जाने दो, अपनेसे क्या मतलब। भोजन खिला दिया, वस्त्र दे दिया, बस इतना काफी है। भिखारियोंसे अधिक घनिष्टता बढानेसे क्या प्रयोजन।' यह सोचकर बाबू रामनाथ अपनी समझमे एक प्रकारसे भिक्षुक और उसकी कन्यासे सारा नाता तोड़ कर बैठते, परन्तु जहां कुछ देर हो जाती वहीं पुनः अपने आप ही बिना बाबू साहब की आज्ञा लिये हुए, भिखारीकी कन्या उनके मस्तिष्क मे घुस आती। बाबू साहब पुनः उसकी काल्पनिक मूर्ति देखने और उसके सम्बन्धमे अनेक प्रकारकी बातें सोचनेमें मग्न हो जाते। कभी कभी बाबू साहब अपनी इस दुर्बलता पर झुंझला उठते थे। अपने मस्तिष्कको दूसरी ओर लगानेके लिए कोई पुस्तक लेकर बैठ जाते। दो चार पृष्ठ पढनेके पश्चात् ही पृष्ठोंपरसे अक्षर लुप्त हो जाते और उनके स्थानपर भिखारी-कन्याकी मूर्ति प्रस्फुटित हो जाती। थोडी देर तक तो बाबू साहब उस मूर्तिको देखने और उसके सम्बन्धमे अनेक प्रकारकी बातें सोचनेमे लीन रहते, परन्तु जहाँ उन्हे अपनी इस दुर्बलताका ध्यान आता वहीं तुरन्त पुस्तक पटक देते और अपने ही आप कहते आखिर वह मेरी कौन है? वह भिखारिणी मैं एक रईसका लड़का। आकाश पातालका अन्तर है। न जाने मुझे क्या हो गया है। राम! राम! कोई मेरी यह दशा जाने तो क्या कहे, बडी शर्मकी बात है।

इसी प्रकार कुछ दिन व्यतीत हुए। एक दिन बाबू रामनाथ बैठे एक अंगरेजी समाचार-पत्र पढ़ रहे थे। उसी समय उनका

नौकर हरद्वारी उनके पास आकर बोला—'बाबूजी, आज वह भिखारी फिर आया है ।'

यह शब्द कानमें पड़तेही रामनाथने एक दमसे चौंक कर कहा—वह भिखारी आया है ?

हरद्वारी—हाँ ।

यह सुनतेही रामनाथने तुरन्त पत्र एक ओर फेंक दिया और उठ खड़े हुए । एक साधारण भिखारी और उसकी कन्यासे मिलनेके लिए बाबू साहबको इतना उत्सुक देखकर हरद्वारीको कुछ आश्चर्य हुआ । परन्तु अपने आश्चर्यको मनही मन दबाकर हरद्वारी बाबू साहबके पीछे पीछे चला ।

बाहर आके बाबू साहबने देखा कि वही भिखारी पत्थरपर बैठा है, पासही उसकी कन्या पत्थरके सहारे टिकी हुई खड़ी है । बाबू साहबकी ओर कन्याने देखा, बाबू साहबने भी देखा—दोनोंकी आखें एक क्षणके लिए चार हो गईं—इसके उपरांत कन्याने लजाकर अपनी आंखें नीची कर लीं । कन्या बाबू साहबकी दी हुई वही धोती पहने थी—परन्तु वह अब मैली हो गई थी । इस मैली धोतीमें कन्या बाबू रामनाथको और भी अधिक सुन्दर दिखाई पड़ी । उनके हृदयमें कवित्वका सागर हिलोरें मारने लगा । सोचने लगे—कीचमें कमल इसीको कहते हैं । यह धोती कीच है और इसका मुख कमल ! कितनी सुन्दर उपमा है । श्यामघनोंके मध्य चन्द्रमाकी उपमा भी दी जा सकती है । बाबू रामनाथ न जाने कब तक खड़े-खड़े उपमाएँ सोचते परन्तु उसी समय भिक्षुकने कहा—बाबूजी आपने

कहा था जब कहीं भोजन न मिले तब यहीं आजाया करना—सो आज दिन भर हो गया कुछ नहीं मिला। थोड़ा भोजन ...।

बाबू साहब बीचहीमें बोल उठे—हां, हां, तुमने बड़ा अच्छा किया जो चले आये। हरद्वारी।

हरद्वारी तो बाबू साहबकी खोपड़ीपर ही खड़ा था। उसने कहा कहिये क्या हुक्म है।

बाबू साहबने कहा—'जाओ एक रुपयेकी पूड़ी और दो तीन तरह-की मिठाई ले आओ। हरद्वारी किंचित् मुस्कराकर बाबू साहबकी आज्ञा पालन करनेके लिए चल दिया।

इधर बाबू साहबने उस भिक्षुकसे कहा—तुम आरामसे बैठो। अभी भोजन आता है।

भिक्षुक बाबू साहबको आशीर्वाद देने लगा। कुछ क्षणतक बाबू रामनाथ खड़े कुछ सोचते रहे तत्पश्चात् घरके भीतर गये और ट्रङ्कसे एक श्वेत धोती निकाली। उसे लिये हुए भिक्षुकके पास आये। धोती उसकी ओर फेंककर उन्होंने कहा—लो, अपनी लड़कीसे कहो इसे पहन ले, उसे उतार दे, मैली हो गई है। दो धोती रहनेसे सफाई रहेगी।

भिक्षुकने धोती लेकर कन्याको दे दी। कन्या उसे लेकर पम्प-की ओर चल दी। इधर बाबू साहब पुनः घरके भीतर चले आये। थोड़ी देर इधर उधर घूमघामकर पुनः बाहर पहुंचे। कन्याने स्नान करके धोती बदल ली थी। उसे श्वेत धोती पहने देखकर बाबू साहबने सोचा—अब चन्द्रमा मेघ-मुक्त हुआ। मेघाच्छादित

तथा मेघ-मुक्त दोनों प्रकारके चन्द्रमामे अपने अपने ढंगका खास सौन्दर्य है। उस मैली धोतीमे भी यह सुन्दर प्रतीत होती थी और अब भी सुन्दर दिखाई पडती है। सुन्दर वस्तु प्रत्येक दशामे सुन्दर ही दिखाई देती है—यदि ऐसा न हो तो सौन्दर्य ही क्या।

उसी समय हरद्वारी भोजन ले आया। दोनों पिता-पुत्रीने बैठकर भोजन किया। भोजन कर चुकनेपर दोनों चलनेके लिए उद्यत हुए। बाबू साहबने भिक्षुकसे पूछा—तुम कौन जात हो?—

भिक्षुक—वैसे तो बाबूजी हम ठाकुर हैं, पर अब तो कोरी-चमारों-से भी बदतर हैं। क्या करें समयकी बात है।

बाबू साहबने मनमे सोचा—मैं तो पहले ही समझ गया था कि ऊची जाति है।

बाबू साहबके हृदयमे अनेक प्रश्न उठे, पर पूछनेका साहस न पड़ा। भिखारी चल दिया। चलते समय उनका और कन्याकी आखें पुनः चार हुईं। बाबू साहब खडे उनकी ओर ताकते रहे। आज कन्याने बाबू साहबको कई बार घूम-घूमकर देखा। बाबू साहब भी जबतक वे दोनों दृष्टिसे ओझल नहीं हो गये—बराबर खड़े ताकते रहे। इसके पश्चात् एक दीर्घ निश्वास लेकर धीरे-धीरे घरके भीतर चले।

३

रातके आठ बज चुके। हमारा पूर्व-परिचित भिक्षुक और उनकी कन्या एक वृक्षके तले अपना डेरा जमाये बठे है। कन्या पितासे कह रही है—बाबा, वह बाबू साहब तो बडे दयावान हैं—ऐसा आदमो तो आज तक नहीं देखा।

भिक्षुक—हाँ बेटी है तो बडे दयावान।

कन्या—एक धोती उस दिन दी थी और एक आज दे दी, ऐसा कोई दे सकता है ?

भिक्षुक—ऐसा देना बड़ा कठिन है।

कन्या कुछ क्षणोतक नीरव रही तत्पश्चात् पुनः बोली—बाबा, यह बडे अमीर आदमो है।

भिक्षुक अमीर तो हुई है—मकान कितना अच्छा बना है। ऐसे पुन्यात्मा आदमीको भगवान् रूपया दे तो स्वारथ है। हम गरीबोंका भी भला होता है। बहुतसे तो इतने दुष्ट है कि देना दिलाना तो कुछ नहीं, उलटे गाली देते हैं, दुतकारते है।

कन्या—बड़े अच्छे आदमी है—ऐसा आदमी होना कठिन है।

यह कहकर कन्याने एक दीर्घ निश्वास ली।

भिक्षुक—हरद्वार चलेंगे तो किराया इन्हींसे लेंगे।

कन्या—बाबा, जबतक यहाँ रहो, एक बेर रोज उनके यहाँ चला करो।

भिक्षुक—रोज जाना ठीक नहीं। रोज जानेसे वह गुस्से हो जांयगे।

कन्या—गुस्से नहीं होंगे।

यह बात कन्याने बड़े विश्वासपूर्वक कही। भिक्षुकने कन्याको बड़े गौरसे देखकर कहा—तू क्या जाने कि गुस्से नहीं होंगे।

कन्या कुछ सिटपिटा गई, परन्तु तुरन्त सँभल कर बोली—ऐसे दयावान आदमीको गुस्सा नहीं आता।

भिक्षुक—धुत पगली। जब रोज जांयगे तो कहां तक गुस्सा न आवेगा। किसी आदमीको रोज-रोज तंग करो तो गुस्सा आही जायेगा।

कन्या—गुस्सा तो तब आवेगा जब हम कुछ माँगेंगे।

भिक्षुक—जब मांगना नहीं तो जानेसे प्रयोजन ?

कन्या इसका उत्तर कुछ न दे सकी। थोड़ी देर तक सोचनेके पश्चात् बोली—जब उनकी हमपर इतनी दया है तो कभी-कभी ऐसे उनकी खोज-खबर लेना चाहिये।

भिक्षुक—तू तो पागलोंकी सी बातें करती है। कौन हमारी उनकी मित्रता है, कौन रिश्तेदारी है जो हम उनकी खोज-खबर लेने जाँय हम तो भिखारी हैं, जब जांयगे तब भिक्षाके लिए जांयगे।

कन्याको पिताकी यह बात अच्छी नहीं लगी। उसने सोचा—बाबा बड़े मतलबी हैं, अपना मतलब हो तो जाँय नहीं तो चाहे कोई मरे या जिये, इनसे कोई मतलब नहीं।

थोड़ी देर तक कन्या मौन बैठी रही। इसके उपरान्त बोली—

बाबा, तुम कहीं नौकरी क्यों नहीं कर लेते। भीख माँगनेसे तो नौकरी अच्छी।

भिक्षुकने कहा—नौकरी कर तो लूँ, पर मिले कहाँ ?

कन्या—उन्हीं बाबूसे कहो, वह दिला देंगे।

भिक्षुक—नौकरीमें बड़े झंझट हैं, काम बहुत करना पड़ता है, रात-दिन मालिककी बातें सुननी पडती हैं। इसमें तो खाने भरको माँग लाये, फिर मस्त पडे है।

कन्या—भीख माँगनेमें भी तो सैकडों बातें सुननी पडती हैं। मैं जब उन बाबू जी के सामने जाती हू तो बड़ी सरम लगती है।

भिक्षुक—हमारा तो यह धन्धा ही है, इसमें सरम काहेकी।

कन्या—बाबा, तुम यह धन्धा छोड दो, कहीं नौकरी कर लो। उन बाबू जी से कहो वह नौकरी दिलवा दगे। मेरा मन बोलना है कि वह जरूर दिलवा देंगे।

भिक्षुक—अबकी चलेंगे तो उनसे कहेगे। अच्छा अब तो मैं सोता हूँ—नींद लगी है।

यह कहकर भिक्षुकने वहीं लोट लगाई। कन्या बैठी रही। अब वह बाबू साहबकी बातें सोचने लगी—'बाबू साहब बडे दयावान हैं, बड़े अच्छे हैं। सुन्दर भी बडे हैं। ऐसे आदमी संसारमें बिरले ही होते हैं। मुझसे उनको बडी मुहब्बत है—उनकी आँखे कहती हैं कि वह मुझसे मुहब्बत करते हैं। मेरे ही कारण तो बाबाको इतनी खातिर करते हैं। मुझे मैली धोती पहने देखा झटसे सफेद ले आये। बाबाको आज तक कोई कपड़ा नहीं दिया। जो बाबा उनके यहाँ नौकरी करले

तो बड़ा अच्छा हो—दिन रात उन्हींके सामने रहूं । उनको देखनेको मन न जाने कैसा हुआ करता है। मेरा बस चले तो एक बेर रोज देखूं ।'

यह सोचते सोचते उसे ध्यान आता—मेरा उनका क्या सम्बन्ध, वह राजा मैं भिखारिणी। मुझसे वह क्यों स्नेह करेंगे। बाजे आदमी दयावान होते ही हैं। उन्होंने मुझे जो कपडा दिया सो जवान स्त्री समझकर दिया। उन्होंने उस दिन कहा था—'जवान लडकीका ऐसी फटी धोती पहने रहना ठीक नहीं।' बस इसी लिए दिया, इसमे मुहब्बतकी कौन बात है।

यह ध्यान आते ही उसके मुख-मण्डलपर उदासी दौड जाती, नेत्रोंमें आँसू भर आते। परन्तु वह पुनः सोचती—जो मुहब्बत नहीं तो वह मेरी ओर इस प्रकार ताकते क्यों है, और कोई आदमी तो इस प्रकार ताकता नही। संसारमे अनेक दयावान है। उन्होंने कभी इस बातकी परवाह नहीं की कि मेरा फटी धोती पहने रहना ठीक

जरूर कोई बात है। जब मेरी आखें उनकी आँखोंसे मिलती हैं तो मेरा मन न जाने कैसा होने लगता है। और किसीसे आँखे मिलनेपर तो ऐसा नहीं होता। मुझे उनके सामने ऊपर सिर उठाते बड़ी सरम लगती है और किसीके सामने इतनी सरम नहीं लगती। बाबा जब जाते है तो पहले बात करते ही भोजन माँगने लगते है। बाबाकी यह आदत बड़ी खराब है। चाहे सारे संसारसे माँगें, पर उनसे न माँगा करें तो अच्छा है। उनसे जब वह माँगते है तो मुझे बड़ी सरम लगती है। मैं तो चाहे मर जाऊँ; पर उनसे कभी कुछ

न मांगूं। वह बिचारे तो अपने आप बिना मांगे ही सब कुछ दे देते हैं—और न भी दें तो क्या जरूरत है। मांगनेको सारा संसार भरा है, एक उनसे न मांगा तो क्या हरज है। बाबा अब नौकरी करले तो अच्छा है। मैं अब उन्हे भीख न मांगने दूंगी। वह बाबू अपने जी में तो मुझे भिखारिन ही समझते होंगे। राम! राम! जी चाहता है कि धरती फट जाय और मैं समा जाऊं। बाबा न कहेंगे तो मैं ही उनसे कहूंगी। मेरी बात वह कभी न टालेंगे और जो मेरी यह बात उन्होंने न माना तो फिर कभी उनके दरवाजे न जाऊंगी—वह भी क्या याद करेंगे।

भिखारिणी इसी प्रकारकी बातें सोचते सोचते जब नींदसे व्याकुल हुई तो अपने पिताके थोड़ी दूरपर सिमटकर लेट गई और थोड़ी देरमें सो गई।

४

प्रातःकाल जब कन्याकी आँख खुली तो उसने देखा कि उसका पिता अभी पड़ा सो ही रहा है। उसने अपने पिताका कन्धा पकड़कर हिलाया। कन्धा पकड़ते ही उसे ज्ञात हुआ कि उसके पिताका शरीर आवश्यकतासे अधिक गर्म है। भिक्षुकने अपने नेत्र किञ्चित खोलकर कहा—जी नहीं अच्छा है बिटिया, पड़ा रहने दे।

कन्याने कहा—बाबा तुम्हे तो बुखार चढ़ा है।

भिक्षुक—हाँ बेटा, बुखार है, रात भर बुखार रहा।

कन्या—तो बाबा, यहाँ कहाँ पड़े रहोगे ?

भिक्षुक—यहाँ न पडेंगे तो जायँगे कहाँ ?

कन्या—किसी धरमसालेमें चलो।

भिक्षुक—बीमारको धरमसालेमें कौन पड़ने देगा।

यह सुनकर कन्या बड़ी चिन्तित हुई। चिन्ता केवल पिताकी अस्वस्थताकी ही नहीं अनेक बातोंकी हुई। यहाँ खुलीहवामें पड़े रहने से बाबा अधिक बीमार न हो जाँय। दवा-दारू कहाँसे मिलेगी और भोजन कौन देगा—इत्यादि चिन्ताओंने कन्याके मस्तिष्कपर अधिकार जमा लिया।

उसको चिन्तित देखकर भिक्षुकने कहा—बेटा, मैं यहीं पड़ा हूं, तुम उन बाबूके पास जाओ। उनसे मेरा हाल कह देना। वह तुम्हें

भोजन करा देंगे। मैं आज कुछ नहीं खाऊंगा। भोजन करके तुम यहीं चली आना। लोटेमें पानी भरकर मेरे पास धरेजा।

कन्या बोली—बाबा तुम्हे अकेला छोड़कर मैं नहीं जाऊंगी।

भिक्षुक—कोई डरकी बात नही है बिटिया, दिन है कुछ रात थोड़ा ही है। वहाँ भोजन करके जल्दी चली आना।

कन्या—मैं आज भाजन नहीं करूंगी।

भिक्षुक—नहीं बेटा, भोजन कर आ। बिना भोजन किये कैसे बनेगा?

कन्या—एक दिन न खाऊँगी तो क्या होगा?

भिक्षुक—एक दिनकी बात नहीं है। अभो मेरा जी न जाने तने दिनों खराब रहे। तू न खायगी तो कमजोर हो जायगी—फिर री सेवा कौन करेगा।

कन्या—खैर, कल देखा जायगा, एक दिन न खानेसे इतनी कमजोरी नहीं आवेगी।

भिक्षुक—एक बात और है। उन बाबू साहबके पास जाकर मेरा हाल कहेगी तो सायद वह मेरी बीमारीका हाल जानकर मेरे लिए कुछ दवा-दारूका प्रबन्ध करदें-कही कोई कोठरी-वोठरी रहने को दे दें। ऐसा हो जाय तो बड़ा अच्छा है।

यह बात लड़कीकी समझमें आगई। उसने सोचा—बात तो ठीक है, मैं कहूंगी तो वह कुछ न कुछ जरूर करेंगे। इस विचारके साथ ही साथ बाबू साहबसे स्वतंत्रता पूर्वक खुलकर बात-चीत करनेका सुअवसर प्राप्त होनेके विचारने कन्याके हृदयमें गुदगुदी उत्पन्न करदी।

२

भिक्षुकने कन्याको मौन देखकर कहा—मैंने कैसी अच्छी बात सोची। बस अब तू वहा जा।

कन्या—तो अभी तो बड़ा सवेरा है, जरा दिन चढ़े तब जाऊंगी।

भिक्षुक—हां हां, जरा और ठहर जा।

कन्या नित्यक्रियासे निवृत्त हुई। इसके पश्चात् उसने पानीका एक लोटा भरके पिताके पास रख दिया। इतने समयमें काफ़ी दिन चढ़ गया था, अतएव भिक्षुकने उससे कहा—अब जाओ, दिन बहुत चढ़ आया।

कन्या चली। उसके हृदयमें इस समय अनेक प्रकारकी भावनाओंका संघर्षण हो रहा था। बाबू साहबसे बात-चीत करनेको उत्सुक इसके साथ ही एक प्रकारकी झिझक तथा संकोच उसके हृदयमें ए विचित्र तूफान मचाये हुए थे। वह सोचती थी—'मैं उनसे क्या कहूंगी? उनके सामने मुझसे बात करते बनेगा? कहीं मेरे मुंहसे कोई ऐसो बात न निकल जाय जो उन्हे बुरी लगे। वह पढ़े-लिखे आदमी है, मै अपढ़ गवार। उनके सामने तो मेरे मुंहसे बात भी न निकलेगी। वह मुझे अकेला पाकर मुझसे क्या कहेगे?' इसी प्रकारकी बाते सोचती हुई वह धीरे-धीरे बाबू रामनाथके मकानको ओर चली जा रही थी। वह अपने विचारोंमें इतनी डूबी हुई थी कि उसे इस बातका ज्ञान नहीं था कि वह कहा जा रही थी। सड़कपर गाड़ी-घोड़ों तथा मनुष्योंका कोलाहल उसके कानोंको किञ्चिन्मात्र भी सुनाई न पड़ता था। वाह्य-ज्ञान न रहते हुए भी वह मंत्रमुग्धकी भांति ठीक रास्ते पर जा रही थी।

वह बाबू साहबके मकानके निकट पहुंची। कुछ दूरी परसे उनका भवन दिखाई पड़ने लगा। मकान निकट देखकर उसका हृदय धड़कने लगा, उसकी चाल धीमी पड़ गई। मकानके द्वारके कुछ निकट पहुंचकर वह ठिठुक गई और सोचने लगी कि जाऊं या न जाऊं। उसका साहस उसका साथ छोड़ने लगा। वह कई मिनिट तक खड़ी सोचती रही। अन्तमें हृदय कड़ा करके आगे बढ़ी और द्वारपर पहुंचकर उसने एक आदमीसे पूछा—बाबूजी हैं ?

उस आदमीने पूछा—कौन बाबू जी ?

कन्या सोचमें पड़ गई, वह नहीं समझ सकी कि इसका उत्तर क्या दे। अन्तमे उसने कहा—छोटे बाबूजी।

मनुष्यने कहा—हां है।

कन्या—जरा बुला दो।

वह मनुष्य—क्या काम है ?

ठीक इसी समय हरद्वारी आ गया। उसने कन्याको देखकर कहा—तुम ठहरो मैं उन्हे बुलाये देता हूं।

बाबू रामनाथ स्नान करके वस्त्र बदल रहे थे, उसी समय हरद्वारीने आकर कहा—बाबू जी वही आई है।

रामनाथने चौंककर पूछा—वह कौन ?

हरद्वारीने किञ्चित मुस्कराकर कहा—वही भिखारीकी लड़की।

हरद्वारीका मुस्कराना बाबू साहबको बुरा लगा। उनकी भौंहें तन गईं। उन्होंने कर्कश स्वरमें कहा—तो इसमें मुस्करानेकी कौन सी बात है ? बदतमीज़ कहींका।

हरद्वारी चुपचाप वहाँसे खिसक गया। बाबू रामनाथ शीघ्रता-पूर्वक बाहर आये। बाहर आकर उन्होंने देखा कि भिखारिणीकी कन्या उदास भावसे चबूतरे पर हाथ रक्खे खडी है। बाबू साहबने इधर-उधर देखा परन्तु भिखारी कहीं न दिखाई पड़ा। अतएव उन्होंने लड़कीसे पहला प्रश्न यह किया—तुम्हारा पिता कहा है ?

लड़की सिर झुकाये हुए चबूतरेके पत्थरपर नख-प्रहार करती हुई बोली—उन्हे बुखार आ गया है।

बाबू साहबके मुखसे एकदमसे निकला—अरे यह कब ?

कन्या—कल रात को।

बाबू साहब—तो वह है कहां ?

कन्या—रास्तेमे पेड़के तले पडे है।

बाबू साहब 'ओ हो!' कहकर चुप हो गये और कुछ सोचने लगे। कुछ क्षणों उपरान्त बोले—तो फिर क्या होना चाहिये ?

कन्या उसी प्रकार मस्तक नत किये हुए बोली—मैं क्या बताऊं ?

बाबू साहब—वहा पड़े रहना तो ठीक न होगा।

कन्या—और क्या।

बाबू साहब पुनः चिन्ता-सागरमें मग्न हो गये। कुछ देर पश्चात् बोले—अच्छा तुम यहां ठहरो, मैं कोई न कोई बन्दोबस्त करता हूं। वहां पड़ा रहना तो ठीक न होगा।

बाबू साहबकी यह बात सुनकर कन्याने एक क्षणके लिए दृष्टि ऊपर उठाई। बाबू साहबने उस दृष्टिका मर्म्म समझा। उस दृष्टिमेंसे बाबू साहबके प्रति प्रेम तथा कृतज्ञताके भाव प्रवाहित हो रहे थे। इससे बाब

साहबको और भी अधिक प्रोत्साहन मिला। वह अब पूर्णतया कन्याके पिताके लिए कोई समुचित प्रबन्ध करनेके लिए कटिबद्ध हो गये।

वह अपने कमरेमें पहुंचे और हरद्वारीको बुलाकर बोले—हरद्वारी, जिस मकानमें तुम रहते हो उसीके बगलमें एक कोठरी खाली पड़ी थी न ?

हरद्वारी—खाली तो है, पर उसमें तमाम कूड़ा-कर्कट भरा है।

बाबू—तो उसे अभी साफ कराओ। किसी मजदूरको लगा दो, समझे ?

हरद्वारी—बहुत अच्छा।

बाबू—मजदूर लगाकर तुम मेरे पास लौट आना। 'बहुत अच्छा' कहकर हरद्वारी चला गया। इधर बाबू साहब पुनः धीरे-धीरे बाहर आये। बाहर आकर लड़कीसे बोले—तुम थोड़ी देर यहीं बैठ जाओ, अभी सब बन्दोबस्त हुआ जाता है। मैं तुम्हारे साथ आदमी कर दूंगा—वह तुम्हारे बापको यहां ले आवेगा।

लड़कीने इसका कोई उत्तर न दिया—केवल एक कृतज्ञतापूर्ण दृष्टि बाबू साहबपर डाली।

बाबू साहब पुनः अपने कमरेमें लौट आये। उनके हृदयमें इस समय एक विचित्र प्रकारकी प्रसन्नता थी। 'लड़की अब कुछ दिनों यहीं रहेगी' यह विचार उनके हृदयको प्रफुल्लित कर रहा था। इस समय किसी एक स्थानपर शान्त होकर बैठना उनके लिए कठिन था। वह अपने कमरेमें बेचैनीसे इधर-उधर टहल रहे थे।

थोड़ी देरमें हरद्वारी आ गया और बोला—सरकार मजदूर लगा दिया है—आध घण्टेमें कोठरी साफ हो जायगी।

बाबू साहब—बहुत अच्छा हुआ। हां, तुम्हे अभी एक काम और करना होगा।

हरद्वारी—कहिये क्या हुक्म है ?

बाबू साहब—तुम उस लड़कीके साथ जाओ। उसका बाप बीमार है, उसे इक्के पर बिठाकर ले आओ और उसी कोठरीमें टिका दो। समझे ?

हरद्वारी—खूब अच्छी तरह समझ गया सरकार!

इतना कहकर हरद्वारी बाहरकी ओर चला, बाबू साहब भी उसके पीछे-पीछे चले। बाहर आकर हरद्वारीने लड़कीसे कहा—तुम्हारा बाप कहां पड़ा है ? चलो मेरे साथ। सरकारका हुक्म है कि उसे यहां ले आओ।

बाबू साहब तो हरद्वारीके पीछे-पीछे ही आये थे, लड़कीके कुछ कहनेके पूर्वही बोल उठे—'तुम इसके साथ चली जाओ, यह तुम्हारे पिताको यहां ले आवेगा।' लड़की चुप-चाप हरद्वारीके साथ हो ली।

इधर बाबू साहब पुनः कमरेकी ओर लौटे। वह अपने मनमें कह रहे थे—"यह हरद्वारी बदमाश सब समझता है—कमबख्त कहता है—'खूब अच्छी तरह समझ गया सरकार।' इसका मतलब और क्या हो सकता है ? उसने प्रकट किया कि वह सब बातें समझता है। ऊँह—समझने दो। वह कर ही क्या सकता है। आखिर मेरा नौकर ही तो है।

कहीं बाबूजी या माताजीसे कुछ जड न दे—यही भय है। नहीं, ऐसा नहीं कर सकता। अगर ऐसा किया तो मैं निकाल भी दूंगा। नहीं, ऐसा नहीं करेगा। उसे प्रसन्न रखना चाहिए, ऐसे अवसरपर उसे नाराज करना ठीक नहीं। मैंने उसे डांटा था, यह बुरा किया—मुस्कराया था तो क्या हर्ज था। खैर, अब उसे यथाशक्ति प्रसन्न ही रक्खूगा। बाबू साहब इसी प्रकारकी बातें सोचते रहे।

इसी समय एक दूसरे नौकरने आकर कहा—बड़े सरकार आपको बुलाते है।

बाबू रामनाथका कलेजा धकूसे हुआ। क्यों बुलाते है—कहीं उन्हें कुछ मालूम तो नहीं हो गया। अजी नहीं, कोई और काम होगा। यह तो वही कहावत हुई कि 'चोरकी दाढ़ीमें तिनका।' यह सोचकर अपनी मूर्खतापर स्वयम ही मुस्कराते हुए बाबू रामनाथ अपने पिताके कमरेमें पहुंचे। उनके पिता उस समय भोजन करने जा रहे थे। उन्होंने रामनाथसे कहा—बेटा, तुमने हरद्वारीको कहीं भेजा है।

रामनाथका कलेजा धड़कने लगा—मुंह सूख गया; परन्तु तुरन्त ही अपनेको सम्हालकर बोले—जी हां एक कामसे भेजा है। क्यों?

पिता—कुछ नहीं, एक काम था, इस लिए पूछा।

रामनाथके जानमें जान आई। सन्तोषको एक दीर्घ निश्वास छोड़कर बोले—दूसरा आदमी तो है, उसे भेज दीजिए।

पिता—वह तो गधा है—होशियार आदमीकी जरूरत है। खैर, जब आ जाय तो मेरे पास भेज देना।

रामनाथ—बहुत अच्छा।

पिता—चलो भोजन कर लो।

रामनाथ—आप भोजन कीजिए, आपको कोर्ट जाना है, मैं तो ज़रा ठहरकर भोजन करूंगा, अभी भूक नहीं है।

पिता—अच्छा तो हरद्वारी आवे तो मेरे पास भेजा देना।

इतना कहकर पिता भोजन करने चले गये।

बाबू रामनाथ पुनः अपने कमरेमें लौट आये और बड़ी बेचैनीके साथ हरद्वारीके वापस आनेकी प्रतीक्षा करने लगे। उनकी इच्छा थी कि पिताजीके भोजन करके लौटनेके पूर्व ही हरद्वारी लौट आवे; क्योंकि भोजन करके उठते ही वे पुनः उसको याद करेंगे।

बाबू साहबकी इच्छा पूर्ण हुई। हरद्वारी पिताजीके भोजन करके बाहर आनेके पूर्व ही लौट आया।

बाबू साहबने पूछा—क्यों ले आये ?

हरद्वारी—जी हा, दोनोंको उसी कोठरीमें टिका दिया है।

बाबू साहब ..शाबाश। अच्छा, पिता जी तुम्हे बुला रहे थे। भोजन करके आते होंगे, तुमसे पूछें तो कुछ और बहाना कर देना, असली बात मत बताना, समझे ?

यद्यपि इस बार भी हरद्वारी मुस्कराया, परन्तु इस बार बाबू साहबको बुरा नहीं लगा। इसके प्रतिकूल उन्हें एक प्रकारका ढाढ़स सा हुआ। उन्होंने समझा हरद्वारी उनका स्वामिभक्त दास है। हरद्वारी जाने लगा। उसे रोककर बाबू साहब बोले—हाँ एक बात और करना—दो एक चटाइयां वहाँ दे आना और दो पानीके घड़े भरवाकर रखा देना।

'बहुत अच्छा'! कहकर हरद्वारी वहाँसे चला गया।

५

दोपहरको जब सन्नाटा हुआ तो बाबू रामनाथ धीरे धीरे टहलते हुए उसी ओर गये जहां वह भिखारी और उसकी कन्या टिकी हुई थी। कोठरीके द्वारपर खड़े होकर उन्होंने झांका। भिखारी लेटा हुआ था, उसके सिरहाने उसकी कन्या बैठी हुई धीरे धीरे उसके पंखा झल रही थी।

भिखारी कह रहा था—अब जरा कुछ बुखार हल्का हुआ है। बेटी तूने कुछ खाया ?

कन्या—हां बाबा, मैं खूब पेट भरके खा चुकी। बाबूने आज अपने घरका बना भोजन भेजा था। आहा बाबा, तुम खाते तो कहते। कितना स्वाद था—दो तीन तरहकी तरकारी थी, दाल थी, चावल, रोटी, दही—न जाने कितनी चीजें थीं।

भिखारी—राजा महाराजा लोग हैं—इन्हे किस बातकी कमी है।

कन्या—बाबा, अब तुम कभी भीख न मांगना, इन्हीं बाबूके यहां नौकरी कर लो। मुझे भीख मांगते बड़ी सरम लगती है। ये बाबू मुझे बड़े अच्छे लगते है। जैसा इन्होंने हमारे साथ किया, ऐसा कोई कर सकता है ?

भिखारी—बड़ा कठिन है बेटा। बाबूजी कहेगे तो मैं नौकरी कर लूंगा।

कन्या—बावू जी न कहेगे तो मैं खुद उनसे कहूंगी।

भिखारी—अरे न बेटी, ऐसा न करना। बड़े आदमी है। बड़े आदमी जराहीमें नाराज हो जाते हैं।

कन्याने बड़ी दृढतापूर्वक कहा—मुझसे बाबू नाराज नहीं होंगे।

बाबू साहब खडे हुए दोनोंकी बाते सुन रहे थे। कन्याकी बात सुन कर वह मुस्कराये।

भिखारी—नहीं ऐसा न करना। वह अपने आपही कहेंगे।

कन्या—जो अपने आप न कहा तो?

भिखारी—तो फिर देखा जायगा, जो अभी तक करते आये हैं वही करेंगे।

कन्या—क्या भीख? अरे राम राम। बाबा, भीख मांगनेका नाम मत लेना। मैं ऐसा काम अब नहीं करूँगी और न तुम्हे करने दूँगी।

भिखारी—नहीं करेंगे तो खायगे क्या?

कन्या—मजूरी करके पेट भरेंगे, पर भीख नहीं मागेंगे।

भिखारी—तू तो पगली है।

कन्या—पगली-वगली नहीं हूं, बाबा, मैं अब भीख नहीं मांगूगी नहीं मांगूगी, चाहे भूखों मर जाऊं।

इसी समय बाबू साहब, जो खड़े-खड़े थक गये थे, खंखारा। उनकी खंखार सुनकर कन्याने पूछा—कौन है?

बाबू साहब बोले—मैं हूं, कहो तुम्हारे पिताका जी अब कैसा है?

यह कहते हुए बाबू साहब कोठरीके अन्दर जा कर खड़े हो गये।

भिखारीने उन्हे देखतेही हाथ जोड़े और कहा—आपने मुझ गरीब-

के प्राण बचा लिये। वहां पड़ा-पड़ा अबतक तो मर जाता। भगवान आपको सुखी रक्खे।

बाबू साहब—तुम्हारा बुख़ार उतरा या नहीं ?

भिखारी—अभी बिलकुल तो उतरा नहीं, हा हल्का पड़ा है। ईश्वर आपका भला करे। आपने इस समय बड़ी सहायता की।

बाबू साहबके जी में आया कि कह दे—अब तुम कहीं मत जाना, हमारे ही यहाँ रहना।' परन्तु यह सोचकर कि देखें यह व्यक्ति अपने आप कुछ कहता है या नहीं, वह चुपचाप होरहे।

बाबू साहब—तुम दो चार रोजमें चंगे हो जाओगे।

भिखारी—देखिए, आपका नमक-पानी बदा होगा तो अच्छा ही हो जाऊँगा।

उसी समय कन्या बोल उठी—बाबूजी, तुम बाबाको अपने यहाँ नौकर रख लो।

बाबू साहब तो बाप-बेटीका कथोपकथन सुनकर पहले ही यह निश्चय कर चुके थे। परन्तु तो भो उन्होंने कहा—तुम्हरे पिता मेरे यहां नौकरी काहेको करेंगे।

कन्या—वाह, करेंगे क्यों नहीं, ऐसे बाबू बाबाको कहाँ मिलेंगे।

यह बात कहते-कहते कन्याने कुछ लजाकर अपनी आंखें नीची कर लीं।

भिखारी बोल उठा—सरकार, अब तो आप मुझे अपनी ही सेवामें रख लें तो अच्छा है। बुढ़ापेमें कहां-कहां ठोकरें खाता फिरूँगा।

सबसे बड़ा बिचार मुझे इस लड़कीका है। यह अब जवान हो रही है, इसे साथ लिये कहां फिरूँगा।

बाबू साहब—अच्छी बात है। तुम रहना चाहो तो बड़ी खुशीसे रह सकते हो। जो तनख़्वाह तुम कहोगे, तुम्हे मिल जाया करेगी।

भिखारी—तनखाह! तनखाह काहेकी। हम दोनों प्रानीको पेटभर भोजन और तन ढांकनेको कपडा मिलता रहे—बस यही मेरी तनखाह है। कोठरी यह मुझे मिल ही गई है—बस काफ़ी है।

बाबू साहब—अच्छो बात है। अब तुम आनन्दसे यहीं रहो, जब अच्छे हो जाना तब काम करना।

भिखारी बाबूसाहबको अनेक आशीर्बाद देने लगा। लड़की सिर झुकाये बेठी थी। उसने एक क्षणके लिए आखें उठाकर बाबू साहब-पर दृष्टि डाली। उस दृष्टिमें इस बार प्रेम तथा कृतज्ञताकी मात्रा और भी अधिक थी। बाबू साहब तडप गये। मनही मन बोले—ओह! यह दृष्टि! यही दृष्टि तो मुझे मन्त्रमुग्धकी भांति चालित कर रही है। देखो आगे यह क्या क्या कराती है।

यह सोचते हुए बाबू साहब धीरे-धीरे कोठरीके बाहर निकल आये।

उपरोक्त घटनाको एक सप्ताह व्यतीत हो गया। भिखारी अब पूर्णतया स्वस्थ हो गया। वह काम भी करने लगा। नया नौकर देख-कर रामनाथके पिताने उनसे पूछा—यह नया आदमी कौन है।

रामनाथने कहा—यह एक ग़रीब ब्राह्मण है। भूखों मरता था इस लिए मैंने इसे नौकर रख लिया।

पिता—आदमी तो काफ़ी थे फिर इसकी कौनसी जरूरत थी।

रामनाथ सिर झुकाकर बोले—ज़रूरत तो कुछ नहीं थी मगर ग़रीब समझकर रख लिया।

रामनाथके पिता बाबू श्यामनाथ बडे सरल स्वभावके मनुष्य थे और अपने एकलौते पुत्रको प्राणोंसे अधिक समझते थे। अतएव वह चुप हो रहे।

क्रमशः भिखारीकी कन्याका प्रवेश बाबू साहबके अन्तःपुरमें हो गया और वह उनकी माता तथा भगिनीकी सेवा करने लगी।

एक दिन जब रामनाथ शामको बायु-सेवन करनेके पश्चात् घर लौटे तो अपने कमरेमें उन्होंने असाधारण स्वच्छता पाई। उनका कमरा सदैव ही अस्तव्यस्त पडा रहता था। कहीं किताबे पड़ी हैं, कहीं समाचारपत्रोंके पृष्ठ फैले पड़े है—मेजपर कागज पत्रोंका ढेर इस प्रकार पड़ा रहता था कि उसपर अन्य चीज धरनेकी जगह ही न रह जाती थी। यद्यपि हरद्वारी यह काम कर सकता था और कुछ अंशोंमें करता भी रहता था, पर बाबू रामनाथ अपने मुँहसे उसे कभी यह न कहते थे कि—'सब चीजे ठीकसे लगा दो।' अतएव वह भी इस ओर अधिक ध्यान नहीं देता था। उसको यह धारण हो गई थी कि—'बाबू साहब इसीमें प्रसन्न रहते है, उनको अधिक सफ़ाई अच्छी नहीं लगती।' वास्तवमें बात यह न थी। बाबू साहब सफ़ाई पसन्द तो थे पर लापरवाह इतने थे कि सफ़ाई रखना उनके वशकी बात नहीं थी पुस्तक पढ़ते-पढ़ते जहां छोड़ दी बस, वह वहीं पड़ी रहेगी। कोई दूसरा स्वयम् अपनी इच्छासे उठाकर भले ही रख दे; परन्तु बाबू साहब

न स्वयम् उठाकर रक्खेंगे और न किसी दूसरेसे उठाकर रखनेके लिए कहेंगे।

अतएव आज कमरेको असाधारण रूपसे परिष्कृत देखकर उन्हें कुछ आश्चर्य हुआ। बहुधा ऐसा होता था कि उनकी भगिनी जब उनके कमरेमे आ जाती थी तो उनकी सब चीजें ढङ्गसे रख देती थी। उनका ध्यान इस समय भी अपनी भगिनीकी ओर गया। वह कपडे उतारकर टहलते हुए घरके भीतर गये ओर अपनी भगिनीसे, जिसकी वयस १३, १४ वर्षके लगभग थी, बोले—चम्पा, मालूम पडता है आज तू मेरे कमरेमें गई थी।

चम्पाने मुस्कराकर पूछा—यह आपने कैसे जाना भइया?

बाबू साहब—कमरेको देखकर।

चम्पा—हां गई तो थी, पर वह काम मेरा नहीं है।

बाबू साहब—चल झूठी, तेरा काम नहीं तो फिर किसका है? और किसीको क्या पड़ी है कि करे।

चम्पा—सची भइया, मैंने कुछ नहीं किया।

बाबू साहब—फिर वही झूठ ...?

चम्पा—मुझसे कसम ले लो जो मैंने आपकी एक चीज भी छुई हो।

बाबू साहब—तो क्या फिर वे अपने आप ठीक हो गईं?

चम्पा—नहीं मेरे साथ जस्सो गई थी, उसीने सब किया, मैं तो खाली खड़ी रही थी।

जस्सो भिखारीकी कन्याका नाम था। असली नाम यसोदा था;

पर सब उसको जस्सो कहते थे। जस्सोका नाम सुनतेही बाबू साहब चुप रह गये; परन्तु फिर कुछ सोचकर बोले—वह क्या जाने कि कौन चीज कहाँ धरी जानी चाहिए।

चम्पा—मैं बताती जो गई थी।

यह उत्तर सुनकर बाबू साहब चुप-चाप अपने कमरेमे लौट आये। लौटकर उन्होंने पुनः एक बार कमरेको ध्यानपूर्वक देखा और यह निष्कर्ष निकाला कि जस्सोने चीजें रखनेमें अपनी बुद्धिसे भी बहुत कुछ काम लिया है—वह केवल चम्पाके आदेशपर ही निर्भर नहीं रही, क्योंकि बहुधा चम्पाने स्वयम् अपने हाथोंसे भी यह कार्य किया है, परन्तु इतने अच्छे ढंगसे वह कभी नहीं कर सकी। यह सोचकर उन्हे प्रसन्नता हुई।

इसी प्रकार कुछ दिन व्यतीत हुए। बाबू रामनाथका कमरा सदैव ही परिष्कृत रहने लगा। इसका कारण यह था कि जस्सोको बाबू साहबकी सेवा करनेमें अपार आनन्द मिलता था। उसे जब अवसर मिलता वह झट बाबू साहबके कमरेमें पहुंच जाती और जो कुछ थोडा बहुत काम होता कर आती थी।

एक दिन अपने नियमानुसार जस्सो बाबू साहबके कमरेकी चीजें यथा स्थान रख रही थी कि सयोगवश उसी समय बाबू साहब कमरेमें आये। उन्होंने देखा कि जस्सो बडी दत्तचित्ततावे साथ काममें जुटी हुई है। वह बडी खबरदारीके साथ प्रत्येक चीज उठाती है और उसे कपडेसे भली भाँति पोंछकर उसके स्थान पर रख देती है। बाबू साहबकी आँखोंको उसका यह कार्य भला लगा। अतएव उन्होंने उसे छेड़ना

उचित न समझा। वह चुपचाप कमरेके द्वारकी आड़में खड़े होकर जस्सोका कार्य देखने लगे। पुस्तकें तथा समाचार पत्र ठीक तरहसे रखनेके पश्चात् जस्सोने ब्रुश उठाया और बाबू साहबके खूटी पर टॅगे हुये कपड़ोंको साफ़ करना आरम्भ किया। वह एक एक कपड़ा बड़ी सावधानीसे उठाती थी, मानों उसे भय था कि केवल उसका हाथ लगने ही से कपड़ा मैला हो जायगा—और उसे ब्रुशसे भलीभाँति साफ़ करके खूटी पर टाँग देती थी। इसी प्रकार उसने सब कपड़े साफ करके टाँग दिये। इस कार्यमें उसे पन्द्रह मिनिट लगे। इसके पश्चात् उसने एक बार पुनः समस्त कमरेका निरीक्षण किया—कदाचित् इस अभिप्रायसे कि कहीं कोई कमी तो नहीं रह गई। जब उसे सन्तोष हो गया कि सब चीजें ठीक लग गईं तब वह मेजके पास आई। मेज पर बाबू साहबका एक फोटो फ्रेममें लगा रक्खा हुआ था। जस्सोने उसे बड़ी सावधानीसे उठाया और अपने आंचलसे उसे खूब पोंछा परन्तु ज्ञात पड़ता है कि फिर भी उसे सन्तोख न हुआ। फ्रेम पर जो शीशा लगा हुआ था उसे मुँहकी भाप द्वारा कई बार साफ किया इस प्रकार उस फ्रोटोको साफ करनेमें उसने दस मिनिट लगाये। जब अन्तिम बार उसने उसे अपने आँचलसे पोंछकर मेजपर रक्खा तब उसने उसपर एक विचित्र दृष्टि डाली। उस दृष्टिमें प्रेम, गर्व, अभिलापा, मुग्धताके भावोंने मिलकर एक अद्‌भुत छटा उत्पन्न कर दी थी। कुछ क्षणों तक वह स्थिर दृष्टिसे फोटोको देखती रही। तत्पश्चात् एक दीर्घ श्वास लेकर धीरे धीरे वहांसे चलने लगी।

ठीक ब्रू इसी समय बासाहबने कमरेमें प्रवेश किया। बाबू साहबको

देखकर जस्सो कुछ चौंक पड़ी। जिस प्रकार चुरा-छिपाकर काम करता हुआ कोई व्यक्ति अकस्मात् किसीके आजानेसे चौंक पड़ता है और घबरा जाता है उसी प्रकार जस्सो भी घबरा गई और चुपचाप सिर झुका कर खडी हो गई। बाबू साहबने भी इस प्रकार, जैसे वह कुछ जानते ही नहीं, कहा—अरे! जस्सो तू यहां मौजूद है।

यह कहकर उन्होंने अपने चारों ओर देखा और प्रसन्न-मुख होकर बोले—अब तो मेरा कमरा बहुत साफ रहा करता है, ऐसी सफाई पहले मैंने कभी नहीं देखी। जबसे तेरा हाथ लगने लगा तबसे तो इसकी काया-पलट हो गई।

जस्सोने इसका कुछ भी उत्तर न दिया, वह मौन खड़ी रही।

बाबू साहब मेजके पास कुर्सीपर बैठ गये और जस्सोकी ओर मुख करके बोले—जान पडता है चम्पाने तुझे इस कामपर तैनात किया है। वह बडी चलती हुई है। उसने इस प्रकार अपनी मेहनत बचाई, कभी-कभी जो कुछ करना पड़ता था उससे भी फुर्सत मिल गई। क्यों है न यही बात?

जस्सोने धीमे स्वरमें कहा—नहीं, यह बात तो नहीं है। वह तो मुझसे कभी नहीं कहतीं, मैं अपनी खुशीसे करती हूं।

बाबू साहब—अपनी खुशीसे करती है? अच्छा, तब तो और भी अच्छी बात है।

उसी समय अन्तःपुरसे आवाज आई—'जस्सो' आवाज़ सुनते ही जस्सो तेजीके साथ वहांसे चली गई।

६

उपरोक्त घटनासे बाबू साहब यह भलीभांति समझ गये कि जस्सो उनसे प्रेम करती है। वह स्वयम् भी जस्सोकी ओर आरम्भहीसे आकृष्ट थे। परन्तु वह अभीतक यह नहीं समझ सके थे कि जस्सोसे वह वास्तव ही प्रेम करते है या नहीं। यह बात अवश्य थी कि जस्सोको सुखी देखनेमें उन्हे सुख मिलता था। उसको देखकर उनके हृदयमें उसके प्रति एक विचित्र भाव उत्पन्न हो जाता था। वह भाव क्या था। यह अभी वह स्वयं नही समझ सके थे। बाबू साहब यह भलीभाति समझते थे कि जस्सो एक भिखारीकी कन्या है और वह एक कुलीन तथा धनाढ्य परिवारके पुत्र है। ऐसी दशामे उनका और जस्सोका प्रम सफल नहीं हो सकता इसीलिए वह यथा-शक्ति उसे भुलानेकी चेष्टा किया करते थे। परन्तु फिर भी न जाने क्यों जस्सोको भूलनेमे वह सफल नहीं हो रहे थे और अब तो जब कि वह प्रत्येक समय उनके घरहीमें उपस्थित रहती थी, उसके भूलनेका प्रश्न कोसों दूर था।

वह यह भी चाहते थे कि जस्सोसे वह अपने हृदयकी बात कहें, क्योंकि यह उन्हे विश्वास हो ही गया था कि जस्सो उनसे प्रेम करती है, और इसलिए उनकी बात ध्यानपूर्वक सुनी जायगी, परन्तु, उनका साहस न पड़ता था। जब कभी जस्सोको अकेला पाकर वह प्रेम-प्रदर्शनकी इच्छा करते तभी उनका साहस टूट जाता था, उनका कलेजा धड़कने लगता और मुंह बन्द हो जाता था। अवसर निकल जानेपर

उन्हे अपनी इस दुर्बलतापर बड़ा क्रोध आता था। वह मन-ही-मन लज्जित होकर कहते थे—'मैं तो स्त्रियोंसे भी गया बीता हूं, ऐसी लज्जा तो स्त्रियोंको शोभा देती है, न कि मुझे।

एक दिन उन्होंने इस बातकी प्रतिज्ञा कर ली कि चाहे जो कुछ हो इस बार अवसर आनेपर वह अपना प्रेम जस्सोपर अवश्य प्रकट करेंगे। एक घरमें रहते हुए ऐसा अवसर प्राप्त होनेमें अधिक बिलम्ब न लगा।

एक दिन जब कि जस्सो उनके कमरेको ठीक-ठाक कर रही थी, बाबू साहब पहुंच गये। जस्सो चुपचाप सिमटकर एक ओर खड़ी हो गई।

बाबू साहब कुर्सीपर बैठ गये और तीन चार मिनिट तक यह सोचते रहे कि क्या कहे। अन्तमें अपनी 'भीष्म-प्रतिज्ञा'का स्मरण करके उन्होंने कहा—जस्सो, तुम जब देखो मेरा ही काम किया करती हो, यह क्या बात है ?

जस्सोने इसका कोई उत्तर न दिया—मौन खड़ी रही। कुछ क्षणों तक प्रतीक्षा करनेके पश्चात् बाबू साहब पुनः बोले—जस्सो, तुमने मेरी बातका उत्तर न दिया।

जस्सोने धीमे स्वरमें कहा—आपकी नौकर हूं इसलिए आपका काम करती हूं।

बाबू साहब—मेरी नौकर तो तुम नहीं हो, यदि नौकर हो तो मेरी माताकी, मेरी बहनकी।

जस्सो मौन रही।

बाबू साहब—क्यों, इसका क्या जवाब है ?

जस्सो—मैं तो आपको ही सब कुछ समझती हूं ।

यह बात कहते हुए जस्सोने एक क्षणके लिए बाबू साहबपर ऐसी दृष्टि डाली कि उस दृष्टिने जस्सोकी बातका तात्पर्य समझानेमें शब्दोंसे कहीं अधिक कार्य किया ।

जस्सोके यह प्रेमपूर्ण वाक्य सुनकर और उसकी भोली सूरत और प्रेमपूर्ण दृष्टि देखकर बाबू साहबकी यह इच्छा हुई कि वह उठकर जस्सोको हृदयसे लगा लें ; परन्तु साहसने पुनः साथ छोड़ना आरम्भ किया । उनके हृदयने यह स्वीकार न किया कि एक अबलाके अकेले-पनसे वह इतना अनुचित लाभ उठावें । वह केवल खड़े हो गये और धीरे-धीरे जस्सोकी ओर बढ़े और उसके सामने जाकर खडे हो गये । कुछ क्षण तक मौन खड़े उसकी ओर देखते रहे तत्पश्चात् बोले—जस्सो, क्या संसारमें मैं ही तुम्हारे लिए सब कुछ हूं ?

जस्सोने लज्जासे गर्दन झुका ली—कोई उत्तर न दिया । बाबू साहबने बहुतही धीरेसे उसका एक हाथ पकड़ कर अपने दोनों हाथोंमें ले लिया—जस्सोने कोई आपत्ति न की । जस्सोका हाथ अपने हाथ-मे लेकर बाबू साहबने कहा—क्यों, मेरी बातका उत्तर न दिया ?

जस्सोने धीमे स्वरमें कहा—क्या उत्तर दूं ?

बाबू साहब—क्या इसका कोई उत्तर तुम्हारे पास नहीं है ?

जस्सोका शरीर कांपने लगा । उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि इस समय उसे अपार आनन्द मिल रहा है—ऐसा सुख, ऐसा आनन्द उसे इसके

पूर्व कभी भी प्राप्त नहीं हुआ था। वह घबरा कर बोली—मुझे जाने दीजिए, ऐसा न हो कि कोई देख ले!

बाबू साहब—मेरी बातका उत्तर दिये बिना तुम नहीं जा सकोगी।

जस्सो—आपने मेरे साथ जो भलाई की है, वह कोई दूसरा कर सकता है? इस लिए मेरे लिए तो आप ही सब कुछ है।

बाबू साहब—अच्छा तो तुम इस लिए मेरी सेवा करती हो कि मैंने तुम्हारे साथ भलाई की है।

यह कहकर बाबू साहबने जस्सोका हाथ छोड़ दिया। जिस ढंगसे बाबू साहबने जस्सोका हाथ छोड़ा उससे जस्सो यह समझ गई कि बाबू साहबको उसका यह उत्तर अच्छा नहीं लगा और वह रुष्ट हो गये। बाबू साहब उसको ओर पीठ करके धीरे-धीरे अपनी कुर्सीकी ओर बढ़े। जस्सोने उनकी ओर आखें उठाकर देखा। उसके नेत्रोंमे आँसू छलछला रहे थे, मुखपर उदासी छा गई थी। उसने शीघ्र ही पुनः सिर झुका लिया।

बाबू साहब जाकर कुर्सीपर बैठ गये। कुछ देर तक गम्भीर मुख बनाये बैठे रहे तत्पश्चात् बोले—जस्सो, मैंने धोखा खाया, मैं कुछ और समझे हुए था।

जस्सोने बहुत ही साहस करके—वह साहस जो सर्वनाश होते देखकर मनुष्यके हृदयमें उत्पन्न हो जाता है—पूछा—'क्या समझे हुए थे? उसके कण्ठस्वरमें भारीपन था, परन्तु बाबू साहबका ध्यान इस बातपर नहीं गया।

बाबू साहब—क्या बताऊं क्या समझे हुए था!

जस्सो कुछ देर तक मौन खड़ी रही तत्पश्चात् बोली—सब समझ-बूझकर भी जो नासमझ बने, उसे कोई क्या समझा सकता है ?

यह कहकर वह तेजीके साथ कमरेके बाहर हो गई।

जस्सोके चले जानेके पश्चात् कुछ क्षणोंतक बाबू रामनाथ चिन्ता-सागरमें मग्न रहे तदुपरान्त अपने ही आप मुस्कराये और बोले—'यह बात है। मैं तो पहलेहोसे जानता था।' यह कहते हुए वह मेजकी कुर्सीपर आ बैठे। कुछ देर तक बैठे कागज़-पत्र उलटते रहे, फिर दो पत्र लिखे। इसके पश्चात् एक अंगरेज़ीका उपन्यास लेकर बैठे, दो-चार पृष्ठ पढ़े, परन्तु जी न लगा। अतएव उपन्यास बन्द करके रख दिया और जिस द्वारसे जस्सो अन्तःपुरमें गई थी उसकी ओर ताकते रहे, फिर एक अँगड़ाई लेकर उठे और टहलते हुए अन्तःपुरकी ओर चले। अन्तःपुरके भीतर द्वारपर जाकर खड़े हुए। उस समय उनकी माता पूजन करके उठी थीं और आँगनमें लगे हुए तुलसीके वृक्षका पूजन कर रही थीं। उन्होंने रामनाथको द्वारपर आकर खड़े होते देख, पूछा—क्या है बेटा ? क्या चाहिए ?

रामनाथ कुछ सिट-पिटाकर बोले—कुछ नहीं भोजन तैयार हुआ या नहीं ?

माता—हो रहा है, आज बड़ी जल्दी भूक लग गई ?

रामनाथ—नहीं, भूक तो कुछ ऐसी विशेष नहीं लगी।

माता—तो फिर अभीसे खानेकी फिकर क्यों पड़ गई ?

रामनाथ इसका कोई उपयुक्त उत्तर न दे सकनेके कारण—'यों ही' कहकर चुप हो गये। उनके मुखमण्डलपर झेंपकी लालिमा दौड़ गई।

उन्होंने मनमें सोचा—'मैंने भी इस समय कितनी हास्यास्पद बातें की है, राम-राम!' यह सोचते हुए वह लौटने ही को थे कि उसी समय उनकी माताने कहा—अरे बेटा। यह जस्सो हिन्दी पढने कहती है, कई बार कह चुकी है। इसके लिए एक वर्णमाला मंगा दो, चम्पा पढ़ा दिया करेगी।

प्रसङ्ग बदलता हुआ देखकर बाबू रामनाथ प्रसन्न-मुख होकर लौट पड़े और बोले—चम्पाके पास तो वर्णमाला होगी?

माता—उसकी तो मुद्दत हुई फट-फटाके किनारे हो गई, अब धरी है?

उसी समय चम्पा भी एक कमरेसे निकल आई और बोली—भइया, वर्णमाला और प्रथम भाग मँगा दो।

रामनाथ मुस्कराकर बोले—तूने अपनी किताबें क्या कीं?

चम्पा—वह तो कभीकी फट-फटाकर अलग हो गईं थीं।

रामनाथ—तू बड़ी किताब-फाड लड़की है, सारी किताबें फाड़ डालती है।

चम्पा—अब कहाँ फाड़ती हूं। मेरी किताबें देखो कैसी अच्छी तरह धरी हैं?

रामनाथ—हां धरी क्यों न होंगी—एक किताब तो साबुत बचती नहीं।

चम्पा कुछ लज्जित होकर बोली—वाह! आपकी किताबें तक तो मैं सँवार-सँवारकर रक्खा करती हूं, फिर भला अपनी न रक्खूंगी?

इस अवसरपर माता बोल उठी—तू इसे क्या ताने देता है, यह तो

फिर भी अभी बच्चा ही है। तू जो इतना बड़ा हो गया—अँगरेजी, फ़ारसी, हिन्दी—न जाने क्या-क्या चाटे बैठा है—तुझे किताबें रखनेका बड़ा सहूर है। एक दिन मैं तेरे कमरेमें चली गई थी। हे भगवान—वहांकी दशा देखकर मेरा तो जी घबराने लगा। जिधर देखो उधर किताबें और काग़ज फैले पड़े हैं—कहीं बैठनेकी जगह तक नहीं। जितनी कुर्सियां धरी थीं सबपर किताब और काग़ज़ बिखरे पड़े थे—कोई बैठे तो कहां बैठे। तेरी तो यह दशा है—इस कलकी छोकरीको ताने देता है।

अबतो चम्पाकी चढ़ बनी, प्रसन्न-मुख होकर बोली—और, बहू, मैं ही जाकर सब ठीक किया करती हूं, मैं न ठीक किया करूं तो वे बरसों वैसी ही पड़ी रहें।

माता—वह निगोड़ा हरद्वारी न जाने क्या किया करता है। उसे इतना भी सहूर नहीं जो कभी अपने मनसे भी कुछ कर दिया करे। जो कुछ कहा जायगा, वह कर देगा-बाकी छुवेगा तक नहीं। ऐसा तो नौकर हो नहीं देखा। मुझे तो निगोड़ेकी सकलसे नफरत है।

चम्पा—वह क्या करे, बहू। भैया तो उससे कुछ कहते नहीं। वह अपने मनसे जो करदे सो करदे—भइया कभी न कहेंगे कि यह काम कर।

माता—दोनों जैसे-के-तैसे—जैसा मालिक वैसा नौकर। दोनों अहदी। मेरी तो ऐसे नौकरसे एक दिन न निभे।

इतना कहकर माता पूजन-गृहमें चली गईं। बात सच्ची थी, इसपर बाबू रामनाथ कह ही क्या सकते थे ?

अतएव इस बातका कुछ उत्तर न देकर चम्पासे बोले—तू बहुत बढ़-बढ़कर बातें मारती है, मुझे दिखा तो तेरी पुस्तकें कहाँ धरी हैं ?

'आओ देखो!' यह कहकर चम्पा चली। उसके पीछे बाबू रामनाथ चले। जा तो चम्पाके कमरेकी ओर रहे थे, परन्तु आँखें चारों ओर घूम-घूमकर किसीको ढूढ़ रही थीं। चम्पाने अपने कमरेमें लेजाकर एक आल्मारीको खोलकर कहा—'देखो।'

रामनाथने देखा आल्मारीमें चालीसके लगभग हिन्दी पुस्तकें चुनी हुई थीं। नीचेके खानेमें काग़ज, क़लम, दावात इत्यादि कायदेसे अपने-अपने स्थानपर रक्खे थे।

चम्पाने कहा—देखा ?

रामनाथने कहा—क्या देखा, चार तो किताबें—इन्हे धरना-उठाना कौन कठिन है ?

चम्पा—तो मैं कब कहती हूं कठिन है, मैंने तो यह कभी नहीं कहा।

रामनाथ—ख़ैर, वह कहा न कहा—बात एक ही है।

चम्पा खिलखिलाकर हँस पड़ी और बोली—वाह! ज़बरदस्ती बात एक ही है।

रामनाथ—अच्छा न सही। और तेरे पास क्या-क्या है सब दिखा।

चम्पा—और मेरे पास कुछ नहीं है।

रामनाथ—है क्यों नहीं ? उस आल्मारीमें क्या है ?

चम्पा कुछ मुस्कराकर बोली—उसमें कुछ नहीं है।

रामनाथ—है क्यों नहीं ? दिखा क्या है।

चम्पा—उसमें कपड़े-वपड़े धरे हैं।

रामनाथ—किसके कपड़े—तेरे ?

चम्पा—हा मेरे ही हैं।

रामनाथ 'अच्छा देखू तो।' कहकर आलमारीकी ओर चले।

चम्पाने कहा—रहने दो भइया, उसे न खोलो।

परन्तु रामनाथने न माना—आल्मारीको खोल ही डाला। उसमें सारा सामान गुड़ियोंके सम्बन्धका था। अनेक प्रकारकी छोटी-बड़ी गुड़ियाँ, उनके कपड़े, कुर्सी, मेज, बर्तन तथा अन्य अनेक प्रकारके खिलौने रक्खे हुए थे। यह सब देखकर रामनाथ मुस्कराये और चम्पा-से बोले—तू इतनी बड़ी हो गई और अबतक गुडिया खेलती है ?

चम्पाका गौर मुख-मण्डल लज्जाके मारे रक्त-वर्ण हो गया। उसने आँखे नीची करके कहा, अब कहाँ खेलती हूं।

रामनाथ—तो ये सब क्यों धरी है ?

चम्पा पैरके अँगूठेसे भूमि खोदती हुई बोली—तो क्या करूँ—फेंक दूँ ?

रामनाथ—सुसराल ले जानेके लिए रख छोड़ी होंगी, सासको भेंटमें देगी—क्यों ?

चम्पाने इसका कोई उत्तर नहीं दिया और चुपचाप दोनों आलमा-रियां बन्द करने लगी। उसी समय हठात् बाबू रामनाथकी दृष्टि कम-रेके द्वारको पार करती हुई बाहर घरके प्राङ्गणकी ओर गई। ठीक उसी समय जस्सो स्नानागारसे स्नान करके बाहर निकली। वह केवल एक

श्वेत धोती पहने हुए थी। सिर खुला था और केश बिखरे हुए थे। गोरे-गोरे मुखमण्डल पर स्नानजनित कान्ति विद्यमान थी। निरीहता-के कारण शरीरको पूर्णतया छिपानेकी चेष्टा नहीं की गई थी, अतएव वक्षस्थलका भी कुछ भाग खुला हुआ था। वह एक दिव्य मूर्ति मालूम होती थी। रामनाथ इस छटाको देखकर मूर्तिवत् खड़े रह गये। हठात् जस्सोके काले तथा दीर्घ नेत्र ऊपर उठे। रामनाथके नेत्रोंसे उनका साक्षात् हो गया। जस्सोने हरिणीकी भांति कुलाच भरी और क्षणमात्रमे न जाने कहा अदृश्य हो गई। ऐसा प्रतीत हुआ मानों बिजली कौंद गई। बाबू रामनाथने कुछ क्षणोंके लिए अपने नेत्र बन्द कर लिये। वह न जाने कबतक इस प्रकार खड़े रहते, परन्तु उसी समय चम्पाने उसके पास आकर कहा—चलो भइया, अब तो खाना तैयार हो गया होगा।

रामनाथ चौंक पडे। उन्होंने दोनों हाथोंसे नेत्र मलते हुए पूछा—बाबूजी खा चुके ?

चम्पा—क्या जानूं—देखो देखती हूं।

यह कहकर चम्पा चली गई। कुछ क्षणों पश्चात् आकर बोली—अभी तो बाबूजी नहा रहे हैं।

रामनाथ—तो पहले उन्हे खा लेने दो। जब वह खा चुके तो मुझे बुला लेना।

यह कहकर वह अपने कमरेकी ओर चल दिये।

बाबू रामनाथने अपने कमरेमें आकर हरद्वारीको बुलाया। हरद्वारी-के आनेपर उन्होंने कागजके एक टुकड़ेपर हिन्दीकी वर्णमाला तथा

प्रथम पुस्तकका नाम लिखकर उसे दिया और कहा—ये दो किताबें दौड़कर ले आओ।

हरद्वारी पुस्तकें लेने चला गया। इधर बाबू साहब अपनी कुर्सीपर बैठे-बैठे ध्यान मग्न हो गये।

उपरोक्त घटना हुए एक सप्ताह व्यतीत हो गया। इस बीचमें बाबू रामनाथ तथा जस्सोका साक्षात् बहुत कम हुआ। इसका कारण यह था कि जस्सोका रामनाथसे एकान्तमे मिलनेका साहस नहीं होता था। अतएव वह ऐसा अवसर आनेही न देती थी कि बाबू साहब उससे एकान्तमें मिल सकें। एकान्तमें मिल सकनेका केवल एक अवसर पड़ता था और वह उस समय जब कि जस्सो बाबू साहबके कमरेमें आती थी। परन्तु अब जस्सो जब बाबू साहबके कमरेमे आती थी तो उनकी भगिनी चम्पाको भी साथ ले आती थी अथवा ऐसे समयपर आती थी जब कि बाबू साहब घूमने-फिरनेके लिए बाहर निकल जाते थे। रामनाथ भी अब उससे एकान्तमें मिलनेके लिए कोई विशेष प्रयत्न नहीं करते थे। वह सुशिक्षित थे, सदाचारके वायुमण्डलमें पले हुए थे, अतएव यह भलीभाति समझते थे कि उनका जस्सोसे एकान्तमें मिलते रहना अच्छा नहीं है। इसके अतिरिक्त उन्हे यह डर था कि कहीं उनके माता-पिता-को यह ज्ञात न हो जावे कि उनका पुत्र जस्सोसे प्रेम करता है। परन्तु इतना सब कुछ समझते-बूझते हुए भी कभी-कभी उनका हृदय बेतरह मचलने लगता था। उस समय रामनाथ अधीर होने लगते थे।

शामका समय था। बाबू साहब अपने बग़ीचेके छोटे लानमें, जिसमें हरी-हरी घास लगी हुई थी, कुर्सीपर बैठे एक अँगरेजी समा-

चारपत्र पढ़ रहे थे उसी समय उनके कानमें ये शब्द पड़े—हलो, रामनाथ!

उन्होंने घूमकर देखा - देखते ही उठ खड़े हुए और मुस्कराते हुए बोले—हलो, ब्रजकिशोर तुम। कब आये?

ब्रजकिशोर रामनाथके घनिष्ट मित्र थे। इनके पिता लखनऊमें डिप्टी-कलेक्टर थे। पहले कई बरसों तक वह इस शहरमें भी डिप्टी-कलेक्टर रहे थे। उसी समय रामनाथकी ब्रजकिशोरसे मित्रता हुई थी। ब्रजकिशोरकी सुसराल भी इसी नगरमे थी।

ब्रजकिशोरने कहा—आज सुबह आया।

रामनाथ—अच्छा बैठो।

यह कहकर उन्होंने आवाज दी, 'नन्दू।'

नन्दू जस्सोके पिताका नाम था। नन्दू आया। रामनाथने उससे कहा—देखो सिगरेट और पान लाओ। नन्दू चला गया। और थोड़ी देरमें सिगरेट-पान लाकर रख गया पान खाकर सिगरेट सुलगाते हुए ब्रजकिशोरने पूछा—यह नौकर तो नया मालूम होता है—हरद्वारी चला गया क्या?

रामनाथ—नहीं, वह भी है। यह अभी हालमे आया है। कहो, आजकल क्या शग़ल रहता है?

ब्रजकिशोर—शग़ल बेकारी है।

रामनाथ—क्यों, एल० एल० बी० पास करनेका इरादा छोड़ दिया क्या?

ब्रजकिशोर—मेरा इरादा तो था, परन्तु पिताजी मना करते है।

रामनाथने पूछा—क्यों, मना क्यों करते हैं ?

ब्रजकिशोर—उनका विचार है कि विकालतमें आजकल कुछ तत्व नहीं है।

रामनाथ—हां, नये वकीलोंको दिक्कतें तो बहुत पड़ती हैं। तो फिर, क्या करनेका इरादा है ?

ब्रजकिशोर—पिताजी डिप्टी-कलेक्टरीके लिए नामजद करानेकी चेष्टा कर रहे हैं।

रामनाथ मुस्कराकर बोले—यह बहुत अच्छा रहेगा, पिता भी डिप्टी-कलेक्टर और पुत्र भी।

ब्रजकिशोर—भई, मुझे तो यह कुछ अधिक पसन्द नहीं।

रामनाथ—क्यों ?

ब्रजकिशोर—नौकरी फिर नौकरी ही है, और मैं चाहता हूं कि कोई ऐसा काम करूँ जिसमें स्वाधीन रहूं।

रामनाथ—यह बात है—तब तो तुम्हे विकालत ही करनी चाहिए।

ब्रजकिशोर—पिताजीके मारे करने पाऊँ जब न। हां, तुम्हारे क्या इरादे है ?

रामनाथ—मैं तो विकालत ही करूँगा—मौरूसी पेशा कैसे छोड़ सकता हूं।

ब्रजकिशोर—बी॰ ए॰ का रिज़ल्ट (नतीजा) तो अभी निकला नहीं—तुम तो पास हो ही जाओगे।

रामनाथ—हां आसा तो पूरी है—आगे भाग्यकी बात है।

ब्रजकिशोर—और कहो कोई ताजे समाचार। एक साल बाद तुमसे मुलाक़ात हुई है, इस बीचमें क्या-क्या हुआ ?

रामनाथ—तुम्हारी बलासे—चाहे जो कुछ हुआ हो। तुम इतने रद्दी आदमी हो कि अपने आप कभी कोई पत्र लिखना तो दूरकी बात है—पत्रोंका उत्तर तक नहीं देते।

ब्रजकिशोर—पत्र लिखनेमें मैं लीचड़ तो अवश्य हूं, पर तुम्हारे पत्रोंका उत्तर तो सदैव देता हूं।

रामनाथ—अजी जाओ भी। छः पत्र लिखे जाते हैं तब कहीं एकका उत्तर मिलता है।

ब्रजकिशोर—खैर, मिल तो जाता है—यही क्या कम है।

रामनाथ—यह गोया मुझपर आपकी ख़ास इनायत है।

ब्रजकिशोर—इनायत नही, मुहब्बत है। क्या बताऊं दोस्त, जबसे यहासे गया—घूमने फिरनेका मजा जाता रहा।

रामनाथ—मैं भी अब कहीं नहीं जाता। अधिकतर घरहीमें रहता हूं। जितने घनिष्ट मित्र थे वे तो सब तितर-बितर हो गये—जाऊं तो किसके पास ?

ब्रजकिशोर—यही हालत अपनी भी है। हाँ, यह तो बताओ, तुम्हारी शादी कब होगी ? कहीं बात-चीत लगी है ?

रामनाथ— ओ यार, शादी-वादी अभीसे क्या करनी है ?

ब्रजकिशोर—ओहो, तो क्या बुढ़ापेमे करोगे ?

रामनाथ—देखा जायगा, जब होनी होगी हो जायगी। दूसरे, भाई—साफ़ बात यह है कि मैं अन्धी शादी करना भी नहीं चाहता।

ब्रजकिशोर—अन्धी शादी कैसी ?

रामनाथ—यही जैसी कि हिन्दुओंमें हुआ करती है, न पतिको यह पता कि पत्नी कैसी है और न पत्नीको यह ख़बर कि पति कैसा है।

ब्रजकिशोर—तो यह कौन कठिन बात है, देख-सुनकर कर सकते हो।

रामनाथ—यह कैसे हो सकता है ? माता-पिताके रहते हुए मैं देखने वाला कौन ?

ब्रजकिशोर—कम-से-कम फोटो तो देख ही सकते हो ?

रामनाथ—फ़ोटोसे कुछ अधिक पता नहीं लगता। बदसूरत आदमी भी फ़ोटोमें ख़ूबसूरत आ सकता है।

ब्रजकिशोर—तब तो तुम्हे ख़ब्त है। तुम तो चाहते हो कि पहले 'लव्' (प्रेम) हो, पीछे ब्याह, क्यों न ?

रामनाथ—इसमें सन्देह ही क्या है। लव्-मेरिज (प्रेम-विवाह) तो सबसे उत्तम है, परन्तु हम हिन्दुस्तानियोंके भाग्यमें वह है कहां ? यहाँ तो बस केवल विवाह कर दिया जाता है, प्रेम चाहे हो या न हो।

ब्रजकिशोर—परन्तु अधिकाश दशाओंमें पति-पत्नीमें प्रेम ता होता ही है।

रामनाथ—उसे आप प्रेम नहीं कह सकते, निभाना सा होता है।

ब्रजकिशोर—तो क्या आप समझते है कि उन देशोंमें, जहां कि 'लव्-मेरिज' का रवाज है, समस्त विवाह आदर्श ही विवाह होते हैं। यदि आप यह समझते है तो आप सख़्त ग़लती करते है। पाश्चात्य देशोंमें कितने अधिक तलाक़ होते हैं, यह भा पता है ?

रामनाथ—नहीं, यह मैं नहीं कहता कि वहां 'लव्-मेरिज' ही होती हैं।

ब्रजकिशोर—कम-से-कम विवाहके समय तो ऐसा ही समझा जाता है।

रामनाथ—समझा जाता है, परन्तु वह यथार्थ प्रेम नहीं होता, केवल आसक्ति-मात्र होती है। आसक्तिको ही प्रेम समझ लिया जाता है। आसक्ति और प्रेममें आकाश-पातालका अन्तर है।

ब्रजकिशोर—तो इसके अर्थ तो यह हुए कि प्रेम-विवाह होना साधारण बात नहीं है।

रामनाथ—बहुत कठिन है। प्रेमिक और प्रेमिकामें आसक्तिका भाव है अथवा प्रेमका—यह जानना बहुत मुश्किल बात है। अनुभव-हीन युवक और युवती इस बातको नही समझ सकते। परिणाम यह होता है कि विवाह होनेके कुछ समय पश्चात्, जब दोनोंके हृदयोंकी आसक्ति ठंढी पड जाती है तो परस्पर लड़ाई-झगड़े होने लगते हैं और तलाक़ तक नौबत पहुंच जाती है।

ब्रजकिशोर—हाँ, यह बात तो यथार्थ ही है। खैर, तुम्हारा क्या इरादा है।

रामनाथ—भई मैं तो परवश हूं, मेरा इरादा ही क्या ?

ब्रजकिशोर—माता-पिता जिसका हाथ पकड़ा देंगे, उसीको स्वीकार कर लोगे।

रामनाथ—करना ही पड़ेगा—मगर……।

ब्रजकिशोर—मगर क्या ?

रामनाथ मुस्कराते हुए बोले—कुछ नहीं।

ब्रजकिशोर—कुछ तो ?

रामनाथ—कुछ नहीं जी, यों ही मुँहसे निकल गया।

ब्रजकिशोर—क्या ? यह चकमें किसी और को बताइये, यहाँ आपकी नस-नसका पता है।

रामनाथ—क्या बतावे यार, कोई बात भी हो।

ब्रजकिशोर—तुम्हारी यही बातें बुरी मालूम होती हैं। हमारे-तुम्हारे बीचमें आज तक कोई बात गोपनीय नहीं रही है। फिर क्या कारण है कि तुम आज हृदयकी बात छिपा रहे हो।

रामनाथ—नहीं भाई, तुमसे छिपाऊँगा तो फिर कहूंगा किससे ?

ब्रजकिशोर—तो बस पढ़ चलो।

रामनाथ—क्या बताऊँ मित्र, कहते शर्म मालूम होती है।

ब्रजकिशोर—ओ हो। इससे तो लड़की हुए होते तो अच्छा था, किसी भलेमानसका घर बसता।

रामनाथ—यह जो नया नौकर है न—नन्दू।

ब्रजकिशोर—हाँ हाँ।

रामनाथ—इसकी एक कन्या है।

ब्रजकिशोर—कुछ मुस्कराकर बोले—हाँ तो फिर ?

रामनाथ—पूरी बात सुनी ही नहीं और लगे मुस्कराने।

ब्रजकिशोर—अच्छा अब न मुस्कराऊंगा, कहो।

रामनाथ—उस कन्यासे मुझे प्रेम हो चला है।

ब्रजकिशोर—प्रेम।

रामनाथ—हाँ, मेरा अनुमान तो ऐसा ही है; परन्तु अभी मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि वह प्रेम है अथवा आसक्ति।

ब्रजकिशोर—जब यह बात है तब तो यह पूछना ही व्यर्थ है कि वह सुन्दर है या नहीं।

रामनाथ—यह न पूछिये, आपको चाहे वह अधिक सुन्दर न जँचे, पर यदि मेरी आँखोंसे देखो तो पता लगे।

ब्रजकिशोर—बेशक, 'दीद लैलाके लिए दीदये मजनूँ है ज़ुरूर'। लैलाको देखनेके लिए मजनूकी आँखें चाहिएँ। उम्र क्या है?

रामनाथ—यही कोई चौदह, पन्द्रह सालकी।

ब्रजकिशोर—कौन जात है?

रामनाथ—ठाकुर! अरे यार कुछ न पूछो, इसपर बड़ा लुत्फ़ हुआ।

ब्रजकिशोर—वह क्या?

रामनाथ—जब मैंने उसे नौकर रक्खा था तो पिताजीसे कहा था कि ब्राह्मण है। बादको उन्हे पता लगा कि ठाकुर है। मुझसे बोले—'तुम तो कहते थे कि ब्राह्मण है—परन्तु वह तो अपने मुंहसे कहता है कि मैं ठाकुर हूं। यह क्या बात है?' इसपर मैंने कह दिया—ठाकुर तो है ही—मैंने ग़लतीसे कह दिया होगा।

ब्रजकिशोर—फिर?

रामनाथ—फिर क्या, चुप हो गये। पिताजी कितने सरल-स्वभाव के हैं, यह तो तुम जानते ही हो।

ब्रजकिशोर—अच्छी तरह। ऐसे सीधे आदमी आजकल बहुत

कम होते हैं। मुझे आश्चर्य है, ये विकालत कैसे करते हैं। विकालत में तो बड़ी चालाकीकी आवश्यकता पड़ती है।

रामनाथ—यही तो कारण है कि पिताजीकी कम चलती है—कमसे मेरा तात्पर्य यह है कि यदि वह चालबाज़ी और विकालतके समस्त दाँव-पेचोंसे काम लें तो इससे कहीं अधिक चले।

व्रजकिशोर—यह तो ठीक है। यह तो एक दिन मेरे पिताजी भी कहते थे। दो चार बार तुम्हारे पिताजी मेरे पिताकी अदालतमें भी गये थे न—तभी उन्होंने कहा था।

रामनाथ—क्या कहा था।

व्रजकिशोर—इनकी सिधाईकी प्रशंसा करते थे। ख़ैर, अब वह बात तो बताओ, उसे तो अधूरा ही छोड दिया।

रामनाथ—उसमें अब बतानेको रह ही क्या गया—सब तो बता दिया।

व्रजकिशोर—वह भी यह जानती है कि तुम उससे प्रेम करते हो ?

रामनाथ—यह तो मैं नहीं कह सकता, परन्तु, वह मुझसे प्रेम करती है—इसमे जरा भी सन्देह नहीं।

व्रजकिशोर—हाँ, यह बात है ?

रामनाथ—यही तो बात है, मित्र। सच पूछो तो उसीका प्रेम मुझे भी उसकी ओर आकर्षित कर रहा है।

व्रजकिशोर—तब तो ठीक है। यह नन्दू तुम्हारे यहाँ आया कैसे ?

रामनाथ—क्या पूछते हो—बड़ी मजेदार बात है।

ब्रजकिशोर—तब तो ज़ुरूर पूछूँगा।

रामनाथने आरम्भसे लेकर अन्त तक सब वृत्तान्त सुना दिया।

सब सुन चुकनेके पश्चात् ब्रजकिशोरने कहा—यह तो बड़ी मजेदार घटना है, उपन्यासका सा आनन्द आता है।

रामनाथ—वाक़ई, घटना तो बिल्कुल औपन्यासिक है।

ब्रजकिशोर—इससे तो यह प्रकट होता है कि पहले प्रेमका अंकुर उसीके हृदयमें उदय हुआ।

रामनाथ—मेरा भी यही ख़याल है।

ब्रजकिशोर—तब तो उस्ताद, इस प्रेम-पाशसे तुम्हारा निकलना कठिन है।

रामनाथ—क्या बताऊं, बड़े असमञ्जसमे हूं। उससे विवाह होना तो एक प्रकारसे असम्भव सा है, अतएव इस प्रेमका परिणाम क्या होगा, यह समझमें नहीं आता।

ब्रजकिशोर—तुमने भी कोई उपाय सोचा ?

रामनाथ—मैं तो अभी यही नहीं समझा हूं कि मैं उससे प्रेम करता भी हूं या केवल उसके रूप और यौवन पर मुग्ध हूं। जतबक मैं इसका निर्णय न कर लूँगा तबतक मैं इस सम्बन्धमें कुछ न सोचूंगा।

ब्रजकिशोर—अच्छा, अभी आप यही नहीं जान सके ? धन्य है आपकी बुद्धिको !

रामनाथ—मैं यह समझता हूं कि उससे प्रेम ही करता हूं, अन्य

कोई बात नहीं है; परन्तु जब तक पूरे तौर पर निश्चय न हो जाय तब तक……।

ब्रजकिशोर—यह निश्चय कब तक हो जायगा ?

रामनाथ—यह भी मैं नहीं कह सकता। मैं चेष्टा तो इस बातकी कर रहा हूं कि मेरा ध्यान उसकी ओरसे हट जाय, परन्तु…… !

ब्रजकिशोर—सफलता नहीं मिल रही है। क्यों ?

रामनाथ—बात तो यार ऐसी ही है।

ब्रजकिशोर—इसमें आपको सफलता मिलेगी भी नहीं—यह लिख लीजिए।

रामनाथ—तब तो पूरी मुसीबत है।

ब्रजकिशोर—अच्छे फँसे चिड्डा गुलखैरू। प्रेम भी करने बैठे तो भिख-मङ्गिनसे।

रामनाथ—लगे न वही गधेपनकी बातें करने। वह भिख-मंगिन नहीं है। न हृदयकी भिख-मंगिन है, न सूरत-शक्लकी। वह तो चीज़ ही कुछ और है। भगवान् जाने वह भिखारीके यहाँ क्यों उत्पन्न हुई।

ब्रजकिशोर—यह नन्दू क्या जन्महीका भिखारी है, मेरा तात्पर्य यह कि जब यह कन्या उत्पन्न हुई थी तब वह किस दशामें था।

रामनाथ—यह तो मैंने उससे पूछा नहीं है।

ब्रजकिशोर—पूरे चोंच ही रहे। उसे नौकर रक्खा, उसकी कन्याके 'आशिकेजार' बने बैठे हो; परन्तु यह न हुआ कि उसका पिछला इतिहास तो पूछ लेते। लड़कीकी माता भी ठाकुर थी या नहीं ? ऐसा न हो कि किसी नीच जातिके गर्भसे हो, भिखारियोंमें

ऐसा बहुत होता है। यदि लड़की दोग़ली हुई तब तो बड़ी बुरी बात है।

इतना सुनते ही रामनाथका चेहरा फक़ हो गया। कुछ देर मौन बैठे रहे, तत्पश्चात् बोले—यह तो यार तुमने बड़ी दूरकी बात कही, सच जानना इसका कभी मुझे ध्यान भी नहीं आया।

ब्रजकिशोर—वह जो कहावत है कि Love is blind (प्रेम अन्धा होता है) वह बिल्कुल ठीक है। तुम्हे तो बस लडकीसे काम है, किसी भी जातिकी हो।

रामनाथ—ऐसी बात नहीं है। मैं अभी इतना पतित नहीं हुआ हूं। यदि लड़की वर्ण-संकर हुई तब तो, चाहे उसके प्रेममें प्राण ही क्यों न चले जाँय, मैं उससे कभी बात न करूंगा।

ब्रजकिशोर—ये बातें आपको उससे, उसे नौकर रखनेके पहिले ही पूछ लेनी चाहिये थीं।

रामनाथ—क्या बताऊँ हुई तो बड़ी भारी ग़लती।

ब्रजकिशोर—तो अब पूछ लो, अभी क्या हुआ है।

रामनाथ—ज़ुरूर पूछूँगा।

ब्रजकिशोर—पूछोगे कब ? इसी समय बुलाकर पूछो।

रामनाथ—तुम्हारे सामने ?

ब्रजकिशोर—क्यों, क्या हर्ज है ?

रामनाथ—वह शायद न बतावे।

ब्रजकिशोर—उसकी ऐसी-तैसी, तुम बुलाओ, मैं उससे पूछूँगा।

रामनाथ—तुमसे तो कभी न बतावेगा।

ब्रजकिशोर——अजी आप बुलाइये तो, एक ही प्रश्नमें सारा कच्चा चिट्ठा न कह दे तो जो सजा चाहना दे लेना। तुम तो जैसे भोंदू आप हो, वैसा ही सबको समझते हो।

रामनाथ——अच्छा बुलाता हूं।

यह कहकर रामनाथने नन्दूको पुकारा।

७

बाबू रामनाथके पुकारते ही नन्दू तुरन्त हाजिर हुआ और बोला—क्या हुक्म है ?

बाबू रामनाथ यह सोच ही रहे थे कि इससे क्या कहा जाय—उसी समय ब्रजकिशोर बोल उठे—क्यों भई, क्या तुम कभी लखनऊ-मे भी रहे थे ?

नन्दूने ब्रजकिशोरको सिरसे पैर तक देखकर कहा—जी नहीं, लखनऊ गया तो दो एक बार अवश्य हूं, पर वहाँ रहा कभी नहीं। क्यों ?

ब्रजकिशोर—कुछ नहीं, मुझे ऐसा भ्रम हुआ कि मैंने तुम्हे कहीं देखा है। जहाँ तक याद पडता है लखनऊमें ही देखा था।

नन्दू—मैंने कहा न, मैं दो एक दफ़े लखनऊ गया था, उसी समय कही देखा होगा।

ब्रजकिशोर—वैसे तुम अधिकतर कहाँ रहे ?

नन्दू—मैं असली रहनेवाला तो इलाहाबाद ज़िलेका हूं।

ब्रजकिशोर—ओ ठीक है, तुम वहाँ क्या करते थे।

नन्दूके मुखपर एक विषादयुक्त मुस्कराहट दौड़ गई। उसने सिर झुकाकर भूमिपर अपना एक पैर रगडते हुए कहा—क्या बताऊँ क्या करता था। वह समय ही बीत गया—उस समयको याद करने से दुःख होता है।

रामनाथ अभीतक मौन बैठे हुए थे—नन्दूके ये वाक्य सुनकर बोल उठे—नन्दू, तुमने हमें अपने पिछले जीवनका कुछ वृत्तान्त नहीं सुनाया—यह क्या बात है ?

नन्दूने दीर्घ श्वास लेकर कहा—क्या कीजिएगा सुनके, ऐसी दुखदायी बातोंका न सुननाही अच्छा है ।

ब्रजकिशोर—क्या इसी लिए तुमने नहीं बताया ?

नन्दू—हा मैंने तो इसी लिए नहीं बताया कि उससे मुझे भी दुःख होता है और सुननेवालेको भी—और बता भी देता, पर बाबूजीने कभी कोई चर्चा ही न चलाया ।

ब्रजकिशोरने रामनाथकी ओर एक उपालम्भपूर्ण दृष्टि डाली—तत्पश्चात् बोले—खैर अब तुम सुनाओ, हम दोनों सुननेको तैयार हैं । परन्तु हां, यदि तुम्हे उससे दुःख होता हो तो जाने दो ।

नन्दू—क्या बताऊँ, दुःख होता है कि क्या होता है । मालूम तो ऐसा होता है कि दुःख होता है ; परन्तु उसके कहनेसे, उसकी चर्चा करनेसे मनको कुछ शान्ति भी मिलती है ।

ब्रजकिशोर—तो तुम अवश्य कहो।

नन्दू वहीं सामने घासपर बैठ गया । थोडी देर तक वह चुपचाप सिर झुकाये बैठा रहा तत्पश्चात् बोला—आजसे २५ बरस पहलेकी बात है । मेरे पिता एक अच्छे ज़मींदार थे । ईश्वरका दिया सब कुछ था । मैं अपने बापका एकलौता बेटा था इस लिए बड़े लाड़-प्यारमें पला था । देहातमें रहनेके कारण पढ़ा-लिखा कुछ नहीं, गाँवहीकी पाठशालामें हिन्दी लिखना-पढ़ना सीखा था—बस । खूब दूध-घी

खाता था और कसरत करता था—बस यही मेरा काम था। वह समय कितना अच्छा था, न कोई चिन्ता थी, न कोई दुख था। उसी गांवमें एक हमारी ही जातिके ठाकुर रहते थे—ग़रीब थे, खेती-किसानी करके अपनी जीविका चलाते थे। मैं लड़कपनहीसे उनके घर आया जाया करता था। उनकी एक लड़की थी, मैं उसीके साथ खेला करता था। हम दोनोंमें बड़ा स्नेह हो गया। जब तक हम दोनों छोटे रहे तब तक तो हमें कुछ मालूम न हुआ, परन्तु जवानोमें पैर धरते ही हमें यह पता लगा कि हम दोनों एक दूसरेके बिना संसारमे नहीं रह सकते। जब यह भाव उत्पन्न हुआ तब हम दोनोंको यह चिन्ता हुई कि हम दोनोंका विवाह हो जाय। उसी समय मेरे पिताने मेरे विवाहकी बात-चीत करनी शुरू की। जब मुझे यह बात मालूम हुई तो मैंने एक दिन बड़ा साहस करके अपने पितासे कहा—आप मेरे ब्याहकी बात-चीत इधर-उधर क्यों करते है, जब गांवहीम एक अच्छा घर मौजूद है तो इधर-उधर भटकनेकी क्या जरूरत है ?

मेरे पिताने मेरी बात सुनकर पूछा—कौनसा घर ?

मैंने उत्तर दिया—शम्भूसिंहका घर।

पिताने बड़े अभिमानके साथ कहा—शम्भूसिंह। जिसके घरमें भूनी भांग नहीं, जो मेरा खेतिहर है, जो मेरे सामने बात करते हुए थर्राता है—उसे मैं अपना समधी बनाऊँ। यह तो सात जनम नहीं हो सकता।

मैंने कहा—आपको तो उनकी लड़कीसे मतलब है, उनकी ग़रीबी-अमीरीसे क्या मतलब ? इतना सुनते ही पिताजी आग हो गये,

बोले—कलका लौण्डा मुझे उपदेश देता है। चल, दूर हो मेरे सामनेसे। मैं उसकी लड़कीसे ब्याह करके अपनी नाक कटवाऊँगा, मखमलमें गाढ़ेका पैवन्द लगाऊँगा तो लोग क्या कहेंगे। क्या मुझे लड़कियाँ नहीं जुड़तीं जो ऐसा करूँ। न जाने कितने जमींदार मुँह बाये फिरते हैं—जिनके दरवाजे हाथी झूमते है वे तक यह चाहते हैं कि हमारी लड़कीसे सुजानसिंहके लड़के का सम्बन्ध हो जाय तो अच्छा है—उनको छोड़कर मैं इस कङ्गालके यहा नाता जोड़ूगा, जो बरातको अच्छी तरह पानी भी नही पहुंचा सकता।

मैं अपने पितासे बहुत डरता था, परन्तु उस समय मेरे हृदयमें न जाने कहाँका बल आ गया कि मैंने फिर कहा—मैं तो अपने जीसे यही चाहता हूं कि मेरा ब्याह उन्हींकी कन्यासे हो।

पिताने कड़ककर कहा—मेरे होते हुए तू होता कौन है, तेरे जीसे मुझे क्या मतलब? जो मैं करूँगा वह होगा।

इतना सुनकर मैंने फिर कुछ न कहा—चुपचाप पिताके सामनेसे चला आया। पिताकी ओरसे निराश होकर मैंने माताकी शरण ली। माताने भी वही बात कही जो पिताजीने कही थी, बोलीं—उनके यहां ब्याह करनेसे बड़ी बदनामी होगी।

मैंने कहा, बदनामी किस बातकी? उनके कुलमें कोई दाग तो है नहीं, खरे ठाकुर हैं, कुलीन हैं—तब फिर बदनामी काहेकी?

माता—लाख खरे हों पर ग़रीब तो हैं।

मैं—ग़रीब हैं तो इससे क्या हुआ, ग़रीब होनेसे कुलमें तो दाग नहीं आता?

माता—दाग आवे चाहे न आवे पर बदनामीकी बात तो है।

इसी प्रकार मुझसे और माताजीसे बड़ी देर तक बहस होती रही, पर वह बराबर यही कहती रहीं कि ऐसा नहीं हो सकता। अन्तमें मैंने और उपाय न देखकर उनसे कहा—मैं अगर ब्याह करूँगा तो शम्भूसिंहकी लड़कीसे, नहीं तो व्याह करूँगा ही नहीं।

यह कहकर मैं माताजीके सामनेसे चला गया। उस समय माता और पिता दोनों यह समझे कि यह कोई साधारणसी बात है। इसलिए उन्होंने मेरा ब्याह दूसरी जगह पक्का कर लिया। जिस दिनसे मैंने यह सुना उसी दिनसे मेरे जीवनका मार्ग एक दमसे बदल गया। मेरा खाना-पीना छूट गया, कसरत छूट गई। कहां पहले मेरे पास चिन्ता फटकती ही नहीं थी और कहा अब मैं रात-दिन चिन्तामे डूबा रहने लगा। मैंने अपने मित्रों द्वारा भो पितापर दबाव डलवानेकी चेष्टा की, पर पिताजी कुछ भी न पसीजे। उन्होंने कह दिया—'या तो नन्दू मेरे कहनेपर चले या फिर मेरे घरसे निकल जाय—मैं ऐसे लड़केकी सूरत नही देखना चाहता।'

जब मैंने यह सुना तो मेरी रही-सही आशा भी जाती रही। जब पिताजी अपनी हठ पर इतने अड़े है कि मेरा घरसे निकल जाना तक सह सकते है तो फिर इससे अधिक और क्या हो सकता है। अब मुझे यह चिन्ता हुई कि मैं क्या करूँ? मैं घर छोड़ सकता था, पर बिना शम्भूसिंहकी कन्या सोनाके मेरे लिए सारे संसारमें अन्धकार था। अन्तको मैंने एक दिन घात पाकर सोनासे कहा—यहां रहते हुए हमारा-तुम्हारा ब्याह कभी नहीं हो सकता। मेरे ब्याहके दिन निकट आ रहे

हैं, इसलिए मैं यहां अधिक नहीं रह सकता। मैं बहुत जल्दी यहांसे चला जाऊंगा। तुम्हे छोडकर मैं किसी दूसरी स्त्रीसे ब्याह करूँ, यह इस जीवनमें कभी न होगा। इस लिए मुझे मजबूर होकर घर छोडना ही पडेगा। अब तुम बताओ कि तुम क्या करोगी।

सोनाने मेरी बात सुनकर कहा—मैं क्या बताऊं, मैं तो तुमसे भी अधिक दूसरेके बसमें हूं।

मैंने कहा—देखो सोना अगर तुम भी, मेरी तरह, किसी दूसरे पुरुषसे ब्याह नहीं कर सकतीं तो मेरे साथ चलो।

यह सुनकर सोना पहले तो बहुत घबराई, पर जब मैंने उससे साफ़-साफ़ कह दिया कि अगर तुम मेरे साथ नहीं चलोगी तो इस जन्ममें तुम मेरा मुंह न देख सकोगी तो वह रोने लगी। रोते रोते बोली—जो तुम कहो मैं वह करनेको तैयार हूं, पर ऐसी बात मुँहसे न निकालो।

मैंने कहा—तो बस, मेरे साथ चलनेको तैयार रहो। जिस दिन मैं कहूं उस दिन मेरे साथ चल देना।

यह कहकर मैं चला आया। मैं अपने भागनेकी तैयारीमे लगा। मेरे पास मेरे निजके पांच सौ रुपये थे—वह मैंने लिये, दो कम्बल, दो दरी और लोटा-डोर। बस इतना सामान लेकर मैं भागनेकी घात ढूंढ़ने लगा। उसी समय इलाहाबादमें माघ-मेला आया। मैंने घरमें यह कहा कि मैं माघ-मेला देखने जाता हूं। यह कहकर मैं घरसे चल दिया और गांवके पास ही एक बाग़में छिप रहा। शामको शौचसे निवृत्त होनेके बहाने सोना भी मेरे पास आ गई और हम दोनों भाग निकले।

मैं यह अच्छी तरह जानता था कि मेरी तलाश अवश्य होगी, वैसे चाहे न होती, क्योंकि मैं घरमे कहकर चला था, पर उसी दिन सोना-के ग़ायब होनेके कारण मेरे माता-पिता समझ जायँगे कि भाग गया। अतएव तलाश जरूर होगी और सबसे पहले प्रयागहीमें होगी। इस लिए मैं प्रयाग नहीं गया—मैंने स्टेशनपर आकर बनारसका टिकट लिया और सीधा बनारस पहुंचा। वहाँ दो रोज रहकर मैंने अपने और सोनाके लिए कुछ कपडे और ओढ़ने-बिछानेका सामान ख़रीदा। इसके बाद मैं बनारस जिलेके एक गावमें अपने एक मित्रके यहा पहुंचा। वह मेरा बड़ा गहरा मित्र था। मैंने उससे सारा कच्चा चिट्ठा कह दिया। उसने मुझे अपने यहा रक्खा। उसीके घरमें मैंने विधिपूर्वक सोनाके साथ अपना विवाह किया। उसीके द्वारा मुझे अपने गाँवकी भी ख़बरें मिलती रहीं। मुझे मालूम हुआ कि मेरे पिताने जब यह सुना कि शम्भूसिहकी लडकी भी ला पता हो गई तो केवल इतना कहा—बस, आजसे मेरे सामने कोई नन्दूका नाम न ले—मेरे लिए वह मर गया।

शम्भूसिहको जब यह मालूम हुआ कि उनकी कन्या मेरे साथ भागी है तो वह भी चुप होकर बैठ रहे। अतएव अब मैं बिल्कुल निश्चिन्त हो गया।

थोडे दिन तो मैं अपने उसी मित्रके यहा रहा, पर वहाँ हमें उतनी स्वाधीनता न थी जितनी कि हम चाहते थे। अतएव मैं अपने मित्रसे बिदा होकर सीधा कलकत्ते पहुँचा। वहाँ कुछ दिन तो बेकार रहा, पास जो रुपये थे वह खर्च करता रहा, परन्तु जब रुपये ख़तम होनेको आये तो यह चिन्ता हुई कि कही नौकरी की जाय। दस-पन्द्रह

दिनों तक दौड़ने-धूपने पर एक जगह नौकरी लग गई। ३५) रु० महीना तनख्वाह मिलने लगी। उससे हम दोनों अपना गुज़ारा करते रहे। सोना तो दरिद्रतामें पली ही थी, इस लिए उसे तो कुछ अधिक कष्ट न होता था, पर, सरकार, मैं अपनी दशा क्या कहूँ—घरपर मैं बिना आध पाव घीके टुकडा न तोड़ता था, दिनभरमें दो तीन सेर दूध पी डालता था। पर, अब वह कहाँ धरा था। रोटी चुपड़नेके लिए भी घी कठिनतासे मयस्सर होता था। दूधके तो कभी दर्शन भी न होते थे; परन्तु यह सब मैं सहता था और तब भी सुखी था—सुखी था केवल सोनाको पाकर। सोनाके साथ रहते हुए मुझे कच्चे चने चाबकर रहनेमें भी सुख था—उसके बिना मुझे दुनियाकी सारी न्यामतें भी सुखी न कर सकती थीं। इसी प्रकार पाँच बरस बीत गये। इसी समयमें जस्सो पैदा हुई। जस्सोके पैदा होनेके ठीक पाँच बरस बाद सोना ज्वरसे बीमार पड़ी और एक सप्ताह बीमार रहकर मुझसे सदैवके लिए बिदा होगई। सरकार, उस समय मैं क्या बताऊँ कि मेरी क्या दशा थी। यदि जस्सो न होती तो इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं कि सोना और मैं एक ही चिता पर जलाये जाते, पर मेरे जीवनकी डोर जस्सोके हाथमें थी, इच्छा रहते हुए भी मैं न मर सका।

इतना कहकर नन्दू चुप हो गया। उसकी आँखोंसे इस समय अश्रु-धारा बह रही थी। बज्रकिशोर तथा रामनाथ भी बड़े प्रभावित हुए, दोनों चुपचाप नन्दूका मुँह ताक रहे थे।

थोड़ी देरमें आँसू पोंछकर नन्दूने पुनः कहना आरम्भ किया—मैं इतना व्याकुल था कि मैं उस समय उसकी क्रिया भी न कर सका—

मुझे अपने तन-बदनका भी होश न था, क्रिया कौन करता। पाँच छः रोज तक मेरी बुरी दशा रही—मैंने भोजन नहीं किया, केवल थोड़ा सा दूध पीकर पाँच दिन काटे—वह भी पड़ोसी लोग ज़बर-दस्ती पिला देते थे। जस्सोको भी पाँच रोज तक पड़ोसियोंने ही खिलाया-पिलाया। मैं तो केवल पड़ा रोया करता था! पाँच दिन बाद मुझे अपनी दशाका पूरा ज्ञान हुआ। उस समय मैंने यह तय किया कि अब कलकत्ता छोड़ देना चाहिये। बिना सोनाके कलकत्ता मुझे उजाड़ बन-सा दिखाई पड़ने लगा। मैंने आठ रोज बाद कलकत्ता छोड़ दिया। कलकत्तेसे चलकर जस्सोको लिये हुए मैं सीधा अपने मित्रके यहाँ आया। मित्रके यहा आकर मैंने पहले सोनाकी क्रिया की। जिस घरमें उससे विवाह किया था, उसीमें उसकी क्रिया की। भाग्य सब कुछ कराता है। क्रियासे छुट्टी पानेके पश्चात् मैंने सोचा अब क्या करना चाहिए। मेरे मित्रने कहा—तुम अब घर चले जाओ; कहो तो मैं भी तुम्हारे साथ चलूँ। मुझे पूरी आशा है कि तुम्हारे पिता तुम्हे क्षमा कर देंगे। मैंने यह स्वीकार नहीं किया। गाँवमें जानेसे सोनासे सम्बन्ध रखनेवाली सब चीजोंको देखकर मुझे सोनाकी याद आवेगी—नहीं मैं गाँव नहीं जाना चाहता था। इसके अतिरिक्त जिसके लिए घर छोड़ा, घरका सुख छोड़ा, माताको छोड़ा, पिताको छोड़ा, उसको खोकर अब गाँवमें क्या मुँह लेकर जाऊँ। अपने पराये सब कहेंगे—बस चार दिनकी चाँदनी हो गई, आखिर फिर घर ही की याद आई।

यही सब बातें सोच समझकर मैं गाँव नहीं गया, मेरी हिम्मत नहीं पड़ी कि मैं गाँव जाऊँ। मेरे मित्र सुदर्शनसिंहने बहुत कुछ कहा-

सुना; पर मैंने एक न मानी। अन्तको वह बेचारा भी चुप हो गया। मैं एक महीने उसके पास रहा। एक महीना बीत जानेपर मैंने एक दिन उससे कहा—भाई अब तो मैं जाऊँगा।

मित्र—कहाँ जाओगे ?

मै—क्या बताऊँ कहाँ जाऊँगा। जिधर भाग्य ले जायगा।

मित्र—तो ऐसे बिना मतलब, बिना कोई ठौर-ठिकाने कहाँ मारे मारे फिरोगे—यहीं बने रहो न।

मैंने कहा—यहाँ तो मैं रहूंगा नहीं, तुमने मेरे साथ जो किया है उतनेहोका बदला मैं इस जन्ममें नही चुका सकूँगा—अब और अधिक बोझ लादनेसे क्या फ़ायदा।

मित्र—बोझ। बोझ किस बातका। ईश्वरकी कृपासे मैं तुम्हे खिला-पिला सकता हूं। जो मैं खाऊँ-पहनूं वह तुम भी खाना पहनना।

मित्रकी यह बात सुनकर मेरी आँखोंमे कृतज्ञताके आँसू भर आये। मैंने कहा—ईश्वरकी दयासे मैं अभी जवान हूँ, हट्टा-कट्टा हूँ; और अपना पेट पाल सकता हूँ—तब क्यों तुम पर बोझ डालूँ।

सुदर्शनसिंहने कहा—फिर वही बोझ, मैं कहता हूं बोझ किस बातका ? अगर ऐसी ही बात है तो मैं तुम्हे यहाँ कुछ भूमि दिलवा दूँ, उसको जुताओ-बुवाओ और आनन्दसे रहो। वैसे तो मैं ज़ोर न देता, पर तुम्हारी लड़की छोटी है, उसे लिये-लिये कहाँ फिरोगे ? हाँ यदि लड़की न होती तो दूसरी बात थी।

मैंने कहा—लड़की न होती तो मैं इस संसारहीमें न रहता—लड़कीके ही कारण मै जी रहा हूं।

मित्र—तो जब इतना किया है तो इतना और करो कि कहीं एक जगह स्थिर होकर रहो, इससे लड़की अच्छी तरह पल जायगी।

मेरे मित्रने बात ठीक कही थी और यदि मैं उसकी बात मान लेता तो मुझे उतने कष्ट न उठाने पड़ते जो बादको मैंने उठाये। पर उस समय तो मेरी दशा ही कुछ और थी। किसी एक स्थानपर घर बनाकर रहना मेरे लिए असम्भव था। मेरी यही इच्छा रहती थी कि बराबर घूमता रहूँ—सवेरे कहीं हूँ तो शामको कहीं। इसी लिए मैंने मित्रकी एक भी न मानी और एक दिन अकस्मात् चलनेकी तैयारी करदी। सुदर्शनसिंहको बहुत अफ़सोस हुआ, उसकी आँखोंमें आँसू भर आये और उसने कहा—जान पड़ता है यह हमारी तुम्हारी अन्तिम भेंट है। अब इस जीवनमें शायद ही मिलना हो।

मैंने पूछा—क्यों, ऐसा क्यों सोचते हो?

मित्र—तुम्हारी जो दशा है उससे यह आशा नहीं कि तुम फिर कभी यहाँ आवोगे, या अपनी खोज-खबर देते रहोगे।

उस समय मैं उसकी बातपर हँस पड़ा था और उसे विश्वास दिलाया था कि ऐसा नहीं होगा; पर हुआ वही जो मित्रने कहा था। मैंने फिर कभी उस मित्रकी सूरत नहीं देखी। सात बरस बाद मुझे उसी गाँवके एक आदमीसे, जो मुझे दैवयोगसे मिल गया था, पता लगा कि मेरा मित्र प्लेगमे मर गया। उसके मरनेकी खबर पाकर मैं बहुत रोया था। ईश्वरने मुझे संसारमें दो पदार्थ दिये थे—एक तो सोना, दूसरा सुदर्शनसिंह! ऐसी स्त्री भी संसारमें बिरलोंहीको मिलती है और ऐसा मित्र भी किसी भाग्यवानको ही प्राप्त होता है।

आज दोनोंमें से एक भी नहीं रहा, संसारमें मेरे समान कङ्गाल और कौन है।

चलते समय सुदर्शनसिंहने कहा—जस्सोको मेरे पास छोड़ जाओ, यहाँ अच्छी तरह रहेगी।

मैंने कहा—यह मैं जानता हूँ कि मेरे साथ रहनेसे उसे सिवाय दु:ख भोगनेके और कुछ नहीं मिल सकता, तुम्हारे यहाँ मेरे पाससे लाख दर्जे सुखमें रहेगी, पर मैं उसे छोड़ूँगा नहीं।

मित्रने पूछा—क्यों ?

मैंने जबाब दिया—यही तो डोर है जिसके सहारे मेरे प्राण बँधे है, इसके अलग होते ही मेरे प्राणोंका भी कोई ठीक नहीं।

यह सुनकर सुदर्शनसिंहने फिर कुछ न कहा। चलते समय सुदर्श-नने मुझे पचास रुपये दिये। मैं लेता नहीं था, पर उसने जबरदस्ती दे ही दिये। उन रुपयोंने मुझे कितना सुख दिया, कैसी मुसीबतसे बचाया—इसीसे तो कहता हूँ कि ऐसा मित्र बिरलोंको ही मिलता है, आज वह भी नहीं है।

इतना कहकर नन्दू पुनः चुप हो गया और आँसू पोछने लगा।

थोड़ी देर पश्चात् उसने पुनः कहना आरम्भ किया—मित्रसे विदा होकर मैं जस्सोको लिये हुए इधर-उधर फिरता रहा। न कोई घर था, न कोई ठिकाना था। जहाँ शाम हो गई वहीं पड़ रहा। कभी धर्म-शालामें, कभी नदी तटपर, कभी सड़कके किनारे, कभी पेड़की छाया में—इसी प्रकार मेरा जीवन कटने लगा। इसमें मुझे कुछ शान्ति-सी रहती थी।

जब तक मित्रके दिये हुए पचास रुपये मेरे पास रहे तबतक तो मैंने उन्हे खर्च किया। एक बार एक पुलीसके आदमीने मुझपर चोरीका दोष लगाकर मुझे पकड़ लिया। मैंने दस रुपये देकर उससे अपना पिण्ड छुड़ाया। यदि मित्रके दिये हुए रुपये पास न होते तो न जाने मेरी क्या दशा होता। जब मित्रके दिये हुए रुपये समाप्त हो गये तब मैंने भीख माँगनी आरम्भ की। मैं चाहता तो नौकरी कर लेता, पर एक स्थानमें रहना मेरे लिए जेलखानेके बराबर था, इस लिए मैंने नौकरी नहींकी और भिक्षा-वृत्ति करने लगा।

इतना कहकर नन्दू चुप होगया। ब्रजकिशोर तथा रामनाथ कुछ क्षणों तक मौन बैठे रहे। इसके पश्चात् ब्रजकिशोरने पूछा—तुम्हारे पिता अभी जीवित हैं?

नन्दूने कहा—दो बरस हुए तब मुझे खबर मिली थी वह अभी ज़िन्दा हैं—उसके पश्चात् फिर मुझे उनकी कोई खबर नही मिली, भगवान जाने ज़िन्दा है या नहीं।

रामनाथ—तुम अपने पिताके पास नहीं गये, यह तुमने अच्छा नहीं किया।

नन्दू—सरकार मेरी हिम्मत नहीं पड़ी। यह मैं जानता हूँ कि यदि मैं उनके पास चला जाता तो वह मेरा अपराध क्षमा करके मुझे फिर उसी तरह समझाने लगते; पर फिर भी मेरी जानेकी इच्छा नहीं हुई। पिताको मैं मना भी लेता पर सोनाके पिताको क्या मुंह दिखाता। क्या वह यह बात भूल जाते कि मैं उनकी कन्याको ले गया और उसे गवाकर घर लौटा। वह मुझे कभी क्षमा न करते। स्वयम् इस बातकी

ग्लानि थी कि मैं सोना को खोकर उसके माता-पिताको क्या मुंह दिखाऊँगा। इन्हीं सब बातोंके कारण मेरा साहस नहीं हुआ कि मैं गाँव जाऊँ।

ब्रजकिशोर—सोनाके पिता अभी जीवित हैं ?

नन्दू—हां, दो बरस पहले मुझे खबर मिली थी कि वह जिन्दा है।

रामनाथ—यदि अब भी तुम्हारी इच्छा अपने गाँव जानेकी हो तो हम तुम्हें भिजवा दें।

नन्दू—अजी सरकार, जब मेरा कहीं बैठनेका ठिकाना नहीं था तब तो मैं गया ही नहीं ओर अब तो आपकी बदौलत बड़े आनन्दमें हूं—अब भला मैं क्या जा सकता हूं। हां एक बेर माता-पिताके दर्शन करनेकी इच्छा अवश्य है। देखिये, यदि भाग्यमें बदा है तो मिल ही जांयगे, नहीं तो हर इच्छा।

रामनाथ—अच्छा हो यदि एक बार तुम अपने घर हो आओ।

नन्दू—अभी तो जाऊँगा नहीं, पहले वहांका हाल-चाल मँगा लूं—तब सोचूंगा कि जाऊँगा या नहीं।

ब्रजकिशोर—हाल-चाल कैसे मँगाओगे ?

नन्दू—वहांका कोई आदमी मिल गया तो उसीसे पूछूंगा।

ब्रजकिशोर—क्या ऐसा कोई आदमी तुम्हारे पास आता जाता है ?

नन्दू—मेरे पास तो आता जाता नहीं, पर एक दूसरी जगह आता जाता है—वहांसे पता मिल जायगा।

रामनाथ—क्या यहीं किसीके यहां ?

नन्दू—नहीं सरकार, लखनऊमे, किसी दिन एक गाड़ीसे चला जाऊंगा और सब पता ले आऊंगा।

रामनाथ—तो कल ही चले जाओ न।

नन्दू—ऐसी कौन जल्दी है—चला जाऊंगा किसी दिन। अभी तो मेरी गाव जानेकी इच्छा भी नहीं है।

रामनाथ—खैर, जब तुम्हारा जी चाहे जाना, परन्तु जाना अवश्य चाहिए।

नन्दू—हां जाऊंगा—बिना जाये काम नहीं चलेगा। जस्सोका ब्याह करना है—बिना गाव जाये, ब्याह कैसे होगा ? जानाही पड़ेगा।

नन्दूकी यह बात सुनकर रामनाथका कलेजा धकसे हुआ। कुछ क्षणोंके लिए उनका मुख पीला पड गया। ब्रजकिशोरने इस बातको भली-भांति ताड़ लिया। यद्यपि रामनाथने बड़ी चतुरतासे अपने इस भावको छिपानेकी चेष्टा की—वह तुरन्त सॅभलकर बोले—हां बिना अपने गाव गये विवाह कैसे होगा। आखिर विवाह अपने भाई-बन्धुमे करोगे—और विवाहमें नातेरिश्तेदारोंकी भी आवश्यकता पड़ेगी।

नन्दू—यही तो बात है। लड़कीका मामला ठहरा—बिना चार नाते-रिश्तेदारोंके काम नहीं चलता। लडकीका मामला न होता तब तो मैं कभी न जाता। यदि मेरे यह लड़की न होती अथवा लड़का होता तब तो मैं गाँवका कभी नाम भी न लेता, क्योंकि, सरकार, मेरी आत्मा उस ओरको रुख नहीं करती। मैं नहीं चाहता कि मुझे वहाँ जाना

पड़े, पर क्या करूँ, मजबूरी सब कुछ कराती है—इस लड़कीके लिए यह भी करना पड़ेगा।

यह कहकर नन्दू उठा और बोला—और कुछ हुक्म है सरकार ?

रामनाथ—नहीं, जाओ बैठो।

नन्दू चला गया। उसके जानेके पश्चात् ब्रजकिशोर बोले—लो उस्ताद माल तो खरा है, पर तुम्हारे नसीबमें नहीं है। तुम खत्री वह ठाकुर, ऐसेमें विवाहकी बात सोचना तो निरा पागलपन है।

रामनाथ मुस्कराकर बोले—खत्री भी क्षत्री होते है और ठाकुर भी क्षत्री—क्यों न ?

ब्रजकिशोर—हाँ होते तो है, पर फिर भी असम्भव है।

रामनाथ—क्यों ?

ब्रजकिशोर—ओफ़ ओह, तुम तो विवाह करनेके लिए कमर बांधे बैठे हो।

रामनाथ झेंप गये और किञ्चित् मुस्कराते हुए बोले—यह आपने कैसे जाना ?

ब्रजकिशोर—बहस तो आप इसी तरह कर रहे है।

रामनाथ—बहस तो केवल बहसकी दृष्टिसे की जा रही है। मेरी समझमें नहीं आता कि खत्री और क्षत्रीमें विवाह सम्बन्ध न हो सकनेका क्या कारण है ?

ब्रजकिशोर—यह आप किसी बड़े-बूढ़े या अपने पुरोहितसे पूछिये। मैं तो केवल चलनकी बात कहता हूँ। यदि हो सके तो अत्युत्तम है—हमारे एक दोस्तकी मनोकामना पूरी होती है, इससे अधिक और

हमें क्या चाहिए। ईश्वरकी दयासे आपकी प्रेमिका एक मौरूसी प्रेमिका है—प्रेम ही उसका जन्मदाता है, उसके रक्तमें प्रेमके कीटाणु पहलेसे ही विद्यमान हैं। अतएव यह प्रेम-पुत्री, जो आपकी प्रेम-पात्री है, वैसी ही प्रेम-परायण सिद्ध होगी जैसी कि उसकी माता थी—ऐसी पूर्ण आशाहै। परन्तु आप भी वैसे ही प्रेमिक सिद्ध होंगे जैसा कि उसका पिता है, इस बातमें मुझे अभी सन्देह है।

रामनाथ—तुम बड़े आदमी हो—व्यर्थकी बातें करते हो। इन बातोंका क्या जिक्र ? जो कोई सुनले तो अपने जीमें क्या कहे ?

ब्रजकिशोर—सुन कैसे ले, दिल्लगी है ? हम जिस भाषामें वार्त्तालाप कर रहे है वह भाषा आपके यहा समझता ही कौन है ?

रामनाथ—जी हाँ, आप पश्तो बोल रहे है न।

ब्रजकिशोर—जो नहीं समझता उसके लिए पश्तो ही है। ख़ैर ! अब यह बताइये कि क्या इरादे है।

रामनाथ—काहेके इरादे ?

ब्रजकिशोर—यही अपनी प्रेमिकाके सम्बन्धमे।

रामनाथ—अजब गँवार आदमी हो। एक बात क्या बताई पीछे बला लगा ली।

ब्रजकिशोर—वाक़ई बला तो बड़ी बेढब पीछे लगाई है—ईश्वर कुशल रक्खे। मेरा तो कलेजा अभीसे धड़क रहा है और जबसे आपके भावी श्वसुरका आदर्श जीवन-वृत्तान्त सुना है तबसे तो और भी चिन्ता हो गई। आपकी प्रेमिका जो है—उसके लिए तो कोई बात

नहीं, उसका तो यह मौरूसी गुण है, मगर तुम बहुत बुरे फँसे—तुम्हारे यहाँ तो सात पुश्तसे कोई प्रेमोपासक उत्पन्न नहीं हुआ।' ... ।

रामनाथ—यार अब झगड़ा हो जायगा—तुम अनाप-शनाप बकते चले जा रहे हो और मुझे क्रोध आरहा है। किसी भले आदमीके सम्बन्धमें ऐसी औंधी-सीधी बातें मुँहसे निकालना भलमनसाहतके विरुद्ध है।

ब्रजकिशोर—हाँ, इस समय तो क्रोध आता ही होगा, परन्तु इतना याद रखना कि काम ईंजानिब ही आवेंगे।

रामनाथ हँस पड़े, बोले—बड़े मसखरे हो।

ब्रजकिशोर—मसखरे आपही होंगे—बन्दः तो एक सीधा-साधा और निहायत संजीदा आदमी है।

रामनाथ—इसमे क्या सन्देह है—आप बड़े ही सीधे आदमी हैं।

ब्रजकिशोर—इतना सीधा हूं कि जो आप कहे वही करनेके तैयार हूँ, हर तरहसे आपकी सहायता करनेको उद्यत हूं। अच्छा तो अब आज्ञा दीजिए—फिर मिलूँगा।

रामनाथ—रहोगे या चले जाओगे ?

ब्रजकिशोर—यदि रहा तो दो एक रोजके लिए रह जाऊँगा अन्यथा कल सवेरेकी गाड़ीसे चला जाऊँगा।

रामनाथ—इतनी जल्दी—कुछ दिन तो और रहते।

ब्रजकिशोर—देखिये जैसा मौक़ा हुआ।

यह कहकर ब्रजकिशोर उठे खड़े हुए। रामनाथसे बिदा होकर दो-चार क़दम चले, परन्तु फिर अकस्मात् लौट पड़े और बड़ी गम्भीरता-

पूर्वक रामनाथसे बोले—सुनते हो भाई, यदि घरसे भागने-वागनेकी आवश्यकता पड़े तो सीधे मेरे घर चले आना—वहाँ तुम्हे किसी बातका कष्ट न होगा।

इतना सुनकर रामनाथ कुछ अप्रसन्न होगये और रुखाईके साथ बोले—यार यह अति है, ऐसे मजाकसे मुझे नफ़रत है। तुम प्रतिदिन भद्देपनपर उतरते जाते हो।

ब्रजकिशोर उसी प्रकार गम्भीरतापूर्वक बोले—ख़ैर, मैंने बता दिया है आगे तुम जानो तुम्हारा काम।

यह कहकर ब्रजकिशोर मुस्कराते हुए चल दिये।

८

उपरोक्त घटना हुए दो मासके लगभग होगये। बाबू रामनाथने इन दिनोंमें इस बातकी बहुत चेष्टाकी कि वह जस्सोकी ओरसे उदासीन हो जायें—उसे भूल जाँय, परन्तु वह इस चेष्टामें कृतकार्य नहीं हुए। अन्तको उन्होंने सोचा कि नन्दूको अपने यहां रखकर उन्होंने बड़ी भूल की। यदि वह उनके यहाँ न रहता तो वह जस्सोको भूल जाते। परन्तु ऐसी दशामें जब कि वह हर समय उनके घरमें ही मौजूद है, उनका उसे भूलना असम्भव था।

एक दिन बाबू रामनाथने नन्दूको बुलाकर कहा—नन्दू तुमने अपने गाँवका कुछ हाल मँगाया?

नन्दू—नहीं सरकार, अभी तो कुछ हाल नहीं मँगाया।

रामनाथ—यह बड़ी बुरी बात है—तुम्हे एक बार तो अवश्य ही अपने गाँव हो आना चाहिए।

नन्दू—क्या करूँ सरकार, जब मैं ऐसा इरादा करता हूँ तभी मेरा कलेजा काँपने लगता है।

रामनाथ—यह सब तुम्हारा कायरपन है।

नन्दू—हाँ सरकार, कायरपन तो हई है, पर क्या करूँ? हिम्मत ही नहीं पड़ती।

रामनाथ—अच्छा कल सवेरे तुम हमारे कहनेसे लखनऊ जाओ और अपने पिताकी खोज-खबर लेकर शामको लौट आओ।

नन्दू— ऐसी क्या जल्दी पड़ी है ?

रामनाथ—खैर जल्दी हो चाहे न हो तुम्हे यह काम करना पड़ेगा।

नन्दू—अच्छी बात है। जैसा सरकारका हुक्म है वैसा ही होगा।

यह कहकर नन्दराम बाबू साहबके सामनेसे चला गया। रातमे नन्दरामने जस्सोसे कहा—जस्सो, कल सवेरे हम ज़रा लखनऊ जांयगे।

जस्सोने आश्चर्यसे पूछा—लखनऊ क्यों ?

नन्दराम—एक काम है।

जस्सो—किसका, बाबूजीका ?

नन्दराम—नही—हां, बाबूजीका ही है।

जस्सो—तो लौटोगे कब ?

नन्दराम—परसों लौट आयेंगे।

जस्सो— बाबूजीका ऐसा कौनसा काम है।

नन्दू कुछ क्षणोंतक सोचता रहा तत्पश्चात् बोला—सच्ची बात तो यह है कि काम बाबूका नहीं मेरा ही है।

जस्सो—तुम्हारा ?

नन्दराम—हां।

जस्सो—कौन काम ?

नन्दराम—एक आदमीसे मिलना है, उससे गांवका हाल-चाल पूछना है।

जस्सो—किस गांवका ?

नन्दराम—अपने गाँवका—जहाँ तुम्हारे बाबा और नाना रहते हैं।

जस्सोको यह बात अभी तक नहीं मालूम थी कि उसके बाबा, नाना भी हैं। वह समझती थी कि उसके पिताको छोड़कर संसारमें अन्य उसका कोई नहीं। उसने विस्मयसे कहा—बाबा, क्या मेरे नाना और बाबा भीं हैं।

नन्दरामने विषादयुक्त स्वरसे कहा—हां हैं।

जस्सो—बाबा तुमने आजके पहले मुझे यह क्यों नहीं बताया।

नन्दराम—क्या करता बताके ? तू उस समय ना-समझ थी।

जस्सो—और न कभी वहाँ चले।

नन्दराम—वहा जानेका काम नहीं था।

जस्सो—क्यों ?

नन्दराम—घरमें सबसे हमारी लड़ाई है।

जस्सो—क्यों, लड़ाई क्यों है ?

नन्दराम—ऐसे ही एक बात पर झगड़ा हो गया था और हम घरसे चले आये थे। तबसे उधर आना नहीं हुआ।

जस्सो मौन होकर कुछ सोचती रही। उसके मुखपर क्षण-क्षणमें प्रसन्नता तथा चिन्ताके भाव आ-आ रहे थे।

नन्दरामने कहा—देखो, यदि ईश्वरने 'चाहा तो अब गांवमें ही चलकर रहेंगे।

जस्सो—बाबूजीकी नौकरी छोड़ दोगे ?

नन्दराम—हाँ, छोड़नी ही पड़ेगी। पर अभी ठीक नहीं कह सकता कि क्या होगा।

जस्सो पुनः चिन्तापूर्ण भावसे मौन होगई, कुछ क्षणों पश्चात् उसने कहा—वहां हमारा घर तो बना ही होगा, क्यों बाबा ?

नन्दराम—बडा भारी घर है, गाय भैंसे है, बैल है, बहली है, सभी कुछ है।

जस्सो—फिर, बाबा, तुमने इतने दिन भीक क्यों माँगी ?

नन्दराम—क्या करता बेटी, घरमें सबसे लड़ाई थी वहा जा नहीं सकता था।

जस्सो—तो क्या अब लड़ाई नहीं रही ?

नन्दराम—लडाई तो है, पर शायद मेल हो जाय—ऐसी आशा है। हमारे बाबू मेल करा देगे, उनकी बातोंसे ऐसा मालूम होता है।

जस्सो—मेल होजाय तो अच्छा ही है।

नन्दूने सिर हिलाते हुए कहा—हाँ अच्छा तो सब कुछ है, परन्तु······।

जस्सो—परन्तु क्या ?

नन्दू—यही कि मेल होना जरा कठिन है।

जस्सो—क्यों ?

नन्दू—जैसा लड़ाई-झगड़ा हुआ था उसके देखते कठिन ही मालूम होता है !

जस्सो—लड़ाई किस बात पर हुई थी ?

नन्दूने सोचा—'इसको क्या बताऊँ कि किस बातपर लड़ाई हुई थी। इसको अपने मुँहसे सब बातें बताना उचित नहीं। यदि ठीक समझूंगा तो कभी आगे चलकर बतादूँ गा, पर अभी बताना ठीक

नहीं।' यह सोचकर नन्दराम बोला—कुछ नहीं, ऐसे ही कुछ रुपये-पैसेपर झगड़ा होगया था।

जस्सो—मैंने नाना और बाबाको कभी नहीं देखा। क्यों बाबा, उन्होंने तो मुझे देखा ही होगा ?

नन्दू—नहीं देखा, जब मैं और तेरी माँ वहांसे लड़कर चले आए थे तब तू पैदा हुई थी।

जस्सो—तबसे क्या तुम वहां कभी गये ही नहीं ?

नन्दू—नहीं, कभी नहीं गया।

जस्सो पुनः मौन होकर अपने विचारोंमें लीन होगई। कुछ क्षणों पश्चात् बोली—तब तो बाबा मैं गांव जरूर चलूंगी। नाना और बाबाको देखनेका मेरा बहुत मन होता है, पर बाबा! हम वहां रहेंगे नहीं—रहेंगे हम यहीं, तुम बाबूजीकी नौकरी न छोड़ना।

नन्दराम—जब उनसे मेल होगया तो फिर मैं यहा रहकर नौकरी करने पाऊँगा ? पिताजी मुझे यहाँ कभी न रहने देंगे।

जस्सो—बाबा, गांवमें मेरा जी नहीं लगेगा और वहां मुझे पढ़ावेगा कौन ?

नन्दराम—पढ़के करेगी क्या ? तुझे कहीं नौकरी करनी है क्या ?

जस्सो—क्या नौकरी करनेके लिए ही पढ़ा जाता है। मुझे तो पढ़ना वैसे ही अच्छा लगता है। किताबोंमें अच्छी-अच्छी बातें रहती हैं—पढ़नेमें बड़ा जी लगता है।

नन्दराम—खैर, जब जैसा होगा तैसा देखा जायगा। अब इस

समय तो मैं यह पता लगाऊँगा कि गावके क्या हाल-चाल हैं—इसी लिये कल सवेरे जाऊँगा।

दूसरेदिन प्रातःकाल ही नन्दराम लखनऊके लिए रवाना होगया। उचित समयपर लखनऊ पहुंचकर वह उस व्यक्तिसे मिला। वह व्यक्ति वहां एक महाजनके यहा नौकर था। उसने नन्दरामको देखकर कुछ आश्चर्यसे पूछा—कहो भइया नन्दू कहां रहे—तुम तो ऐसे गायब हो गये कि बरसों कुछ खोज खबर ही न दी।

नन्दरामने कहा—हां भइया, इधर-उधर फिरता रहा।

वह व्यक्ति—भइया तुमने भी अपनी उमर इसी तरह घूम-घूम कर बर्बाद कर दी। राम राम। जिसके हजारोंकी मालियत, घर-द्वार, बाग-बगीचे, गाय बैल सब मौजूद, वह इस तरह मारा-मारा फिरे।

नन्दराम—हां भइया मनोहर, जब भाग्य खोटा होता है तब ऐसा ही होता है।

मनोहर—अब तो बहुत पछताते होगे?

नन्दराम—पछताना काहेका, मैंने जो कुछ किया वह अपनी मर्जीसे किया, किसीके कहने-सुनने या दबावसे तो किया नहीं, फिर पछताना किस बातका।

मनोहर—पर तुमने की तो बड़ी भारी गलती, यह तो तुम्हे मानना ही पड़ेगा।

नन्दराम—गलती भी नहीं की। मैंने तो अपनी समझमें अच्छा ही किया था, और हुआ भी अच्छा ही, पर भाग्य दगा दे गया। आज

सोना ज़िन्दा होती तो मुझे कोई पछतावा नहीं था। उसके न रहनेसे यह दुःख होगया।

मनोहर—तो आजकल कहीं रहने लगे हो या वैसे ही घूमा-फिरा करते हो।

नन्दराम— नहीं, अब तो कानपुरमें एक बाबूके यहा नौकरी करली है।

मनोहर—नौकरी करली ? चलो यह अच्छा किया—मारे-मारे घूमनेसे यह कहीं अच्छा है।

नन्दराम—नौकरी तो मैं न करता, पर एक बाबू ऐसे मिल गये कि वह बड़ा स्नेह करने लगे—बेचारोंने हर तरहसे मेरी सहायता की, सब तरहसे माना, इस लिए मैंने सोचा कि चलो अब एक ठिकाने बैठ जाओ—लड़की का ब्याह भी करना है। बिना एक ठिकाने बैठे ब्याह होना कठिन था। यही सब सोच-समझकर मैंने उनके यहां नौकरी कर ली।

मनोहर—बड़ा अच्छा किया भइया, हम तो समझे थे कि तुम्हारा दिमाग़ ख़राब हो गया है—इसी मारे तुम कहीं एक जगह नहीं टिकते।

नन्दराम—भइया, जैसा मुझपर दुःख पड़ा है वैसा दुःख भगवान किसी बैरीको भी न दे। मेरा तो सब कुछ चला गया। घर छूटा, मां-बाप छूटे, खाने-पीनेका सुख छूटा और जिसके लिए यह सब छोड़ा, अन्तमें वह भी छोड़ गई। ऐसी दशामें किसका दिमाग़ ठीक रह सकता है ?

मनोहर—हां, यह तो तुम्हारा कहना जा है। खैर चलो जो बदा था सो हुआ—अब तुम मजेसे बने रहो। अब न कहीं चल देना।

नन्दराम—नहीं, अब कहां जाऊँगा—मैं जाना भी चाहूं, पर बाबू मुझे जाने न देंगे।

मनोहर—लड़की तो वहीं होगी ?

नन्दराम—हां, वहीं है।

मनोहर—बड़ा अच्छा है—अब उसका ब्याह भी अच्छी तरह हो जायगा।

नन्दराम—यही सोचकर तो यह किया। हां गांवकी कुछ खोज-खबर है ?

मनोहर—हा, मैं पिछले महीने गया था—सब खैर-सला है। तुम्हारे पिता अब बुढ़ा गये—बाहर बहुत कम निकलते हैं।

नन्दराम—और मां, वह भी बुढ़ा गई होंगी ?

मनोहर—तुम्हारे चले आनेका दुःख यदि किसीको हुआ तो उन्हीं को। उनकी आंखें बिगड़ गईं—आंखोंसे कम दिखाई देने लगा है। बरसों रोती रहीं—आंखें खराब न हों क्या हों।

नन्दराम—मेरे कलेजेमें यही कांटा खटका करता है। मैने घर छोड़कर अम्माको बड़ा दुःख दिया।

यह कहते-कहते नन्दरामकी आंखोंमें आंसू छलछला आये।

मनोहर—अब तो बड़े ठाकुर भी पछताते हैं।

नन्दरामने उत्सुक होकर पूछा—क्या पछताते हैं ?

मनोहर—एक दिन हमारे बापूसे कहते थे कि नन्दुआने काम तो

बुरा किया था, पर जो घर चला आता तो मैं उसे निकाल थोडा ही देता, न जाने कहां चला गया। यह कहते समय उनकी आंखोंमें आंसू भी भर आये थे।

बापूने कहा—'ठाकुर गलती तुम्हींने की, जो उसका कहना मान लेते तो वह काहेको घर छोडता। इस पर तुम्हारे बाबू बोले—'अरे मैं क्या जानता था कि उन दोनोंका इतना स्नेह है। मैं तो समझा था कि लडक-बुद्धिके मारे कहता है। जो मैं ऐसा जानता तो उसी के मनकी करता।' एक दिन मुझसे पूछने लगे—कहो, तुम्हें कुछ नन्दुवाका पता मिला? तुम तो शहरमें रहते हो, वहां तो सब तरफका आदमी आता-जाता है। इस पर मैंने कह दिया कि मुझे तो पता नहीं लगा। पहले तो इच्छा हुई की कह दूं कि वह जिन्दा है, पर तुमने कसम धरा दी थी। इससे मैंने नहीं कहा।

नन्दराम—बडा अच्छा किया भइया। उनके लिए तो मैं मर ही सा गया।

मनोहर—यार, अब तो तुम्हें एक बार जरूर जाना चाहिए। जो तुम पहुंच जाओगे तो दोनों प्राणियोंका बुढापा सुधर जायगा।

नन्दराम—मैं पहुंच तो जाऊं, पर वह मुझे अपने यहां रक्खेंगे?

मनोहर—अरे भइया, कैसी बातें करते हो, तुम उनकी आत्मा हो, तुम्हें न रक्खेंगे तो फिर रक्खेंगे किसे। हां पहले गुस्सेके मारे कह दिया था कि जाने दो अच्छा हुआ, पर अब गुस्सा कितने दिन रह सकता है। अब तो जो तुम पहुंच जाओ तो तुम्हें छातीसे लगा लें।

नन्दराम—मेरी हिम्मत नहीं पड़ती।

मनोहर—यह तुम्हारी भूल है, वहां तुम्हे कोई आधी बात तो कहेगा नहीं, मैं इसका जिम्मा लेता हूं।

नन्दराम—सोनाके बापका क्या हाल है ?

मनोहर—अच्छे है, वह भी अपनी बिटियाको याद करके दुखी हुआ करते है। तुम्हारे बापसे तो उनकी बोल-चाल तभी बन्द हो गई थी, जब तुम घरसे भागे थे। उन्होंने कहा—इन्हींके मारे हमारी लडकी घर छोड गई, जो यह अपने लडकेका ब्याह उसके साथ करना मजूर कर लेते तो यह दशा क्यों होती।

नन्दराम—हा यह तो तुम एक दफे बता चुके हो। मेरी तरफ़से अब उनके कैसे विचार है ?

मनोहर—जब कभी बात उठती है तो केवल इतना कहते है—लड़का था तो अच्छा, पर यह काम अच्छा नहीं किया।

नन्दराम—इससे तो मालूम होता है कि वह मुझसे अधिक नाराज नहीं हैं।

मनोहर—अधिक नाराज़ हो कैसे सकते है। उनकी लड़कीका भी तो कसूर है, खाली तुम्हारा कसूर थोड़ा ही है। वह तुम्हारे साथ भागनेको राजी न होती तो भला तुम उसे कैसे भगा ला सकते थे।

नन्दरामने एक दीर्घ निश्वास छोड़ कर कहा—हा, इन्साफ़की बात तो यही है। परन्तु सच पूछो तो न मेरा कसूर था न उसका। सारा कसूर पिताजीका था, उन्होंने ऐसी जिद पकड़ी कि मेरी बात ही नहीं सुनी।

मनोहर—जो सच पूछो तो उनका भी कोई कसूर नहीं। वह भी

अपनी मान-मर्यादा-खातिर कहते थे। सब लोग यही चाहते हैं कि अपने लड़के-लडकीका ब्याह अपने बराबरवालोंमें करें।

नन्दराम—हां, यह भी तुम्हारा कहना ठीक है। सारा दोष अपने भाग्यका है, किसीका दोष नहीं।

मनोहर—यही बात है।

नन्दराम—अच्छा तो अब चलता हूं फिर मिलूगा।

मनोहर—अब तो तुम वहीं रहोगे न ?

नन्दराम—हा वहीं रहूंगा।

मनोहर—एक दफे गाव जरूर हो आओ। तुम कहो तो तुम्हारे बापको तुम्हारी खबर दे दू ?

नन्दराम—अभी नहीं, जब मैं कहूं तब।

मनोहर—तुम बडे पागल हो, अभी तुम्हारी सनक नहीं गई। अभी हो आओ, तुम्हारे माँ-बाप बुड्ढे हो गये है, अधिक दिन नहीं चलेंगे। ऐसा न हो कि हाथ मलकर रह जाओ।

नन्दराम—नहीं भइया, एक दफ़े जरूर जाऊंगा, अच्छा अबकी गांव जाओ तो इतना कह देना कि ज़िन्दा है और कानपुरमें है। बस। देखो वह कहते क्या हैं।

मनोहर—अच्छी बात है, जरूर कहूंगा

६

शामके सात बज चुके है। चन्द्रपुरके वृद्ध ज़मींदार अपनी चौपालमे वैठे है। उनके पास गाँवके अनेक छोटे-बडे बैठे हुए हैं। इधर-उधरकी बाते हो रही है। इसी समय हठात् एक व्यक्ति बोल उठा—चाचा, भइया नन्दराम तो ऐसे गये कि फिर पता ही न लगा कि कहाँ गये।

वृद्ध जमीदार, नन्दरामके पिताने, एक दीर्घ निश्वास छोडी और बोले—बेटा, नन्द तो मेरा जनम ही बिगाड गया। भगवानने एक ही पुत्र दिया था, सो वह भी न रहा।

वही व्यक्ति बोला—चाचा, ऐसी बात मु हसे न निकालो, आखिर वह कही न कहीं तो हो ही गा।

जमींदार—कौन जाने है कि नहीं, हो भी तो तब भी हमारे लिए मरे ही के समान है।

एक अन्य व्यक्ति बोला—जीवित होते तो चिट्ठी-विट्ठी तो जरूर ही लिखते।

चौथा—यह कोई बात नहीं—चिट्ठी नहीं लिखी इससे यह नहीं समझना चाहिए कि हुई नहीं।

पाँचवाँ—हाँ बात तो ऐसी ही है।

छठा—वह चाहे जो हो, पर जब मैं सोचता हूं कि ठाकुरके पीछे रियासत कौन सँभालेगा तब बड़ा दुःख होता है।

जमींदार साहबने कहा—भइया, ये बातें न करो, मुझे कष्ट होता है। जो भगवानकी इच्छा होगी सो होगा। पूर्व जन्ममें जो पाप किये हैं उनका फल तो भोगना ही पड़ेगा।

इसपर सबने एक स्वरसे कहा—हाँ यह बात तो ठीक ही है।

उसी समय हमारा पूर्व-परिचित मनोहरसिंह वहा आ पहुंचा। आते ही उसने पहले वृद्ध जमींदार साहबके पैर छुए। वृद्धने उसे आशीर्वाद दिया तत्पश्चात् पूछा—कब आये ?

मनोहर—आज दोपहरमें आया था, चाचा।

वृद्ध—सब खैर-सल्ला।

मनोहर—हाँ, सब आनन्द है।

वृद्ध—छुट्टी लाये होगे ?

मनोहर—हा, एक हफ्तेकी छुट्टी लेकर आया हूँ।

वृद्ध—और क्या खबर है, तुम शहरमें रहते हो तुम्हे तो इधर-उधरकी खबरें मिलती होंगी।

मनोहर—'कोई खास खबर नहीं है। हा, एक बडा शुभ समाचार लाया हू।' उपस्थित लोग सब एक स्वरसे बोले—वह क्या ?

मनोहर—भइया नन्दराम मिले थे।

'है।' कहकर सब लोग चौकन्ने होगये। वृद्धने भी अत्यन्त उत्सुकता पूर्वक पूछा—नन्दू मिला था। यह सच बात है ?

मनोहर—हाँ चाचा, मिले थे।

पहला व्यक्ति बोला—देखो, चाचा अभी-अभी मैंने क्या कहा था, वही बात निकली न ? मैं तो जानता था कि भइया नन्दराम कहीं न

कहीं जरूर होंगे। क्यों भइया मनोहर, तुम्हे वह कहां मिले थे?

मनोहर—लखनऊमें ही मिले थे। घूमते-घामते आ निकले। वह तो अकस्मात् भेंट होगई, नहीं तो वह मिलते थोडा ही। मैं द्वारपर खड़ा था, उसी समय वह उधरसे निकले। मैं देखकर चौंक पडा। पहले तो मैं समझा कि कहीं कोई दूसरा आदमी न हो, पर फिर यह सोचकर कि सन्देह दूर कर लेनेमें क्या हर्ज है, मैंने उनका नाम लेकर पुकारा। मेरे पुकारते ही उन्होंने घूमकर देखा। मेरी उनकी आखें चार हुईं। वह देखते ही मुझे पहचान गये। पहले तो ऐसा जान पडा कि वह वहासे निकल जानेकी ताकमें है, परन्तु फिर वह तुरन्त ही लौट पडे और मेरे पास आये। तब सब हाल मालूम हुआ।

वृद्धने कहा—तूने उसे जाने क्यों दिया? उसी समय मेरे पास लिवा लाता, या मुझे तार दे देना। हाय, अब वह कहाँ मिलेगा—न जाने कहा चल दिया हो।

यह कहकर वृद्ध जमींदार बहुत अधीरसे होने लगे। यह देखकर मनोहर बोला—चाचा, मैं उनका पता ठिकाना सब पूछ आया हू, आप घबराइये नहीं। वह आजकल कानपुरमे हैं।

जमींदार—कानपुरमे, किस मुहल्लेमें, वहाँ क्या करता है?

मनोहर—एक वकीलके यहाँ नौकर है, बीस रुपये महीना पाते हैं।

एक व्यक्ति बोल उठा—देखो भगवान्‌की माया। जिसके यहां लाखोंकी सम्पत्ति वह बीस रुपये महीनेकी नौकरी करे।

वृद्ध—बीस रुपये महीनेका तो मेरे यहां ईंधन जल जाता है।

एक व्यक्ति—और ज्यादाका—क्या हम देखते नहीं है।

वृद्ध—और क्या हाल है—तू सब कह जा, मेरे पूछने की राह मत देख।

मनोहर—और हाल यह है कि सोनाका तो देहान्त हो गया। एक लड़की है, तेरह, चौदह बरसकी। तकलीफ उन्होंने बडी उठाई, यहा तक कि कुछ दिनों भीख भी मांगी।

वृद्ध—घर छोडकर क्या कोई आराम भी उठाता है।

एक व्यक्ति—जैसा उन्होने किया उसका फल भोग लिया। अब चाचा, तुम उन्हे अपने पास बुला लो।

दूसरा—हा, अब यही उचित है। सोना रांड भी मर गई, यह अच्छा ही हुआ। अब उन्हे बुलाकर घरमे रक्खो। अपना घर-द्वार देखे। भगवान्‌ने आपकी सुन ली, आपका बुढापा सुधर गया।

एक दूसरा व्यक्ति बोला—बुढापा सुधर गया और सबसे बडी बात यह है कि रियासतका वारिस हो गया। नही तो यह सब तितर-बितर हो जाती। अब यह है कि चाचा का नाम तो चलता रहेगा—रियासत बनी रहेगी।

वृद्ध—बेटा, मनोहर, कल तुझे मेरे साथ कानपुर चलना पडेगा। समझा।

मनोहर—चला चलूंगा। सच पूछो तो मैं इसी मारे छुट्टी लेकर दौड़ा आया, नहीं तो मुझे और कोई काम नहीं था।

वृद्ध—बड़ा अच्छा किया बेटा, भगवान तुझे सुखी रक्खे। तूने बड़ा काम किया। बुड्ढे आदमी को मरतेसे बचा लिया—ईश्वर जाने मेरा चोला भीतर-ही-भीतर घुला जा रहा था। उसकी याद भूलती

नहीं थी —रात रात भर पड़ा रोया करता था। उसकी माँ तो रोते रोते अंधी हो गई।

मनोहर—हाँ, चाचा, मामता ऐसी ही चीज है। जवान बेटा और वह भी एकलौता। भगवान् यह दुःख किसी को न दिखावे। चाची-को भी खबर कर दो—उनके कलेजेमें भी ठंढक पड जायगी।

वृद्ध—अभी खबर करता हू—अच्छा तू ही जाकर कह दे।

मनोहर—अच्छो बात है। तो कल सवेरे चलोगे न ?

वृद्ध—अरे सबेरे क्या, रातमें कोई गाडी जाती हो तो रात ही को चलें—अब तो मुझे एक-एक क्षण पहाड़ हो रहा है।

उपस्थित लोगों-मेंसे एकने कहा—रातको कोई गाडी नहीं जाती—सवेरे ही जाती है।

वृद्ध—तो सवेरे तो निश्चय ही चलेंगे।

मनोहर—अच्छी बात है, मैं तैयार रहूगा।

मनोहर उसी समय जमींदार साहबके अन्तःपुरमे पहुचा और द्वार-पर ही से पुकार कर बोला—'चाची आज हमारा मुँह मीठा कराओ आज बडा शुभ समाचार लाया हूं।' चाची अर्थात जमीदार महोदय-की पत्नी और नन्दरामकी माता सन्ध्याकालका पूजन कर रही थीं—उनका पूजन यही था कि माला लेकर बैठ जाती थीं और एक घण्टे बराबर राम राम कहा करती थीं। देहातकी अशिक्षित स्त्रियोंके लिए इतना ही यथेष्ट था। चाचीको सूझ कम पडता था, इसलिए बोलीं—कौन है ?

मनोहर—चाची मैं हूं।

मनोहरके कण्ठ-स्वरसे उसे पहचानकर चाचीने पूछा—मनोहर है क्या ?

मनोहर—हाँ चाची ।

चाची—क्या समाचार लाया है ?

मनोहर—ऐसा समाचार लाया है कि तुम खुशीके मारे फूलकर कुप्पा हो जाओगी ।

चाचीने मुस्करा कर कहा— पागल कहीं का, मैं फूलकर कुप्पा हो जाऊँगी । तू तो ऐसा कहता है कि जानो कुछ नन्दूका समाचार लाया है ।

मनोहर— हाँ नन्दू भइया ही का है ।

'हैं' कहकर चाची चौंक पड़ी—माला हाथसे छूटकर गोदमे गिर पडी, बोलीं—क्या-क्या, जल्दी बता, नन्दू आया है क्या ?

मनोहर—नहीं ।

चाचीके शरीरमे, नन्दरामकी बात सुनकर जो विद्युतधारा सो दौड गई थी और जिसके कारण कुछ क्षणोंके लिए उनके शरीरमें तेजी आई थी—वह मनोहरके 'नहीं' कहते ही जाती रही और उनका शरीर ढीला पड़ गया । उन्होंने अत्यन्त नैराश्यपूर्ण स्वरमे कहा—मनोहर, तू मुझसे हँसी करता है और वह भी मेरे नन्दूका नाम लेकर— ।

मनोहर बात काटकर बोला—अरे राम राम चाची, तुम क्या कहती हो । मैं तुमसे हँसी करूँगा, और वह भी नन्दू भइयाके मामले-में ? मुझे क्या मालूम नहीं कि नन्दूके पीछे तुमने कितना दुःख उठाया है ।

नन्दूका प्रसङ्ग और उसपर मनोहरके इस सहानुभूतिपूर्ण वाक्यने चाचीके नेत्र अश्रुपूर्ण कर दिये। वह कहने लगीं—बेटा, क्या कहूं, न जाने नन्दूने किस जनमका बदला लिया। मैंने कैसे कैसे दुख उठा-कर उसे पाला-पोसा था। उसका मुँह देख देखकर जीती थी। उसीने मेरे साथ यह किया। जब मैं सोचती हू कि एक ग़ैर लडकीके पीछे उसने मुझे छोड दिया—यह न सोचा कि इसकी क्या दशा होगी, उसे जरा भी मेरा मोह न लगा—तब मेरे कलेजेमे हूक उठती है। हाय, ऐसा सब लडके करें तो माँ बिचारियाँ काहेको दुनियाँमें रहें। खैर—उसने जो किया अच्छा किया। जो गया था तो इतना ही करता कि कभी-कभी अपनी खैर-सल्ला लिख दिया करता, मैं उसीसे सबर कर लेती। पर वह तो ऐसा गया कि सारा नाता तोड गया। यह भी पता नहीं कि दुनियामे है भी या नहीं।

मनोहर—तुरन्त बोल उठा—है। चाची यही समाचार तो मैं लाया हूं। नन्दू भइया मुझे मिले थे। वह आजकल कानपुरमे है।

चाचीके शरीरमे पुनः 'करेन्ट' दौड़ा। वह उसी प्रकार उत्सुक हो कर बोलीं—मिला था? कहाँ, कानपुरमे है?

मनोहर—हाँ, कानपुरमे एक वकीलके यहाँ नौकर है। कल सवेरे मैं और चाचा उन्हे लिवाने जाँयगे।

चाची—मैं भी चलूंगी, वह तुम्हारे लिवाये नहीं आयेगा।

ठीक इसी समय जमींदार साहब भी आ गये। उन्होंने कहा—आयेगा क्यों नहीं?

चाची सिरका पल्ला किंचित आगे सरकाकर बोलीं—आ

तुम्हारी ही हठके मारे तो उसने घर छोडा, तुम्हारे लिवाये भला क्या आवेगा।

मनोहर बोला—नहीं चाची, यह बात नहीं, वह जरूर आजांयगे। पिछली बातें छोडो, उनका ध्यान अब किसे है, इतनी मुद्दत गुजर गई, ज़माना पलट गया—वे बातें अब याद किसे है।

चाची—लाख जमाना पलट गया हो, पर जहां वह इनकी सूरत देखेगा उसे सारी बातें याद आजावेंगी।

चाचा—तुम तो अपनीही ओटे जाती हो, न कुछ समझती हो न बूझती हो। आवेगा क्यों नहीं ? दिल्लगी है न आवेगा।

चाची—इन बातोंसे तो आचुका, उसके सामने जो तुम इस तरह बात करोगे तब तो वह एक जन्म क्या सात जन्म नहीं आवेगा। मुझे यह डर है कि कहीं वहांसे भी न चल दे—और जो अबकी हाथसे गया तो फिर इस जनममे उसके दर्शन नहीं होंगे।

मनोहर—नहीं चाची, अब कहीं न जायगे। उन्होंने भी बहुत तकलीफ़ उठाई है। यह न समझो कि वह कोई बड़े सुखमें रहे। मा-बापको दुःख देकर भला कोई सुख उठा सकता है ?

चाची—अच्छी बात है, जैसा तुम ठीक समझो। मैंने तो इस मारे कहा था कि इसी बहाने मैं घूम-फिर आती।

मनोहरने चचासे कहा—चाचा, क्या हरज है ले चलो, तीर्थ-स्थान है, हो आयेंगी।

चाचा—ऐसा है तो फिर हो आयगी—क्या यही समय है ?

चाची बोलीं—इन्हे तो बस अपने कामसे काम है, दूसरा कोई मरे या जिये।

चाचा किंचित मुस्करा कर बोले—जो यह बात है तो चलो, मगी क्यों जाती हो।

इतना सुनते ही चाची प्रसन्नताके मारे व्याकुल हो गईं। उन्होंने 'राम-नाम' की प्रतिनिधि माला को लपेटकर रख दिया और तुरन्त खडी हो गईं और बोली—तो मैं तैयारी करती हू—अरे कोई है, इस मनोहरका मुंह मीठा कराओ, बेचारेने बड़ी सुभ बात सुनाई है।

चाचा—चलो बस तुम इसकी चिन्ता न करो, इसका मुंह मीठा हो जायगा।

मनोहर—चाचा तुम बीचमें भाजी मत मारो, मैं इस समय बिना कुछ खाये यहांसे टलूंगा नही। मुझे भूख बडे जोरसे लगी है।

चाचा—अच्छा तो खूब खाओ बेटा, तुम्हारे वास्ते खानेकी क्या कमी है।

चाचीने पुकारा—महराजिन खानेको बन गया? देख रजरनियां, खानेको बना कि नहीं। और देख दुधहड़ीमेंसे मलाई निकाल ला—एक पावभर और महराजिनसे कह दे कि एक थाली परोस दे—रबड़ी बनी है वह भी रख दे। (मनोहरसे) क्यों बेटा, कुछ मिठाई भी निकालूं और तो कुछ है नहीं कल घर ही में खोया औटकर पेड़े, बर्फी बना लिये थे।

मनोहर बोला—अरे नहीं चाची, मिठाई की क्या जरूरत है। और पाव भर मलाई मत रखना, एक आध पाव मलाई और आध पाव

रबडी रख देना बस। और एक चार ठो पूरी—इससे अधिक नहीं खाऊँगा।

चाची—और कचौरी नहीं ?

मनोहर—कचौरी भी बनी है ?

चाची—हा तुम्हारे चाचा तो बिना कचौरीके ग्रास नही तोड़ते, पूरी चाहे न खाय, पर कचौरी रोज खाते है।

मनोहर—अच्छा तो दो कचौरी भी रखदेना।

थोड़ी देरमे मनोहरके लिए भोजन आगया और उसने भोजन करना आरम्भ किया।

भोजन करनेके पश्चात् मनोहरने उन्हे नन्दरामके सम्बन्धकी सब बाते बता दीं और प्रातःकाल तैयार होकर आनेका वादा करके वह बिदा हुआ। चाची रातभर यात्राकी तैयारीमे लगी रहीं। चाचीने अपनी पोतीके लिए सन्दूकसे कुछ वस्त्र निकाले। नन्दरामके लिए भी उन्होंने कुछ वस्त्र रख लिये। इस कार्यमे उन्हे अधिक समय व्यतीत करना पड़ा। अनेकों वस्त्रोंमेसे छाँटकर, कभी पसन्द करके और कभी ना पसन्द करके, उन्होंने बडी देरमे वस्त्र निकाले।

सवेरा होते ही सब लोग बहेलियों पर सवार हुए। कुल छः आदमी थे—जमींदार साहब, उनकी पत्नी, मनोहरसिंह, महाराजिन, दो दास, जिनमे एक जातिका नाई और दूसरा बारी था। नाई जमींदार साहबकी बन्दूक और कार्तूसोंकी पेटी लिए हुए था। इस शानसे नन्द-रामके पिनाने कानपुरके लिए प्रस्थान किया।

यथा समय सब लोग कानपुर पहुंच गये और एक धर्मशालामें

डेरा जमाया। यात्राके श्रमसे कुछ मुक्त हो लेने पर ज़मींदार साहबने मनोहरसे कहा—हां तो अब नन्दूके पास चलना चाहिए।

मनोहर—अभी चलियेगा? पहले मैं पता लगा लाऊँ, नन्दूसे मिल आऊँ तब आप चलियेगा।

जमीदार साहब बोले—यह ठीक नहीं, ऐसा न हो कि वह मेरा और अपनी मां का आना सुनकर फिर कहीं बहक जायं।

मनोहर—अरे नहीं चाचा, आप भी कैसी बातें करते हैं। वह कुछ स्वतंत्र थोड़े ही है जो भाग खड़े होंगे। इससे आप बिल्कुल निश्चिन्त रहिये—वह अब कहीं नहीं जा सकते।

चाचा—कहीं न भी जाय, पर कहीं छिप ही रहे।

मनोहर—नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। मैं उन्हे यहीं लिवा लाऊ तो फिर आपके वहा जानेकी क्या आवश्यकता है।

चाचा—अच्छी बात है, पर मुझे उसके मालिक वकील साहबसे भी मिलना है।

मनोहर—उनसे चाहे जब मिल लीजियेगा।

चाचा—अच्छा, तो तुम अभी जाओ।

मनोहर—मै जाता हू।

मनोहर उसी समय चलदिया। थोडीही देरमे वह पूछता पूछता बाबू रामनाथके मकान पर पहुंच गया। नन्दू उस समय बरण्डेमें बैठा था। मनोहरको देखते ही उठ खडा हुआ। दोनों एक दूसरेसे लिपट गये। नन्दरामने पूछा—कब आये?

मनोहर—आज ही आया।

नन्दराम—सब खैर-सल्ला ?

मनोहर—सब आनन्द है।

नन्दराम—इधर कैसे भूल पड़े। तीर्थ-यात्रा करने आये क्या ?

मनोहर—सच बताऊँ या झूठ ?

नन्दराम—झूठका क्या काम सच बताओ।

मनोहर—तुम्हारे पिता और माता आये हैं उन्हींके साथ आया हूं।

नन्दराम चौंक कर बोला—ऐं। वह आये हैं ?

मनोहर—हां आये हैं—और केवल तुमसे मिलनेके लिए।

नन्दराम—पता तुमने बताया होगा।

मनोहर—हां।

नन्दराम—बड़ा गजब किया, मैंने तो तुमसे इतना कहा था कि जिकर आवे तो कह देना कि कानपुरमें है पता बतानेको तो कहा नहीं था।

मनोहर—क्या करूं मेरा जी न माना।

नन्दराम—यह तुमने बुरा किया।

मनोहर—पागलपनेकी बातें मत करो, इसमें बुरा क्या किया ? तुम्हें मालूम है कि इनकी क्या दशा है ?

नन्दराम—वह चाहे जो कुछ हो; पर—खैर जो होना था सो तो हो ही गया।

मनोहर—चचा तो मेरे साथ अभी आ रहे थे पर मैंने रोक दिया। मैंने सोचा पहले अकेले तुमसे मिल लूँ।

नन्दराम—यह अच्छा किया ?

मनोहर—वह तुम्हारे लिए तड़प रहे है, उन्हे एक-एक क्षण भारी है। तुम्हे मेरे साथ वहाँ अभी चलना पडेगा।

नन्दराम—अभी ?

मनोहर—हाँ, अभी।

नन्दराम—यह तो बुरी सुनाई।

मनोहर—बुरी हो चाहे भली।

नन्दराम—मेरा साहस नहीं पडता।

मनोहर—पागल हो।

नन्दराम—उन्हे मुंह कैसे दिखाऊँ। जिनके साथ मैने ऐसी निठुरता की, उनके सामने क्या मुंह लेकर जाऊँ। भाई मुझे क्षमा करो, मैं अपने आप तो जाऊँगा नहीं।

मनोहर—फिर वही पागलपन ?

नन्दराम—खैर यह पागलपन ही सही, पर तुम्हे मेरे इस पागलपनकी रक्षा करनी पड़ेगी।

मनोहर—तुम्हारे जानेसे उनका जी प्रसन्न हो जायगा।

नन्दराम—यह सब कुछ है, पर मैं नहीं जाऊंगा।

मनोहर—तो मैं उन्हे यहीं ले आऊँ।

नन्दराम यह तुम जानो, मैं कैसे कहूं। पर तुम जो उनसे जाकर यह कहोगे कि नन्दराम नहीं आता तब तो ठीक न होगा।

मनोहर—फिर और क्या कहूंगा ?

नन्दराम—कह देना मिला नहीं।

मनोहर—वाह। यह एक ही कही।

नन्दराम—इसमें हर्ज क्या है ? इस पर भी आवें तो उन्हें लिवा लाना।

मनोहर—यह बात है ? अच्छा ऐसा ही सही।

नन्दराम—तो कब आओगे ?

मनोहर—अब आज तो आना होगा नहीं, कल किसी समय आयेंगे।

नन्दराम—किस समय ? समय मुझे बता दो जिससे मैं उनसे मिलनेके लिए तैयार रहू !

मनोहर—तैयारी क्या करोगे, क्या सिंगार करोगे ?

नन्दराम—नहीं, जीको कड़ा बनाऊंगा।

मनोहर—फिर वही पागलपन, तुम बड़े ही बोदे आदमी हो।

नन्दराम—पापी सदैव बोदे होते हैं। मैंने जो पाप किया है वही मुझे बोदा बनाये हुए है।

मनोहर—पिछली बातोंको याद करनेसे कोई लाभ नहीं—उन्हे भूल जाओ।

नन्दराम—उन बातोंने हृदयपर ऐसी गहरी छाप छोड़ी है कि उनका भूलना इस जन्ममें असम्भव है।

मनोहर—अच्छा तो मैं कल शामको उन्हे लेकर आऊंगा।

नन्दराम—शामको, पांच-छः बजेके लगभग ?

मनोहर—हां, बस इसी समय।

नन्दराम—अच्छी बात है।

मनोहर—पर देखो कहीं छिप न रहना।

नन्दराम—नहीं अब क्या छिपूंगा, अब तो भगवान्हीकी यह इच्छा है—उनकी इच्छा कौन टाल सकता है। अब छिपूंगा नहीं, तुम निश्चिन्त रहो।

मनोहर—अच्छी बात है—मैं कल उन्हे लाऊंगा।

यह कहकर मनोहरसिंह बिदा हुआ।

मनोहरसिंहने धर्मशाले लौटकर नन्दरामके पितासे कहा—नन्दराम भाई मिले नहीं।

नन्दरामके पिताने चौंककर कहा—क्या कहा। मिला नहीं, कहां चला गया ?

मनोहर—कहीं बाहर नहीं गये, यहीं शहरमें किसी कामसे गये हुए थे।

जमींदार साहबने कहा—तो जरा देर वहा ठहर जाते।

मनोहर—ठहरकर क्या करता, न जाने वह कितनी देरमे आते।

ज़मींदार—तो फिर अब कब जाओगे ?

मनोहर—कल चला जाऊंगा।

जमींदार—कल क्यों, शामको एक चक्कर फिर लगा आना।

मनोहर—शामको ?

जमींदार—और क्या। और काम ही कौन है, मुख्य काम तो यही है।

मनोहर—हां यह तो ठीक ही है—अच्छी बात है, शामको ही चला जाऊंगा।

शामको मनोहरसिंह ज़मीदार साहबसे यह कहकर चला कि मैं

फिर नन्दराम भाईके पास जाता हूं। परन्तु वह नन्दरामके पास नहीं गया, थोडी देर इधर-उधर घूमकर धर्मशाले लौट गया।

जमींदार साहबने पूछा—क्यों, मिला ?

मनोहर—नहीं।

यह सुनकर जमींदार साहब अधीर हो गये, बोले—यह बडी विच्त्रि बात है कि दोपहरको भी नहीं मिला और इस समय भी नहीं मिला, मामला क्या है ? कहीं उसे हमारे आनेका पता तो नही लग गय—पता लग गया होगा तो छिप रहा होगा।

मनोहर—अरे नहीं चाचा, ऐसा नहीं हो सकता आप तो न जाने कहां-कहांकी बातें सोचने लगते हैं।

ज़मींदार साहबकी पत्नी बोल उठीं—अरे तो लडकीको ही ले आता, वह तो घरहीमें होगी।

मनोहर—अरे चाची विना जान-पहचानके वह मेरे साथ कैसे आ सकती है।

चाची—जब तू उससे कहता कि तेरे बाबा-दादी आये हैं तो आती कैसे न, वह तो सयानी है, सब बातें समझती होगी।

मनोहर—वह लाख कुछ हो, पर बिना जाने-बूझे ऐसे कोई किसीके साथ नहीं चल देता जिनके यहां है, अव्वल तो, वही न आने देते।

जमींदार साहब बोल उठे—खैर कोई हर्ज नहीं, रात भरकी बात है सवेरे मैं स्वयम् जाऊँगा।

पत्नी—तुम आप जाओगे तभी ठीक भी होगा।

दूसरे दिन सवेरे आठ बजेके लगभग जमींदार साहब तैयार हो गये। मनोहरसिहने कहा शामको चलियेगा, अभी कौन जल्दी है।

इसपर जमींदार साहब बोले—नही, इसी समय चलूगा। सुबह-शाम करते दो दिन हो गये।

मनोहरने देखा कि अब ठाकुर किसी तरह नहीं मानेंगे, अतएव वह चुप हो गया। उसने यह भी सोचा कि चलो अच्छा है—एक दमसे जा पहुचेंगे। नन्दराम समझेगा कि शामको आवेंगे, उस समय कदाचित उसका साहस न पडा और वह टाल देता—इससे यह अच्छा है कि एक दमसे जा पहुचे, इस प्रकार उसके हृदयमे किसी प्रकारका संकोच उत्पन्न होनेका अवसर ही न आयेगा।

जमींदार साहबने अपना जमींदारी ठाट बनाया। श्वेत पाजामा पहना, उसपर रेशमी कोट जिसकी ऊपरी जेबसे घडीकी सोनेकी चेन लटक रही थी। गलेमे रेशमी डुपट्टा, सिर पर रेशमी ही साफा, पैरोंमें 'पेटेण्ट लेदर' का शू (जूता)। उनके साथ उनका नाई बन्दूक लिए और कंधेपर कार्तूसकी पेटी डाले साथ था। नाईने भी इस समय पर-पुर्ज़े निकाले थे। वह भी सफेद धोती, सफेद कुर्ता पहने था और गुलाबी साफ़ा बांधे था, गलेमे सूबेदारी सुनहला कण्ठा पडा हुआ था, पैरोंमे देहातका बना हुआ जूता—जो चलतेमें चर्र-मर्र बोलता था, पहने था।

इस प्रकार सुसज्जित होकर ज़मींदार साहब अपने पुत्र नन्दरामसे मिलनेके लिए चले।

१०

बाबू रामनाथ अपनी कोठीके बरण्डेमें बैठे हुए एक अँग्रेजी समाचारपत्र पढ रहे थे। उसी समय उन्होंने देखा कि उनकी कोठीके सामने एक तांगा आकर रुका। उसमेंसे तीन व्यक्ति उतरे और तीनों इधर-उधर देखते हुए धीरे-धीरे भीतर आये। उनमेसे एक शेष दोनोंका स्वामी जान पडता था। उसके ठाट-बाटको देखकर बाबू रामनाथने समझा कि यह कोई बडा आदमी है, परन्तु देहाती है। वे व्यक्ति बाबू रामनाथको बैठा देख सीधे उन्हींके पास चले आये। उन्हे आते देख रामनाथ शिष्टाचारके नाते खडे हो गये। वृद्धने उन्हे सलाम किया। सलामका उत्तर देकर रामनाथने पास पडी हुई कुर्सियोंकी ओर संकेत करके उनसे बैठनेके लिए कहा। दो व्यक्ति कुर्सियोंपर बैठ गये--एक व्यक्ति जो बन्दूक लिए हुए था खडा रहा। बाबू रामनाथने वृद्धको सिरसे पैर तक देखा। वृद्धके बाल श्वेत थे, परन्तु चेहरेपर अब भी सुर्खी बनी हुई थी, आँखें बडी-बडी थीं और उसमे लाल डोरे पडे हुए थे। मुखपर प्रभुता तथा आत्म-गौरवका तेज था। बाबू रामनाथपर वृद्धका रोब सा छा गया। उन्होंने बड़ी नम्रता पूर्वक पूछा—आप कहांसे आये हैं ?

वृद्धने कहा—मैं इलाहाबाद जिलेके एक गाँवसे आया हूं।

इलाहाबाद ज़िलेका नाम सुनते ही बाबू रामनाथ कुछ चौंक पड़े,

उन्हे कोई बात स्मरण सी हो आई, अपने भावको भीतर ही दबाकर बोले—आपका शुभ नाम ?

वृद्ध—मेरा नाम अर्जुनसिंह है।

रामनाथ—अच्छा। आप नन्दरामसिंहके पिता हैं ?

वृद्ध जमींदार कुछ शर्माकर बोले—जी हाँ।

बाबू रामनाथ वृद्धके चेहरे-मोहरे तथा ठाठ-बाटको देखकर मन-ही-मन बोले—नन्दराम निस्सन्देह कुलीन तथा धनाढ्य वंशका है, उसने अपने सम्बन्धमे जो कुछ कहा था वह सब ठीक निकला।

रामनाथको मौन देखकर वृद्धने कहा—मुझे पता लगा कि नन्दराम आपके यहाँ नौकर है, इसलिए मैं उसे लेने आया हू। आजसे २५ वर्ष पहले नन्दराम घरमे लडकर गाँवसे भाग आया था तबसे अभी तक मुझे उसकी सूरत देखनेको नहीं मिली।

बाबू रामनाथने कहा—हाँ मुझे सब बातें मालूम हैं, नन्दू मुझसे सारा हाल बता चुका है।

वृद्ध—जब आप जानते ही है तब विशेष कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं। नन्दू कहां है ?

रामनाथ—मैंने एक कामसे भेजा है, अभी आता होगा। आपको और उसकी माताको बडा कष्ट हुआ होगा।

वृद्धने एक दीर्घ श्वास लेकर कहा—पुत्रके चले जानेसे किसीको सुख कब मिलता है ?

रामनाथ—हां यह तो यथार्थ है।

उसी समय हठात् रामनाथके पिता भी वहाँ आ गये। उन्हे

देखते ही रामनाथ उठकर खड़े हो गये। अर्जुनसिंह भी रामनाथको खड़े होते देख खड़े हो गये और उन्होंने रामनाथके पिताको प्रणाम किया।

पिताके कुछ बोलनेके पूर्व ही रामनाथने कहा—पिताजी, ये ठाकुर अर्जुनसिंह, नन्दरामके पिता, हैं।

रामनाथके पिता श्यामनाथने ठाकुर साहब और उनके साथियोंको एक बार सिरसे पैर तक देखा, तत्पश्चात् कुछ मुस्कराकर बोले—अच्छा, आप कब तशरीफ लाये ?

ठाकुर साहबने कहा—मुझे यहां आये तो दो दिन हुए पर आपकी ड्योढीपर आज ही हाजिरी दी है।

बाबू श्यामनाथ एक खाली कुर्सी पर बैठ गये, उनके बैठते ही सब लोग बैठ गये। बाबू श्यामनाथने पूछा—मालूम होता है आप ज़मींदार हैं।

ठाकुर साहब—हाँ सरकार, मैं एक छोटा जमींदार हूं।

श्यामनाथ—आप छोटे जमींदार तो नहीं मालूम होते।

ठाकुर साहब—और क्या छोटे तो हुई हैं, सालमें कुल छः हज़ार मालगुजारी देते हैं।

बाबू श्यामनाथ मुस्कराकर बोले—छः हजार मालगुजारी देनेवाला छोटा जमींदार तो नहीं कहलाता।

ठाकुर साहब—अरे साहब छोटे तो हुई हैं, आप लोगोंकी बराबरी हम लोग कहां कर सकते हैं।

श्यामनाथ—बराबरीका तो कोई सवाल नहीं—मुझे ताज्जुब है

कि आपका लड़का यहां बीस रुपये महीनेकी नौकरी करता है, मालूम होता है घरसे लड़कर चला आया है।

ठाकुर साहब—जी हा, आज नहीं, उसे घर छोड़े पचीस बरस हो गये।

श्यामनाथ आश्चर्यसे नेत्र विस्फारित करके बोले—पचीस बरस यह रहा कहां? हमारे यहा तो सिर्फ सालभरसे है।

ठाकुर साहब—भगवान जाने कहा रहा, मिले तो हाल मालूम हो।

बाबू श्यामनाथने रामनाथकी ओर देखकर पूछा—नन्दराम कहां है?

रामनाथ—मैंने एक कामसे भेजा है अभी आता होगा।

वकील साहब बोले—उसने यहां तो किसीसे अपना कोई हाल बताया नहीं।

रामनाथ बोल उठे—मुझसे बताया था।

वकील साहब—लेकिन तुमने मुझसे कोई जिक्र नहीं किया।

रामनाथने तुरन्त कहा—उस समय मुझे उसकी बातोंपर विश्वास नहीं हुआ था।

वकील साहब—फिर भी तुम्हें जिक्र तो कर ही देना था। पहलेसे मालूम हो जाता तो उसे घर भेज दिया जाता।

रामनाथ—घर जानेको तो वह राजी ही नहीं होता था।

वकील साहब—राजी कैसे न होता, खैर। (ठाकुरसे) अब आप उसे घर ले जांय।

ठाकुर साहब—इसीलिए तो मैं आया हूं।

वकील साहब—बड़ी अच्छी बात है। मुआफ कीजियेगा, मुझे यह बात ज़रा भी मालूम न थी, वरनः अब तक मैंने उसे आपके पास भेज दिया होता।

ठाकुर साहब—अब भी आपहीके बदौलत वह मुझे मिला है, आपके यहां न होता तो मिलना कठिन था। हां, लड़की कहां है, उसे ज़रा बुलवा दीजिये।

वकील साहबने रामनाथकी ओर देखकर कहा—जस्सोको बुलवा दो।

रामनाथ इधर-उधर देखकर स्वयम ही यह कहते हुए उठे—मैं ही बुलाये लाता हूं।

ठाकुर साहब—आप क्यों कष्ट उठाइयेगा ?

वकील साहब—इसमें कष्टकी कौन बात है, आपने तो शायद उसे अभी देखा भी न होगा ?

ठाकुर साहब—जी नहीं।

रामनाथ अन्तःपुरमें पहुंचे और उन्होंने पुकारा चम्पा।

चम्पा—भइया।

रामनाथ—जस्सो कहां है ?

चम्पा 'क्यों, कुछ काम है क्या ?' यह कहते हुए रामनाथके सन्मुख आई।

रामनाथ—उससे कह दो उसके बाबा आये हैं और उसे बुला रहे है।

चम्पा—कौन बाबा, जस्सोका बाप ?

रामनाथ—नहीं, उसके बापका बाप।

चम्पा विस्मित होकर बोली—अच्छा। वह तो अपने बापहीको बाबा कहती है, अब असली बाबाको क्या कहेगी पड-बाबा।

रामनाथ मुस्कराकर बोले—तुझे इससे क्या मतलब, वह चाहे जो कहे।

चम्पा—मुझे बतलाना जो पड़ेगा, अरे जस्सो। ओ जस्सो।

जस्सो एक कमरेसे निकलकर आई। बाहर आकर उसको आँखें बाबू रामनाथसे चार हुईं, उसने लजाकर अपना मुख नीचा कर लिया और अपनी धोतीसे शरीर छिपाती हुई, चम्पा तथा रामनाथके सन्मुख आके खडी हो गई। इस समय जस्सोपर पूर्ण यौवनकी छटा विद्यमान थी। अच्छा खाना, अच्छा कपडा मिलने तथा निश्चिन्तताका जीवन व्यतीत करनेसे उसका शरीर भी पुष्ट हो चला था, शरीरका वर्ण भी पहलेकी अपेक्षा अधिक गौर हो गया था, मुखपर कान्ति विराजमान थी, गालोंपर हल्की सुर्खी आ चली थी।

चम्पाने उससे कहा—तेरा बाबा आया है, वह तुझे बुला रहा है।

जस्सो बोली—मेरा बाबा आया है, मेरा बाबा गया था कहां?

चम्पा अट्टहास्य करके रामनाथसे बोली—देखा भइया। मैंने जो कहा था वही बात हुई न। (जस्सोसे) अरी तेरा बाप नहीं, तेरा बाबा, बापका बाप। अब समझी, तू बापही को बाबा कहती है, अब असली बाबाको क्या कहेगी।

जस्सोके मुखपर प्रसन्नताका भाव उदय हो आया। उसने कहा—मेरे बाबा आये हैं?

रामनाथने कहा—हाँ। बाहर बैठे हैं, तुझे देखने को बुला रहे है। आओ!

यह कहकर रामनाथ बाहरको ओर चल दिये। पीछे-पीछे जस्सो भी चली।

रामनाथ बाहर आकर कुर्सीपर बैठ गये और जस्सो द्वारपर ठिठ्ककर खड़ी हो गई और ठाकुर साहबकी ओर विस्मय, आदर, स्नेह तथा उत्सुकता-पूर्ण दृष्टिसे देखने लगी।

ठाकुर साहब उसको देखकर खड़े हो गये और बोले—बेटी, आओ, अपने बाबाके पास आओ।

जस्सो धीरे-धीरे कुछ सकुचाती हुई ठाकुर साहबके पास आ गई, ठाकुर साहबने आगे बढ़कर उसे छातीसे लगा लिया।

रामनाथ यह दृश्य देखकर मन-ही-मन कुछ अप्रसन्न हुए। उन्होने मनमे सोचा—देहाती आदमी बिल्कुल गंवार होते है, तमीज़ इन्हे छू नहीं जाती, जवान लड़कीको छातीसे लगाता है, बदतमीज कहीं का।

ठाकुर साहबकी आँखोंसे अश्रुपात होने लगा। वकील साहब भी यह दृश्य देखकर द्रवित हो उठे, उनके नेत्र अश्रुपूर्ण हो गये और उन्होंने दूसरी ओर मुंह फेर लिया।

ठाकुर साहब पांच मिनट तक जस्सोको हृदयसे लगाये रहे, इसके पश्चात् उन्होंने उसे अलग करके उसके दोनों कन्धे पकड़े हुए उसे खूब ध्यानसे देखा। जस्सोका नख-शिख देखकर उनके मुखपर केवल सन्तोष ही नहीं वरन् गर्वका भाव उत्पन्न हुआ। जस्सोके नेत्र भी अश्रुपूर्ण थे और वह कन-अंखियों बाबाकी ओर देख रही थी।

उसी समय नन्दराम भी आ गया और मनोहरसिंह तथा अपने पिताको वहाँ उपस्थित देखकर उसका चेहरा कुछ क्षणोंके लिए फ़क़ हो गया। ठाकुर साहबने नन्दरामको देखकर अपनी दोनों बाँहे फैला दीं और गद्‌गद्‌ कण्ठसे कहा—'बेटा!' उनके मुखसे अधिक कुछ न निकला—उनका कण्ठ रुँध गया। नन्दराम दौड़कर उनके चरणों पर गिर पड़ा और बच्चोंकी भाँति चीत्कार करके रोने लगा।

इस करुण-दृश्यका ऐसा आतङ्क छा गया कि सब लोग मूर्त्तिवत्‌ रह गये। वकील साहब रूमाल आँखोंपर रखकर और गर्दन झुकाकर जहाँके तहाँ बैठे रह गये। बाबू रामनाथ भी गर्दन झुकाये और दाहिने हाथकी हथेली पर गाल धरे मूर्त्तिवत्‌ बैठे रहे, मनोहरसिंहकी आंखोंसे अश्रु बह रहे थे और वह दूसरी ओर मुंह किये खड़ा था। ठाकुर साहबका बन्दूक़-धारी नौकर भी हक्का-बक्का सा होकर इस दृश्यको देख रहा था।

ठाकुर साहबने नन्दरामको उठानेकी चेष्टा की, पर उसने पैर न छोड़े। ठाकुर साहबने रुँधे हुए कण्ठसे कहा—बेटा, मैंने तुम्हारा कसूर माफ़ किया और तुम भी मुझसे जो भूल-चूक हुई हो माफ़ करो। हम दोनोंको ही घोर कष्ट मिला। तुम इधर-उधर मारे-मारे फिरे, मैं घर पड़ा तड़पता रहा। ख़ैर, अब पिछली बातें भूल जाओ। अब गांव चलो और अपना घर-द्वार संभालो-मुझे सुबह-शाम दो रोटीसे काम है—और मुझे कुछ नहीं चाहिए।

त् कुछ देर पश्चाजब सब लोग सावधान हुए तो ठाकुर साहबने

बाबू श्यामनाथसे कहा—अब आप इसे छुट्टी दीजिये तो मैं इसे घर ले जाऊँ।

वकील साहब बोले—बेशक, बेशक। मुझे बड़ा अफ़सोस है कि यह इस हालतमे हमारे यहा रहा, अगर मुझे पहलेसे मालूम हो जाता तो—।

ठाकुर साहब—उस बातको अब जाने दीजिए। इसमें आपका क्या अपराध। एक तरहसे आपने बडी दया की कि विना जाने-बूझे रख लिया, आजकल लोग नौकर बहुत समझ-बूझकर रखते हैं।

नन्दराम खडा था, वकील साहबने एक कुर्सीकी ओर इशारा करके कहा—नन्दराम बैठ जाओ, खड़े क्यों हो ?

नन्दराम हाथ जोडकर बोला—आपके सामने मैं कुर्सीपर क्या बैठूं।

वकील साहब—अब मैं तुम्हे अपना नौकर नहीं समझता, तुम निस्सङ्कोच बैठो।

रामनाथने कहा—बैठ जाओजी, तुम भी तो हमारी ही जातिके हो, कुलीन हो, शरीफ हो, हमसे किसी बातमे कम थोड़ा ही हो। वह तो समयकी बात थी कि तुम्हे हमारी नौकरी करनी पडी।

ठाकुर साहब—वह सब कुछ सही, पर वैसे भी यह आपका गुलाम है। आप लोगोंने इसकी सहायता की, उस एहसानको यह भूल थोड़ा ही सकता है।

नन्दराम बोल उठा—पिताजी, जैसी इन लोगोंने मेरे साथ नेकी की

है वैसी इस जमानेमे कोई कर नहीं सकता। मैं इनके एहसानको भूल नही सकता। मेरी जान भी इनके काम आये तो मैं कभी इन्कार नहीं करूँगा। सच पूछिए तो इन्हींकी बदौलत आपने मुझे और मैंने आपको पाया है।

ठाकुर साहब—ठीक है, भले आदमीका यही काम है कि जो अपने साथ नेकी करे उसे कभी न भूले। अच्छा तो वकील साहब अब मुझे आज्ञा दीजिए।

वकील साहब—अजी बठिए (रामनाथसे) अरे भाई, ठाकुर साहबके लिए कुछ जलपान तो मगाओ।

ाकुर साहब—अब आप कष्ट न कीजिए।

ील साहब—अजी वाह। कष्टको कौन बात है?

नाथने दूसरे नौकरको बुलाकर जलपानके लिए कुछ लानेको

साहबने जस्सोसे कहा—जाओ बिटिया, तैयार हो आओ,

ेरे साथ चलना होगा, तुम्हारी दादी तुम्हारे लिए तडप

ासन्नता-पूर्वक अन्तःपुरकी ओर चली गई।

बाद जलपानकी सामग्री आई। ठाकुर साहब और

ोंने जलपान किया, पान खाये। तत्पश्चात् ठाकुर साहबने

ाज्ञा दीजिए।

ील उठे—आप ठहरे कहा है?

ब—एक धर्मशालामे ठहरा हू।

रामनाथ—तो वहा कुछ कष्ट हो तो यहीं चले आइए, यहां सब तरहका आराम रहेगा।

यह कहकर रामनाथने अपने पिताकी ओर देखा। वह भी बोल उठे—हा हा, आप यहा चले आइए। धर्म-शालामें भला क्या आराम मिल सकता है।

ठाकुर साहब—नहीं, वहाँ कोई कष्ट नहीं है और दो रोजकी तो बात ही है, परसों नरसों चले ही जायँगे। एक-दो रोजके लिए क्या आराम और क्या तकलीफ।

रामनाथ—इतनी जल्दी चले जाइयेगा। कानपुरकी सैर तो कर लीजिए।

ठाकुर साहब—मैं यहाँ पहले दो दफे हो गया हूं।

वकील साहब—खैर यों तो सब लोग अपने जीवनमे २ एक बार अवश्य ही आते है, तीर्थ स्थान है। यहाकी चीः देखी न होंगी।

ठाकुर साहब—कौन सी चीजें।

वकील साहब—यहां दो चार स्थान देखने लायक

ठाकुर साहब—वह सब एक दफे देख चुका हूं, पि

रामनाथ—तो फिर आप यहीं आ जाइये, यहा घरमें सवारी इत्यादि सब मौजूद है, आपको किसी बातः यह विश्वास रखिये।

ठाकुर साहब—आपके यहा कष्टका क्या काम, : राजा है, आपको कमी किस बातकी है।

यह कहकर ठाकुर साहबने नन्दरामकी ओर देखा। नन्दराम उनका तात्पर्य समझकर बोला--पिताजी यहीं आ जाइये, यहां ठीक रहेगा। मेरा घर तो यही है।

ठाकुर साहब—अच्छी बात है।

रामनाथ—नन्दराम तुम साथ चले जाओ अपनी माताजीसे भी मिल आओ और सबको साथ ले आओ।

नन्दराम—अच्छी बात है। चलिये पिताजी।

ठाकुर साहब—जस्सोको तो बुला लो।

रामनाथ—अब उसे साथ ले जाकर क्या कीजिएगा? आप यहा तो आ ही रहे हैं।

ठाकुर साहब—अच्छी बात है।

यह कहकर ठाकुर सात्व उठ खड़े हुए और नन्दरामको साथ लेकर चल दिये।

नन्दराम—धर्मशाले पहुचकर अपनी मातासे मिला। माता २५ बर्षके बिछुडे हुए पुत्रको छातीसे लगाकर बडी देर तक गेया की, नन्द-राम भी खूब गोया। एक बार पुनः करुणाका समुद्र उमड पडा।

इसके पश्चात् सबने ग्क साथ बैठकर भोजन किया और इसके बाद अपना असबाब गाडीपर लादकर सब लोग वकील साहबकी कोठरीकी ओर चले।

११

ठाकुर साहब तीन दिन तक वकील साहबके यहा रहे। रामनाथने उनकी बडी खातिर की, उन्हे भली भाति कानपुरकी सैर कराई। तीसरे दिन ठाकुर साहबने वकील साहबसे कहा—अब मुझे आज्ञा दीजिये तो चलू—गाँव छोडे कई दिन होगये, घर-द्वार अकेला है।

वकील साहबने कहा—मैं कैसे कहू, जैसी आपकी इच्छा, परन्तु आज क्या जाइयेगा—कलका दिन अच्छा है।

रामनाथ भी बोल उठे—हाँ ठाकुर साहब, कल जाइयेगा—आज और ठहर जाइये।

ठाकुर साहब—वह तो एक ही बात है, जैसे आज तैसे कल।

रामनाथ—जब एक ही बात है तो कल ही चले जाइयेगा।

ठाकुर साहब—अच्छी बात है, जैसा आपका हुक्म होगा वैसा करना पडेगा, कल ही सही।

ठाकुर साहबके प्रस्थानका दिन नियत हो जाने पर बाबू रामनाथको बडी बेचैनी हुई—बेचैनी केवल यह सोचकर हुई कि अब जस्सो चली जायगी—सदैवके लिए चली जायगी। कदाचित् अब इस जीवनमे उससे फिर भेंट न हो। बाबू रामनाथका चित्त बड़ा दुखी होगया। उस दिन उन्होंने भोजन नहीं किया। पूछने पर 'जी अच्छा नहीं है' यह बहाना कर दिया। वह दिन भर एकातमे पड़े आकाश-पाताल सोचते रहे, वह अपने हृदयसे बाते करने लगे—'तुमने ही तो

यह दिन उपस्थित किया। तुम्हारी हार्दिक इच्छा यह थी कि जस्सो किसी तरह आँखोंके सामनेसे टल जाय। सो अब वही हो रहा है। हाँ ठीक, यह मेरी इच्छा थी, पर उस समय यह नहीं मालूम था कि उसके टलनेका अवसर आने पर हृदय इतना विचलित होगा, इतना अधीर होगा। उफ! मालूम होता है जैसे कोई कलेजा निकाले लिए जा रहा है। मुझे क्या होगया है, मैं उसके लिए क्यों इतना अधीर हू। वह मेरी कौन है? मेरा उसका क्या नाता? वह अपने पिता, अपने बाबा-दादीके साथ अपने घर जा रही है—इसमें मेरे बापका क्या जोर? नही, ऐसा न होना चाहिए। इससे तो वह अनाथ ही होती तो अच्छा था। उफ! यह कैसा स्वार्थपूर्ण विचार है, यह नीचता है। केवल अपने स्वार्थके लिए किसीको अनाथ बनाना पाशविकता है। हाँ हाँ यह सब ठीक है, पर आह! इस हृदयको क्या कहूं—यह दुष्ट तो किसी तरह मानता ही नहीं। नहीं मानता तो इस हृदयको चीरकर फेंक दो, इसे शरीरसे अलग कर दो, ऐसे हृदयका पास रहना अच्छा नहीं। पता नही उसकी क्या दशा होगी। प्रकटमें तो वह जानेके लिए उत्सुक दिखाई पडती है। उत्सुक क्यों न होगी? अपने घर जा रही है, अपने बाबा-दादीके पास जा रही है, जहाँ उसे सब प्रकारका सुख मिलेगा, यहाँ क्या धरा है और यहाँ उसका कौन बैठा है जो यहाँ रहना पसन्द करेगी? जाने दो, आरम्भमें कुछ दिन हृदय मचलेगा; परन्तु फिर क्रमशः बहल जायगा। परन्तु एक बार उससे मिल तो लेना चाहिए। देखें उसका इस सम्बन्धमें क्या विचार है।'

रामनाथ इसी प्रकार पडे अनेक प्रकारकी बाते सोचते रहे। अन्त मे उन्होंने तय किया कि चाहे जो हो, परन्तु बिना एक बार उससे मिले, उससे दो बाते किये, उसे जाने नहीं दूँगा।

रामनाथ इसी प्रकारकी बाते सोचते रहे। अन्तमे उन्होंने अपनी भगिनो चम्पाको बुलवाया और उससे बोले—चम्पा जस्सोसे कह देना तैयारी करले, कल उसे जाना होगा।

चम्पा बोली—भैया, जस्सोका जाना मुझे अच्छा नहीं लगता।

रामनाथकी जिह्वा पर ये शब्द आये—'चम्पा तुम मेरे हृदयकी बात कह रही हो।' परन्तु इन शब्दोंको उच्चारण करनेके पूर्व ही उन्होंने दाँतों तले जीभ दबा ली और विषादयुक्त मृदु-हास्यके साथ बोले—अवश्य अच्छा न लगता होगा, पर किया क्या जाय, जहाँ उसका पिता जायगा, वहीं उसे भी जाना पड़ेगा।

चम्पा—हाँ यह तो ठीक ही है, पर मेरा जी उसे भेजनेको नहीं चाहता। इतने दिनोंमे मुझे उससे बड़ा स्नेह हो गया है। उसके जाने से मेरा जी बड़ा दुःखी होगा।

चम्पा पुनः बोली—कोई ऐसो युक्ति नही है जिससे वह यहीं बनी रहे?

रामनाथ उदास भावसे बोले—ऐसा कैसे हो सकता है? उसका पिता, उसका बाबा, भला उसे यहाँ क्यों छोडने लगे?

चम्पा—उसकी दादी तो उसपर बलि-बलि जाती है—और चाहे कोई छोड़ने पर राज़ा भी हो जाय, पर वह चुड़ैल कभी राज़ी न होगी—वह तो उसे गठरीमें बाँधके ले जायगी।

रामनाथ—क्यों न ले जाय, उसकी पौत्री जो है। तुझीको कोई अपने यहाँ रखना चाहे तो तू रह जायगी और हम लोग तुझे वहाँ छोड़ देंगे? ऐसा भला कभी हो सकता है?

चम्पा—इससे तो वह यहाँ आती ही न तो अच्छा था।

रामनाथके हृदयने भी भीतर ही भीतर चम्पाकी बातका समर्थन किया—हाँ, यदि आती ही न तो बहुत अच्छा था।

चम्पा—कब जायगी?

रामनाथ—कल किसी गाड़ीसे जायगी।

चम्पा—मैंने परिश्रम करके उसे पढ़ाया-लिखाया। अब वह हिन्दी अच्छी तरह पढ़-लिख लेती है।

रामनाथ—खैर, यह तो उपकारका काम है, इसका फल तुझे ईश्वर देगा।

चम्पा—इसका फल मैं यही चाहती हूं कि वह मेरे ही पास रहे। सच्ची भइया, वह भी मुझे बहुत चाहती है। जबसे उसे यह मालूम हुआ कि वह यहाँसे चली जायगी, तबसे वह बड़ी उदास है।

रामनाथने उत्सुकता-पूर्वक पूछा—क्या कहा—उदास है?

चम्पा—हाँ, बेचारी बड़ी उदास है।

रामनाथ—यह आश्चर्यकी बात है, उसे तो प्रसन्न होना चाहिए।

चम्पा—वहाँ जाकर भले ही प्रसन्न हो जाय, पर अभी तो उसे भी बुरा लग रहा है। उसे यहाँ सबसे मुहब्बत हो गई है।

रामनाथ भी एक दीर्घ-निश्वास लेकर बोले—यह सब कुछ है,

पर अब तो उसे जाना ही पडेगा, उस बेचारीका क्या बस है—वह तो परवश है न।

चम्पा—अभी तक कोई नहीं आया था जब वह यहाँ आकर सबमे खिल-मिल गई तब बाबा-दादी भी आ मरे।

इस बात पर रामनाथ हँस पडे, बोले—तू उन्हे कोस रही है।

चम्पा—कोसू न तो क्या करूँ—मुझे बडा बुरा लग रहा है।

रामनाथ—अच्छा एक काम कर, जरा उसे मेरे पास भेज तो दे, उसका मन देखूँ, यदि वह यहाँ रहनेको राजी हो तो कुछ उपाय सोचूँ।

चम्पा—भइया, ऐसा करदो तो बड़ा अच्छा हो। मैं अभी उसे भेजती हूं।

यह कहकर चम्पा शीघ्रता पूर्वक वहाँसे चली गई।

रामनाथ यह भली भाँति जानते थे कि जस्सोका यहाँ रहना एक अनहोनी बात है, परन्तु उन्होंने केवल एक बार उससे मिलने के लिए ही चम्पासे यह बहाना किया था।

थोड़ी देर पश्चात् ही जस्सो उदास भावसे सिर झुकाये हुए रामनाथके सामने आकर खडी हो गई।

१२

जस्सोको देखकर पहले रामनाथके मनमे यह आया कि उसे घसीटकर हृदयसे लगालें, परन्तु कुछ तो जस्सोके सौन्दर्यातंकके कारण और कुछ इस कारणसे कि उनके सात्विक स्वभावने हृदयको ऐसा करनेका साहस प्रदान नहीं किया—वे कलेजा मसोसकर रह गये ।

दोनों कुछ क्षणों तक मौन रहे। जस्सो पृथ्वीकी ओर आँखें किये चुपचाप पैरके अंगूठेसे नीचे बिछी हुई दरी पर नख-प्रहार कर रही थी और रामनाथ उसकी ओर स्थिर दृष्टिसे देख रहे थे। थोडी देर बाद नामनाथने जस्सोसे कहा—जस्सो !

जस्सोने उसी प्रकार सिर झुकाये हुए कहा—क्या ?

रामनाथ—कल तुम्हारे पिता और बाबा अपने घर जायंगे — और, और तुम्हे भी साथ ले जायंगे।

जस्सो उसी प्रकार शीस झुकाये हुए बोली—क्या, कल ही ?

रामनाथ—हाँ, कल ही।

जस्सो—इतनी जल्दी क्या पडी है ?

रामनाथ—क्यों जल्दी क्यों न हो ? अपने घर जानेमें सबको जल्दी होती है, यहाँ उनका क्या धरा है ?

जस्सो—तो बाबा तो लौट ही आयेंगे।

रामनाथ—तू अब अपने पिताको बाबा मत कहा कर। जब तेरा

सगा बाबा मिल गया है तो अब अपने बापको पिताजी कहा कर और बाबाको बाबा कहा कर, समझी ?

जस्सो किञ्चित् मुस्कराकर बोली—अच्छी बात है। हाँ तो पिता जी तो यहाँ लौट आयेंगे ?

रामनाथ—क्यों, यहाँ लौटनेका कारण ?

जस्सो—आपकी नौकरी जो करते हैं।

रामनाथ जस्सोकी इस सरलतापर हस पड़े, बोले—तुम्हारे बाबा कोई मामूली आदमी थोडा ही हैं। वह बडे अमीर आदमी हैं, वह अब तुम्हारे बापको नौकरी नही करने देंगे।

जस्सो चिन्तामे पड गई, उसके मुखपर मलिनता दौड गई। उसने कुछ देरतक मौन रहकर कहा—तो क्या पिताजी अब यहाँ नहीं लौटेंगे ?

रामनाथ—नही। और—और तुम भी अब यहाँ न आने पाओगी।

इतना सुनते ही जस्सोका मुख श्वेत पड़ गया। उसने घबराकर कहा—नही, बाबूजी ऐसा न कहिये।

परन्तु जान पड़ता है कि उसे अपने उक्त कथनपर लज्जा हुई, क्योंकि दूसरे ही क्षण उसके गालों पर हल्की लालिमा दौड गई और उसने अपना सिर झुका लिया।

रामनाथने इस बातको ध्यान-पूर्वक देखा, और उनके हृदयसे एक दीर्घ निश्वास निकली। उन्होंने विषाद-युक्त स्वरमें कहा—मैं क्या अपनी ओरसे थोड़ा ही कुछ कह रहा हूं, मेरा बस चले तो · ।

रामनाथ बीच ही में रुक गये, उनका मुख रक्तवर्ण हो गया, उन्होंने अपनी जीभको दांतों तले दाब लिया, मानों अपने मनोभावोंको हृदयमें रखनेसे उन्हें बड़ाही मानसिक तथा नैतिक परिश्रम पड रहा है।

जस्सोने अपना मुख ऊपर उठाया, उसके नेत्रोंमे आंसू छलछला रहे थे। उसने कहा—तो क्या, बाबू जी, मुझे आपके चरणोंसे अलगही होना पड़ेगा ?

इसबार रामनाथने कुछ साहस करके कहा—मै क्या कर सकता हू, मेरा वश चले तो मैं तुम्हें कभी न जाने दूं, परन्तु मै क्या करूं, मेरा तुमपर क्या जोर है ?

जस्सोने पुनः ऊपर मुख उठाया। उसकी आंखें रामनाथकी आंखों-से मिल गईं। उसके नेत्रोंसे आत्म-समर्पण, केवल आत्म-समर्पण ही नहीं, सर्वस्व समर्पणके भाव उमडे पड रहे थे। रामनाथ उन भावोंकी निश्शब्द चोटसे तड़प गये।

उन्होंने कहा—जस्सो, मैं क्या कर सकता हूं, मैं परवश हू, तुम्हारी ही तरह परवश हू—अन्यथा अन्यथा . उफ़।

यह कहकर उन्होंने दोनों हाथोंसे अपना सिर पकड लिया। जस्सो उसी प्रकार सिर झुकाये खड़ी रही।

थोड़ी देरमें रामनाथने सिर उठाया। उनके नेत्र लाल हो रहे थे, मुख तमतमाया हुआ था। उन्होंने कुछ क्षणों तक जस्सोकी ओर देखा तत्पश्चात् कहा—जस्सो, तुम्हारा जाना ही ठीक है। तुम्हारा यहाँ रहना ठीक नहीं!

जस्सो चौंक पड़ी, उसने घबराकर कहा—क्यों ?

रामनाथ—क्या कारण जानना चाहती हो ? नहीं, नहीं, कारण जाननेकी चेष्टा न करो, परन्तु नहीं; मैं भूल करता हू तुम कारण अवश्य जानती हो, तुम जानबूझकर अनजान बन रही हो ।

जस्सो—मैं तो कुछ भी नहीं जानती ।

रामनाथ उठकर खडे हो गये और अपने दोनों हाथोंसे जस्सोके दोनों कन्धे पकडकर बोले—'ऐं, क्या तुम नहीं जानती ? देखो मेरी ओर देखो, मेरी आँखोंसे आँखें मिलाकर कहो कि तुम नहीं जानतीं।' परन्तु जस्सोने सिर ऊपर नहीं उठाया, उसके नेत्रोंसे टपाटप आँसू टपकने लगे ।

रामनाथने जस्सोके कन्धे परसे हाथ हटा लिये और ओठोंपर विषादपूर्ण मुस्कराहट लाकर बोले—तुम सब समझती हो । ओह, वह इतनी अशुभ घडी थी जिस दिन मैंने तुम्हे पहले पहल देखा था । तुमने मेरे सुखमय, शान्त जीवनको दुखमय और अशान्त बना दिया। मैंने तुम्हे भिखारिणी समझकर आश्रय दिया था, परन्तु तुम तो अन्तमें रानी निकलीं । ओह । क्याही अच्छा होता यदि तुम भिखारिणी ही रहतीं । अच्छा जाओ, ईश्वर तुम्हे सुखी करे, मुझे सन्तोष है । तुम मेरे घरमें भिखारिणी होकर आई थीं और रानी होकर जा रही हो । जाओ; परन्तु कभी-कभी उस व्यक्तिको भी याद कर लिया करना, जिसने तुम्हे, एक भिखारिणी को, हृदय-दान किया था । यह जानते हुए भी कि तुम एक भिखारिणी हो, तुम्हे अपनी हृदयेश्वरी बनाया था ।

यह कहते कहते रामनाथका गला भर आया, उन्होंने अपना मुंह दूसरी ओर फेर लिया।

हठात् जस्सो भूमिपर बैठ गई और उसने दोनों हाथोंसे रामनाथके चरण पकड लिये और रुँधे हुए कंठसे कहा—मुझे इन चरणोंसे अलग न कीजिये।

रामनाथ—मैं क्या कर सकता हूं और तुम ही क्या कर सकती हो। यह सब व्यर्थ है, विधिने जो रच रक्खा है वह अवश्य पूरा होगा।

जस्सो—मैं इन चरणोंको छोडकर कहीं नहीं जाना चाहती।

रामनाथ कुछ नम्र होकर बोले—तुम्हे जाना पडेगा और जाओ क्यों न? वहा सब तरहका सुख है। तुम्हारे पिता, बाबा, दादी तुम्हे आँखोंकी पुतली बनाकर रक्खेंगे, तुम वहा बैठी राज्य करोगी।

जस्सो—मै भिखारिणी हू, मैं भिखारिणी ही रहना चाहती हूँ।

रामनाथ—तुम्हारे चाहनेसे क्या होता है, जो तुम्हारे बडे-बूढ़े चाहेगे वह होगा।

जस्सो—मैं तो आपहीको सब कुछ समझती हू।

रामनाथ—देखो लडकपन मत करो, मेरा पैर छोड़ दो, यदि कोई आ गया और उसने देख लिया तो ठीक न होगा।

जस्सोने रामनाथके पैर छोड दिये और पुन. उठकर खड़ी हो गई और आँचलसे अपने नेत्र पोंछने लगी।

रामनाथ पुनः कुर्सीपर बैठ गये।

कुछ देर तक दोनों नीरव रहे। हठात् उसी समय किसीके आनेकी आहट सुनाई पड़ी। रामनाथ संभल कर बैठ गये, जस्सो भी शीघ्रतापूर्वक वहांसे हटकर दूर खड़ी हो गई। कमरेके द्वारपर ही से चम्पाका कण्ठ-स्वर सुनाई पड़ा। उसने कहा—भइया, क्या तै किया?

रामनाथ खखार कर बोले—तय क्या करना है, तय करना कुछ मेरे हाथमे थोडा ही है।

चम्पा—जस्सो क्या कहती है ?

रामनाथ—जस्सो बेचारी भी क्या कह सकती है, उसे तो जैसा उसके बाबा-दादी कहेंगे, वैसा करना पडेगा।

चम्पा—सो तो करना पडेगा, परन्तु उसकी इच्छा क्या है ?

रामनाथ—यह उससे पूछो।

चम्पा—तुमने नहीं पूछा ?

रामनाथ—मैंने ? मैंने तो अभी नही पूछा।

चम्पा—वाह ! फिर बुलाया क्यों था ?

रामनाथ शीघ्रता पूर्वक बोले—इसकी इच्छा तो जानेकी है नहीं।

चम्पा—तब फिर मत भेजो।

रामनाथ—मैं भेजने न भेजनेवाला कौन हूं, यह इसकी दादीसे कहो।

चम्पा—वह तो कभी न मानेगी।

रामनाथ—तो फिर कैसे बनेगा ?

चम्पा—तुम इसके बाबासे कहो, वह चाहे मान जायं।

रामनाथ—यह सब व्यर्थ है। वह अपनी लड़की पराये घरमें छोडनेको कभी तैयार न होंगे।

चम्पा—हूं अब उनकी लड़की हो गई, अभी तक बाबा-दादी कहां थे ?

रामनाथ—यह सब वाहियात बात है। उन्हे मालूम नहीं था तो इसके यह माने थोडा ही हो गये कि अब उनका इसपर कोई अधिकार ही नहीं रहा।

चम्पा—देखो मैं इसके बापसे कहूगी।

रामनाथ—हा उससे तुम स्वयम् कहो तो कदाचित् उसे कुछ खयाल हो।

चम्पा—मैं अवश्य कहूंगी।

रामनाथ—परन्तु उसके माननेसे क्या होगा? उसका पिता माने तब बात है।

चम्पा—देखो, मैं पहले उससे कहूगी, वह मान गया तो फिर इसके बाबासे कहो जायगा।

रामनाथ मुस्कराकर बोले—हा पहले पितापर विजय प्राप्त करके फिर बाबा पर चढाई होगी क्यों?

चम्पा भी हस पडी बोली—और क्या।

यह कहकर चम्पा वहासे चल दी। चलते समय उसने जस्सोसे कहा—आओ जस्सो चले। आज तेरे बापसे मेरी बात-चीत होगी।

चम्पा चली गई उसके पीछे-पीछे सिर झुकाये हुए जस्सो भी चली गई।

१३

चम्पाने उसी समय नन्दरामको बुलवाया और उससे बोली—क्यों नन्दराम, तुम क्या जस्सो को भी ले जाओगे ?

नन्दरामने कहा—साथ न ले जाऊँ तो फिर क्या करूँ ?

चम्पा—यह बात तो हमे अच्छी नहीं लगती। जब यहाँ सबसे उसका प्यार-प्रेम बढ गया तब तुम उसे लिये जाते हो।

नन्दरामने कहा—क्या करूँ, मेरी इच्छा तो यह घर छोड़नेकी थी नहीं। मैं तो यहाँसे मरं पर हो निकलता पर मजबूरी है। भगवान-को जो इच्छा है वही हो रहा है।

चम्पा—तो तुम गाँव चले जाओ, जस्सोको यहीं छोड जाओ। थोडे दिन बाद तुम भी यहीं चले आना।

नन्दराम—मेरा बस चले तो मैं यहासे टलूं ही नहीं।

चम्पा—तो फिर क्यों जाते हो ?

नन्दराम—मैं कुछ अपनी इच्छासे थोडा ही जा रहा हूँ—मैं तो धरा-पकडा जा रहा हू। पिताजी तो जानो लेने आये ही है, उधर छोटे और बडे बाबू भी यही कह रहे है कि जाओ। अब तुम्हीं बताओ बेटी ऐसी दशामें मै क्या कर सकता हूँ ?

चम्पा—अच्छा तो जस्सोको यहीं छोड जाओ।

चम्पा और नन्दरामका वार्त्तालाप चम्पाकी माताने सुना। वह वहां पर आकर खड़ी हो गईं और चम्पासे पूछने लगी—क्या बात है ?

चम्पा—यह जस्सोको लिये जा रहे है।

माता—ले न जांय तो क्या यहा छोड जांय? जहां उसके मां-बाप जांयगे वहीं,उसे भी जाना पडेगा।

चम्पा—यहीं बने रहे तो कुछ हरज है?

माता—तू तो है पागल। यहा क्यों बनी रहे? मां-बाप तो उसके अन्त रहे और वह यहां बनी रहे? तू ही न इनके साथ चली जा।

चम्पा—हूं, मैं क्यों चली जाऊं?

माता—तो फिर वह क्यों यहां रहे?

चम्पा—वह यहां रह जो रही है, मैं इनके वहां रहती होती तो चली जाती।

माता—तो रहनेसे होता क्या है। जो जहा रहना है वह वहींका थोडा हो जाना है। जब तक उसका बाप यहां था तब तक वह भी यहा रही। अब जहां उसका बाप जायगा वही उसे भी जाना पडेगा।

चम्पा—उसका चित्त तो जानेको नही चाहता।

माता—यह तूने कैसे जाना?

चम्पा—उसकी बातोंसे, उसकी सूरतसे। जबसे उसने जानेकी बात-चीत सुनी है तबसे इतनी उदास है कि क्या कहूं।

यह सुनकर चम्पाकी माताका हृदय भी कुछ द्रवित होगया।

उन्होंने कहा—है तो लड़की बड़ी सुशील और मुहब्बत वाली, मेरी भी यही इच्छा थी कि वह यहीं तेरे पास रहती, पर क्या किया जावे। मा-बाप छुड़ाकर रखना भी तो ठीक नहीं। आखिर इन्हें

(नन्दराम इत्यादि को) भी तो मुहब्बत है। वह यहाँ रहेगी तो ये सब वहा तड़पेंगे।

नन्दराम बोल उठा—बहूजी, मुझे तो जरा भी उज्र नहीं है, वह आपकी ही है। आप सबकी बदौलत ही उसका जीवन सुधरा, आपके घरमे ही वह आदमी बनी। और अब भी जो वह यहाँ रहेगी तो उसे यहा किसी बातका कष्ट न होगा। यहा रहनेमें एक लाभ यह और होगा कि वह अच्छी तरह पढ-लिख जायगी, सीना-परोना अच्छा सीख जायगी—सब बातोंमे चतुर हो जायगी। देहातमे क्या रक्खा है? खाओ पियो और पडी रहो। इसके अतिरिक्त और देहातमे कुछ नहीं हो सकता। बल्कि जो कुछ गुण इसने यहाँ सीखे है, देहातमे जाकर उन्हे भी भूल जायगी। मैं ये सब बाते समझता हूँ और यदि वह यहा रहे तो मैं प्रसन्न मेरा परमात्मा प्रसन्न। परन्तु यह तभी हो सकता है जब मेरे पिता और मेरी माता राजी हों, बिना उनकी रजामन्दी मैं क्या कर सकता हूँ। मैंने उन्हे अपनी नालायकीसे इतना दुःख पहुँ-चाया है कि उसकी लाजके मारे उनके सामने मेरा सिर नहीं उठता—इसलिए अब मेरी तो हिम्मत पडती नहीं कि मैं उनसे यह कहूँ कि लड़कीको यहीं छोड़ दो। हा आप लोग कहिये, यदि वह मान जायें तो ठीक है।

चम्पा बोल उठी—और, जो उन्होंने तुमसे सलाह पूछी?

नन्दराम—तब मैं कह दूँगा कि हा छोड़ दो, इसका मैं वादा करता हूँ।

चम्पाकी माता बोल उठीं—मुझे तो आशा नहीं है कि उसकी

दादी और उसका बाबा इस बातपर राजी हो जाँयगे। सोचनेकी बात है कि इतने दिनोंमें तो लड़का और पोती मिली, बेचारे रोते-रोते अन्धे हो गये। बाबाका हाल तो मैं जानती नहीं, पर दादी तो रोते-रोते अन्धी हो गई। बिचारीने मुझे अपनी सब बिपत सुनाई थी। मुझे वह सब सुनकर इतना दुःख हुआ कि क्या कहूँ। यह सब देख सुन-कर मेरा तो यह जी नहीं करता कि मैं उनसे छुडाकर जस्सोको यहा रक्खूँ। उसे तो लड़की क्या मिली मानो कोई खोया हुआ अमूल्य धन मिल गया। दिनरात उसीके पास बैठी रहती है, जस्सो जरा इधर उधर चली जाती है तो झट कहने लगती है—"बिटिया कहाँ गई।" यह तो दशा है, फिर भला वह कैसे लडकीको यहाँ छोड सकती है। हम तो अपना-सा जी सबका समझते हैं। अभी हमसे कोई कहे कि चम्पाको कहीं छोड दो तो भला हमसे छोडा जायगा? हाँ व्याह हो जाने पर सुसराल वाले चाहे जहा ले जाय। वह बात दूसरी है।

नन्दराम—हा, यह तो ठीक ही है। चाहे जो हो, पर मै तो अपने जी से इसे भी अपना घर ही समझता हूं। मेरे लिए तो सब एक-सा है, चाहे यहाँ रहे चाहे वहां रहे।

माता—हा घर तो हई है। यों भी जब तुम्हारा जी चाहे महीना पन्द्रह दिनको, या जितने दिन तुम्हारा जी चाहे, यहा आकर रह सकते हो।

नन्दराम—बहूजो, सच पूछिये तो अभी तो मुझे इसी घरकी मुहब्बत है। जब संसारमें मेरा कोई नहीं था, तब मुझे इसी घरमें

आश्रम मिला था। मैं तो इस घरको भूल नहीं सकता। यों जीवनके दिन पूरे करनेके लिए चाहे जहा पडा रहूँ।

माता—जीवनके दिन पूरे क्यों करो—रामजीका दिया हुआ सब कुछ है, अपना खाओ पहनो, जस्सोका ब्याह करो, उसके बाल बच्चोंका सुख देखो। जीवनके दिन तो वह पूरे करते है जिनके आगे पीछे कोई नहीं होता। तुम्हे तो भगवानने सब कुछ दिया है। अभी तुम्हारी उमर ही क्या है—ब्याह करलो तो कोई लडका-बाला हो, आगे बंस चले।

नन्दराम—अरे बहूजी, अब मैं ब्याह क्या करूँगा? ब्याह ही करना होता तो इतने दिनों गली-गली भीख क्यों मागता। अब तो मेरी केवल एक यह अभिलाषा रह गई है कि जस्सोका ब्याह अपने मनके माफिक करलूं—वह अच्छे घर जावे और जीवनका सुख भोगे। लडकपनमे जितना उसने दुख उठाया है उससे अधिक सुख भोगे। क्या कहू बहूजी, मैंने अपने पागलपनेके कारण अपने आप तो दुःख उठाया ही पर इस लडकीको भी बडा दुःख दिया। जाड़ा, गर्मी और बरसात, सब ऋतुमे बेचारी चिथडे पहने पडी रहती थी—आधे पेट खाना मिलता था—कभी कभी फाका भी हो जाता था।

चम्पाकी माता कानोंपर हाथ धर कर बोली—बस भाई रहने दो, मेरेसे ये बाते नहीं सुनी जातीं।

नन्दराम—तो बहूजी, इस दसासे निकाल कर आपने उसे अपने यहा अपनी लड़की की तरह रक्खा और अब भी उसे वैसा ही मानती हो—तो अब मैं यह कैसे कह दूँ कि मै उसे यहां नहीं छोड़ सकता।

नहीं, मैं ऐसा नासमझ नहीं हूँ जो अपने परायेको न समझ सकूँ। मेरी तरफसे आपको पूरा अधिकार है कि उसे चाहे यहा रक्खो, चाहे वहा भेजो—मैं चूं करूँ तो दोगला समझना, परन्तु हा, अपने पिता और मातासे इस सम्बन्धमें मैं अपनी ओरसे कुछ न कहूंगा।

इतना कहकर नन्दराम चला गया।

चम्पा कुछ उदास भावसे जस्सोके पास पहुंची और बोली—भाई तेरा बाप तो तुझे छोडनेको राजी है, पर वह यह कहता है कि तेरे बाबा-दादी भी राजी हो जावे तभी ऐसा हो सकता है। तू अपनी दादीसे कह कि मैं यहीं रहूँगी।

जस्सो एक दबी हुई दीर्घ निश्वास छोड़कर बोली—भला मैं अपने मुखसे ऐसा कैसे कह सकती हूं। बेचारे तो मेरे लिए प्राण देनेको तैयार है तब मैं अपने मुंहसे यह कैसे कहूं कि मैं यहीं रहूँगी।

चम्पा—अच्छा तेरी दादीसे मैं कहूं?

जस्सो—हा, तुम कहो तो कदाचित कुछ प्रभाव पडे।

चम्पा जस्सोकी दादीके पास पहुंची! पहले तो उससे इधर उधर की बातें करती रही तत्पश्चात् बोली—क्यों ठकुराइन, कल तुम चली जाओगी।

ठकुराइन—हाँ बेटी, कल हम लोग चले जायँगे।

चम्पा—अभी कुछ दिन और रहतीं।

ठकुराइन—रहनेमें तो कोई हरज नहीं था पर वहाँ घर अकेला है।

चम्पा—ठकुराइन तुम जस्सोको साथ लिये जाती हो, यह बडा बुरा कर रही हो।

ठकुराइन किञ्चित् मुस्कराकर बोली— क्यों इसमें बुरा क्या है ?

चम्पा—मेरा इसके बिना जी नहीं लगेगा। मेरा उसका बडा प्रेम होगया है।

ठकुराइन बोली— हाँ प्रेम तो जरूर हो गया होगा , पर क्या करें बेटी। हमारी फूटी आखका सहारा तो अब यही लडकी है। आज नन्दरामके दो चार लड़के-बाले होते तो हम कहते, चलो खैर, ऐसा ही सही, एक लडकी यहीं बनी रहे, यह भी घर ही है। पर बेटी, अब तो एक यही लडकी है। जो यह यहाँ रहेगी तो हमारा घर अँधेरा पड़ा रहेगा। हमारे घरको चादनी तो अब यही लडकी है।

चम्पा—तुम्हारा जब जी चाहे तब यहा आकर देख जाया करना।

ठकुराइन हँस पड़ीं, बोली—अरे बेटी, ऐसा कहा हो सकता है ?

चम्पा—होनेको क्या हुआ, तुम चाहो तो सब हो सकता है। यह तो तुम्हारे बसकी बात है।

ठकुराइन—ना बेटी, मेरे बसकी बात नहीं। जस्सोके बाबासे पूछे बिना मैं कुछ नहीं कर सकती।

चम्पा—तो उनसे पूछ लो।

ठकुराइन—अब यहां पूछनेका क्या मौका है। घर पहुंचके देखा जायगा।

चम्पा हँसकर बोली—वाह! यह तो तुम अच्छा पाठ पढ़ाती हो। वहाँ पहुंचाके फिर कौन पूछता है।

ठकुराइन—अच्छा एक काम करो। तुम हमारे साथ हमारे घर

चलो। वहां महीने दो महीने रहो और जो जस्सो का बाप और बाबा राजी हो जायँ तो उसे साथ लेकर लौट आना।

चम्पा—और जो राजी न हुए तो ?

ठकुराइन—तो फिर अकेली लौट आना।

चम्पा—वाह! तो मेरे जानेसे फायदा क्या ?

ठकुराइन—वहाँ देहातकी हवा खा आना।

चम्पा—देहातमें धरा क्या है ?

ठकुराइन—हाँ, सहर जैसी चहल-पहल तो नहीं है, पर वहांकी हवा अच्छी है—घी-दूध अच्छा मिलता है, जितना जी चाहे खाना।

चम्पा—घी-दूध तो यहाँ भी अच्छा मिलता है।

ठकुराइन—हाँ, मिलता तो है, पर जो बात देहातमे है वह यहाँ कभी हो ही नहीं सकती।

चम्पा—मेरा वहाँ जाना तो कठिन है।

ठकुराइन—क्यों ?

चम्पा—माताजी और बाबूजी जाने नहीं देंगे।

ठकुराइन—हम उन्हे राजी कर लेंगे।

चम्पा—दूसरे, मेरा जी भी वहाँ न लगेगा।

ठकुराइन—कौन—तुम्हारा जी तो ऐसा लगेगा जेसा चाहिए। रही भेजनेकी बात सो तुम राजी हो तो मैं बहूजीसे कहू।

चम्पा हँसकर बोली—वाह यह अच्छी रही, मैं तुमसे जस्सोको यहाँ छोड़ जानेके लिए कहने आई थी सो तुम उलटे मुझे ही वहाँ लेजानेकी घात सोचने लगीं।

ठकुराइन यह सुनतेही अट्टहास करके बोली—नहीं बेटी, तुम ऐसी बात मत सोचो। हमारे ऐसे नसीब कहाँ जो तुम हमारे घर चलो, पर हाँ, जो चलो तो तुम्हे वहाँ किसी तरहका कष्ट नहीं होगा।

चम्पा को अब पूर्णतया निराशा हो गई। उसने समझ लिया कि जस्सोका उनके यहाँ रहना असम्भव है। वह ठकुराइनके पाससे चली आई और जस्सोके पास आकर बोली—मेरी बात कोई नहीं सुनता, तुझे जाना ही पड़ेगा।

इसके पश्चात् वह रामनाथके पास पहुंची और बोली—भइया, नन्दराम तो राजी है, पर वह चुड़ैल उसकी दादी राजी नही होती।

रामनाथ—क्या कहती है।

चम्पा—साफ-साफ तो नहीं कहती कि यहाँ नहीं छोड़ूंगी, पर दुनिया भरके बहाने करती है। कभी कहती है कि तुम मेरे साथ चलो, कभी कहती है कि उसका बाबा राजी न होगा।

रामनाथ—क्या तुमसे चलनेके लिए कहती है ?

चम्पा—हा, मैंने कहा था कि जस्सोके बिना मेरा जी न लगेगा, तो इसपर बोली कि तुम भी हमारे साथ चलो।

रामनाथ एक दीर्घ निश्वास छोड़कर बोले—मैंने तो पहले ही कहा था कि उसके बाबा-दादी उसे यहाँ कभी न छोड़ेंगे। पराये घरमें अपनी लड़की कोई कैसे छोड सकता है।

१४

रातके आठ बज चुके है। नन्दराम अपनी कोठरीमें अपना असबाब बाँधनेमे जुटा हुआ है। जस्सो भी उसे इस कार्यमें सहायता दे रही है। जस्सोका मुख-मण्डल ऊपरसे तो शान्त तथा गम्भीर है, परन्तु उसके हृदयमें एक विकट आन्दोलन मचा हुआ है। थोडी-थोडी देर पश्चात् उसके अन्तस्तलसे एक दीर्घ निश्वास निकलती है। नन्दरामने कहा—मेरी समझमे तो ख़ाली पहननेके कपडे रखलू और यह अर्तन-बर्त्तन यहीं किसी को दे जाऊं—व्यर्थ बोझ बांधनेसे क्या लाभ ?

जस्सो बोली—कोठरीमे बन्द करके ताला लगा दो।

नन्दराम—बन्द करनेसे क्या होगा ?

जस्सो—शायद फिर यहाँ आना पड़े।

नन्दराम—यह सब व्यर्थ है, अब यहाँ कोन आवेगा ?

जस्सो—शायद बाबासे न पटी तो फिर कहाँ जायेगे ?

नन्दराम—अरे नहीं—ऐसा नहीं हो सकता। न पटनेका कारण तो यही हो सकता है कि मैं ही कोई झगड़ा करूँ। सो अब मै यह करूँगा नहीं। अब मैं सदा उन्हे प्रसन्न रक्खूंगा। और यदि, ईश्वर न करे, ऐसा हुआ ही तो मैं अकेला यहाँ अथवा अन्य कही चला जाऊँगा तुझे तो अब वहीं रहना पडेगा।

जस्सो—यह कैसे होगा। जहाँ तुम जाओगे वहीं मैं भी चलूँगी। मैं तुम्हे छोड़कर वहाँ कभी भी न रहूंगी।

नन्दराम—क्यों ?

जस्सो—मेरी इच्छा ?

नन्दराम—यह सब तेरा लडकपन है। मैं चाहे जहाँ रहू, पर तुझे तो वहीं रहना पडेगा।

जस्सो—मेरा तो जी वहाँ जानेको अभी भी नहीं चाहता, मैं तो केवल तुम्हारे साथ चल रही हूं—जहाँ तुम जाओगे वहीं मैं भी जाऊँगी।

नन्दरामने जस्सोपर एक स्नेहपूर्ण दृष्टि डाली और कहा—तू बडी पगली है। क्या तू समझती है कि तू जन्म भर मेरे ही साथ रहेगी।

जस्सो—और मेरा कौन बैठा है ?

नन्दराम—तेरे बाबा-दादी नहीं हैं ?

जस्सो—मैं उन्हे क्या जानूं ? मैं तो तुम्हे जानती हू और या फिर— इस घरको जानती हूं।

नन्दराम—किस घरको, इस कोठरीको।

जस्सो—नहीं पिताजी, इस कोठरीको नहीं।

नन्दराम—तो फिर किसे।

जस्सो—रामनाथ बाबूको और उनके घर वालोंको।

नन्दराम—हाँ, ये लोग तो तुझे बहुत चाहते हैं।

जस्सोके नेत्रोंमें आँसू छलछला आये। सहानुभूति पाकर हृदयमें भरा हुआ दुःख बाहर फूट निकलनेकी चेष्टा करने लगा। जस्सोने कहा पिताजी, चम्पा बीबीको छोड़ते हुए मेरा हृदय टुकड़े-टुकड़े होता है।

नन्दराम—अवश्य होता होगा, चम्पा तुझसे बहुत स्नेह रखती है। उस बेचारीने तुझे रखनेके लिए जोड़-तोड भी बहुत लगाये।

जस्सो—पर लाभ क्या हुआ।

नन्दराम—लाभ हो ही क्या सकता था ? पिता और माताजी तुम्हे यहाँ छोडने पर कदापि राजी नहीं हो सकते।

जस्सोने इसका कोई उत्तर नहीं दिया, चुपचाप आंचलसे आंखे पोंछने लगी।

नन्दराम—मुझे भी यह घर छोड़ते बडा दुःख हो रहा है।

जस्सो—क्या वताऊं। इससे तो यहाँ आते ही न तो अच्छा था, उसी तरह भिक्षा-वृत्ति करते फिरते।

नन्दराम—बेटी, तूने ही तो यहाँ नौकरी करनेके लिए मुझे विवश किया था और तेरे ही कारण मैं यहाँ रहा। यदि मैं अकेला होता तो एक दिन भी यहां न रहता।

जस्सो—मैं क्या जानती थी कि ऐसा संयोग आ पडेगा कि यह घर भी छोडना पडेगा।

नन्दराम—संयोग आया तो अच्छा ही हुआ। वहा रहना कुछ बुरा थोड़ा ही है। अपना घर है। पराया घर लाख कुछ हो, पर अपने घरकी बराबरी नहीं कर सकता। तुझे अभी यह घर छोड़ते दुःख हो रहा है, पर जहा अपने घर पहुंचे वहीं सब भूल जायगी।

जस्सोने मनमें कहा—असम्भव। मेरे प्राण तो इसी घरमें हैं; मैं इस घरको कैसे भूल सकती हूं।

नन्दराम कहता गया—वहां तुझे हर प्रकारका सुख रहेगा। ईश्वर

चाहा तो पारसल तक तेरा व्याह हो जायगा। तब तुझे सुसराल जाना ही पड़ेगा। यहां भी रहती तब भी यही होता। तू जो यह समझ रही है कि इसी घरमें जन्म बीतेगा—यह तेरी भूल है। तू सदा न यहाँ रह सकती है न वहा।

जस्सो गद्गद कण्ठसे बलो—मैं पैदा होतेही मर जाती तो अच्छा था।

नन्दराम— यह क्यों ? यह विचार तेरे मनमे क्यों आया। तुझे दु ख क्या है ?

जस्सोने इसका कुछ उत्तर न दिया।

नन्दराम उसकी पीठपर हाथ रखकर बोला—आखिर तू इतनी उदास क्यों है। तुझे क्या कष्ट है। कोई कष्ट हो तो कहती क्यों नहीं। यदि मैं अपने प्राण देकर भी उस कष्ट को दूर कर सकूँगा तो करूँगा। संसारमें अब तू ही मेरी सर्वस्व है। मैं तुझे दुःखी देखनेके पहले मर जाना अच्छा समझता हूँ।

जस्सोने सिर झुका लिया। उसके नेत्रोंसे आंसुओंके बड़े बडे बूँद टपकने लगे।

नन्दराम पुनः बोला—क्या बात है—तू मुझसे खुलकर क्यों नहीं कहती ?

जस्सोने अपने पिताके कन्धेपर सिर रख दिया और फूट-फूट कर रोने लगी।

नन्दराम यही कहता रहा—क्या बात है, तू बताती क्यों नहीं ? जस्सो की रोते-रोते हिचकी बंध गई। उसको इस प्रकार दुःखी

देख नन्दरामका भी हृदय उमड़ उठा। वह गद्गद कण्ठसे बोला—भगवान् जाने तुझे क्या दुःख है। तुझे सुखी करनेके लिए तो मैंने नीचसे नीच कर्म किये। तेरे ही कारण, तेरेही मोह-मायाके कारण तेरी माताके मरनेके पश्चात् मैं जीवित रहा—यदि तू न होती तो मैं भी उसीके साथ चल बसा होता। आज दिन भी जब तेरी माताकी याद आजाती है तो संसार मुझे अन्धकार-मय दिखाई पड़ता है। इस अन्धकार-मय संसारमे मेरे लिए तू ज्योति की एक ऐसी रेखाके समान है जिसके आलोकमे मैं इस जीवन-मार्गको तय कर रहा हू। तेरा फूल सा प्रफुल्लित मुख देख-देखकर मैं अपना सब दुःख भूला रहता हू। तुझे दुःखी देखकर मुझे अपना दुःख याद आता है और मेरे लिये यह संसार महा दुःखदाई होने लगता है। इस लिये बेटी, मैं तुझे एक क्षण के लिये भी दुःखी नही देखना नही चाहता। तुझे जो दुःख हो वह मुझे बता दे, मैं उसे दूर करनेकी चेष्टा करूंगा।

पिताके यह स्नेहपूर्ण वाक्य सुनकर जस्सोकी इच्छा हुई कि अपने हृदयकी सारी बात पितासे कह दे। परन्तु बहुत चेष्टा करने पर भी उसके मुंहसे एक शब्द न निकला। स्त्रियोचित लज्जाने उसके मुखमें ताला डाल दिया। जब नन्दरामने बहुत हठ की तो उसने कहा—कुछ नही, मुझे अपनी पिछली बाते और माताजी की याद आ गई थी, इसी मारे जी भर आया।

नन्दराम—यह तेरा लड़कपन है। पिछली बातों को याद करनेसे कोई लाभ नहीं।

जस्सो नेत्र पोंछती हुई बोली—सवेरे कितने बजे चलना होगा?

नन्दराम—सवेरे नौ बजे गाड़ी जाती है। यहाँसे आठ बजे चल देना होगा। आओ जल्दी जल्दी कपडे बांध ले, सवेरे उठना है—अधिक जागना ठीक नहीं।

यह कहकर नन्दराम पुनः वस्त्र इत्यादि बाँधनेमे व्यस्त हो गया। जस्सो भी उसकी सहायता करने लगी।

आध घण्टे पश्चात् जस्सो असबाब बँधवानेसे छुट्टी पा गई।

जस्सो अन्तःपुर जाते समय रामनाथके कमरेके पाससे होकर निकली। कमरेकी खिड़कीके पास पहुचकर उसने अपनी चाल धीमी कर दी और खिडकीसे कमरेमे झांका। कमरेमे लेम्पका प्रकाश फैला हुआ था। जस्सोने देखा—रामनाथ कुर्सी पर बैठे हैं। उनकी दृष्टि कमरेकी छतकी ओर लगी हुई है। जस्सो खिडकीके पास ठिठुक गई। उसका कलेजा धडकने लगा। रामनाथको देखकर उसके दुखी हृदयमें पुनः ठेस लगी। जिस भावना को उसने बलात् हृदयमे दबानेकी चेष्टा की थी, वह फिर जागृत हो गई।

सहसा रामनाथ उठकर टहलने लगे। कमरेमे एक दो चक्कर लगाने के पश्चात् उन्होंने घडीकी ओर देखा। घडीमें नौ बजनेमें पाँच मिनिट शेष थे। घड़ी देखकर रामनाथके मुखसे निकला—ओफ़। अब कुल ११ घण्टे और रह गये। आह। 'सजन सकारे जायगे नैंन मरेंगे रोय। विधना ऐसी रैंन कर भोर कभी ना होय।'

रामनाथकी दशा देखकर और उनकी बात सुनकर जस्सोके अन्त-स्तलसे एक मर्म भेदी 'हाय' निकली और नेत्रोंसे आँसु टपकने लगे। वह खिड़कीके पासही दीवारके सहारे विह्वल सी होकर खड़ी हो गई।

जस्सोके कण्ठ-स्वरका क्षीण शब्द रामनाथके कानोंमे पहुंचा। वह चौंक पडे और उन्होंने खिड़कीकी ओर देखा। परन्तु कदाचित उन्हे कुछ दिखाई न पडा। अतएव वह खिडकीके पास आये और उन्होंने बाहरकी ओर झांका। बाहर अन्धेरा था। अन्धेरेमे उन्होंने जस्सोको नहीं पहचाना, उन्हे केवल एक मनुष्य-मूर्ति दीवारके सहारे खडी दिखाई पडी। रामनाथने पूछा—'कौन है?' जस्सो न बोली—वरन वहांसे धीरे धीरे खिसकने लगी। यह देखकर रामनाथको कुछ सन्देह हुआ। अतएव शीघ्रतापूर्वक उस ओर का द्वार खोलकर वह बाहर आये और पुनः बोले—'कौन जाता है, बोलना नहीं।'

जस्सोने चाहा कि जल्दीसे वहांसे निकल जाय, यह सोचकर उसने अपनी चाल कुछ तेज की। यह देखकर रामनाथ लपककर उसके पास पहुच गये और उसका रास्ता रोककर बोले—कौन है, कहां जाता है।

जस्सोने क्षीण स्वरमे कहा—मैं हू।

रामनाथ—कौन, जस्सो?

जस्सो—हूं।

रामनाथ व्याकुल हो कर बोले—तुम यहां कहां?

जस्सो—पिताजीके पाससे आ रही हू।

रामनाथ—अच्छा! इतनी रातको?

जस्सो—उनका असबाब बॅधवाने गई थी।

रामनाथ—ओ ठीक है।

दोनों थोड़ी देर तक मौन खड़े रहे, इसके पश्चात् रामनाथने कहा—

मेरी तुम्हारी ये अन्तिम भेंट है। कल तुम चली जाओगी। पता नहीं फिर तुमसे इस जीवनमें साक्षात हो या न हो।

ये शब्द कहते-कहते रामनाथका गला भर आया।

जस्सो दीवारके सहारे इस प्रकार टिक गई मानो वह ज्ञान-शून्य हो कर गिर रही है। यह देखकर रामनाथने उसे अपने हाथोंका सहारा देकर सँभाला और बोले—तुम्हारा जी खराब है—चलो जरा देर कमरे मे चलकर बैठो, जब जी ठीक हो जाय तब जाना।

जस्सो किञ्चित भयभीत होकर रामनाथके बाहुपाशसे निकलनेकी चेष्टा करती हुई बोली—नहीं मेरा चित्त ठीक है—मुझे जाने दो।

रामनाथ इसप्रकार तो मैं नहीं जाने दूँगा। तुम्हे मेरे कमरेमें चलना पड़ेगा।

जस्सो—नही, नहीं, इस समय मैं वहाँ नही जाऊँगी।

रामनाथ—क्यों, क्या मुझसे डरती हो या मुझपर विश्वास नहीं है?

जस्सोने इसका कुछ उत्तर न दिया और स्वयम्‌को रामनाथके बाहु-पाशसे निकालनेका प्रयत्न करने लगी।

रामनाथने यह देखकर जस्सोको छोड दिया और दुःखपूर्ण स्वरमें बोले—यदि तुम्हें मुझपर विश्वास नही है तो मैं हठ न करूँगा—मुझे हठ करनेका कोई अधिकार भी नहीं है। अच्छा विदा। इस जीवन में कदाचित अब साक्षात न हो। यह कहकर रामनाथ अपने कमरेकी ओर चले।

हठात् जस्सोने उनका वस्त्र पकड़ लिया। रामनाथ ठिठुक गये और उन्होंने घूमकर देखा। उसी समय जस्सो बोली—क्या रुष्ट हो गये?

रामनाथ—रुष्ट होकर तुम्हारा क्या कर लूंगा ? हां, इस बातपर दुःख अवश्य हुआ कि तुम्हे मुझपर विश्वास नहीं। तुम समझती हो कि मैं तुम्हारी एकान्तावस्थासे कोई अनुचित लाभ उठाना चाहता हूं।

जस्सो धीमे स्वरमें बोली—नहीं, ऐसा मत सोचो मुझे तुमपर पूरा विश्वास है, पर यदि कोई अन्य देख ले तो ?

रामनाथ—इस समय देखने वाला कौन है ?

जस्सो—बीबीजी आजायं तो ?

बीबीजीसे जस्सोका तात्पर्य चम्पासे था।

रामनाथने कहा—इस समय बीबीजी नहीं आतीं और तुम्हें देर थोडा लगेगी—दो बातें करके चली जाना।

जस्सो—अच्छा चलो।

आगे-आगे रामनाथ और उनके पीछे जस्सो चली। दोनो कमरेमें पहुंचे। कमरेमे पहुचकर रामनाथने द्वार बन्द कर लिया और स्वयम् कुर्सीपर बैटे—उनके सामनेही जस्सो खड़ो हो गई। थोडीदेर पश्चात् रामनाथने सिर उठाया, उनके नेत्र अश्रुपूर्ण हो रहे थे—मुख मण्डल पर विशाद छाया हुआ था। उन्होंने विषादयुक्त स्वरमे कहा—जस्सो ! क्या इसी दिनके लिए मैंने तुम्हे अपने हृदयमें स्थान दिया था ? यदि मैं जानता कि तुम इस प्रकार मन, प्राण हरण करके चल दोगी तो ··· परन्तु नहीं, इसमें तुम्हारा अपराध नहीं, यह जो कुछ किया मैंने स्वयम् किया। मैंने ही नन्दरामको उसके माता पितासे मिलानेकी चेष्टा की थी। मैंनेही······परन्तु, परन्तु मैं क्या जानता था कि तुम्हारा वियोग

इतना दुखदाई होगा। ओफ! हृदयमे आग-सी लगी हुई है। इस आगमे तन, मन भस्म हुआ जा रहा है।

जस्सो उसी प्रकार सिर झुकाये खडी रही— उसके नेत्रोंसे आँसू टपक कर उसके वक्षस्थलको भिगो रहे थे।

रामनाथ बोले—तुम्हारे चले जाने पर इस हृदयको कैसे समझाऊँगा ?

जस्सो मौन खडी रही।

रामनाथ—थोडीदेर तक जस्सोकी ओर स्थिर दृष्टिसे देखते रहे। तत्पश्चात व्याकुल होकर बोले—जाओ, मेरे सामनेसे चली जाओ— अन्यथा मैं पागल हो जाऊँगा। मैंने भूल की जो तुम्हे यहाँ लाया। जाओ, शीघ्र चली जाओ। ऐसा न हो कि मुझसे कोई चेष्टा ऐसी हो जाय जो विश्वासघात समझी जाय।

जस्सोने मुख ऊपर उठाया। लेम्पके शुभ्रालोकमे रामनाथने देखा— जस्सोके नेत्र रक्त-वर्ण हो रहे हैं। मुँह सूजा हुआ है, गाल आँसुओंसे तर हैं। यह देखकर रामनाथके हृदयमे जस्सोके प्रति दया तथा प्रेमकी इतनी प्रबल भावना उत्पन्न हुई कि वह स्वयम् को वशमे न रख सके। वह उछलकर खडे हो गये और उन्होंने जस्सोको अपने अङ्कमे ले लिया। जस्सोने भी विह्वल होकर उनके वक्षस्थल पर सिर रख दिया और कुछ क्षणोंके लिए ज्ञान-रहित-सी हो गई।

थोडी देर तक दोनों इसी प्रकार खडे रहे। हठात् जस्सोने चौंक कर कहा—अब मुझे जाने दीजिए, बहुत देर हो गई है। मेरी प्रतीक्षा हो रही होगी, ऐसा न हो कोई बुलाने निकले।

रामनाथने विषादपूर्ण स्वरमें कहा— अच्छा जाओ।

यह कहकर उन्होंने दोनों हाथोंसे जस्सोका मुख पकड़कर ऊपर उठाया और उसका माथा चूमकर उसे छोड दिया। जस्सो उनकी ओर व्याकुलता पूर्ण दृष्टि डालकर गद्गद् कण्ठसे बोली—जाती हूं।

रामनाथ भी गद्गद् कण्ठसे बोले—जाओ।

जस्सो—इस घरमे भिखारिणी बनकर आई थी और अब भिखारिणीही बनकर जा रही हू।

रामनाथ—भिखारिणी क्यों, रानी वनकर जा रही हो?

जस्सो—रानी उसी समय तक थी जब तक यहाँ थी, अब यहाँसे जाने पर फिर वही भिखारिणी।

रामनाथने इसका कुछ उत्तर न दिया, वह खसककर कुर्सीपर बैठ गये और मेज़पर सर रख दिया।

जस्सो रामनाथकी यह दशा देखकर आँचलसे आँसू पोंछती हुई धीरे-धीरे उनके पास आई और उनके पास खडी होकर उनके सिरपर अत्यन्त प्रेमपूर्वक हाथ फेरकर रुँधे हुए कण्ठसे बोली—एक भिखारिणीके लिए इतने दुःखी क्यों होते हो? ऐसी भिखारिणी तो आपके द्वार पर नित्य आया करती है, मुझे भी भिखारिणी समझकर भूल जाना। यह भिखारिणी अन्तिम भिक्षा यही मागती है कि इसे भूल न जाना।

यह कहकर जस्सो उमड़े हुए आँसुओंको रोकनेकी चेष्टा करती हुई आंचलसे मुँह छिपाकर वहाँसे धीरे-धीरे चली गई।

रामनाथ उसी प्रकार बैठे रहे।

रामनाथको रातभर नींद न आई। उनके मनमें अनेक प्रकारके

विचार चक्कर मारते रहे। जस्सोका चिर-वियोग उनके लिये असह्य हो रहा था। उन्होंने अनेक ऐसी बातें, अनेक युक्तियाँ सोचीं—जिनके अनुसार कार्य करनेसे वह जस्सोको सदैवके लिये अपनी बना सकें। एकबार तो उन्होंने यहाँतक सोच डाला कि नन्दरामकी तरह वह भी जस्सोको लेकर कहीं उड़ जायँ, परन्तु जब इस कार्यके परिणाम पर दृष्टि डालते थे तो रोमाञ्च हो आता था। न तो उनके हृदयमे इतना साहस और न वह इतने बुद्धि-भ्रष्टही हुए थे कि ऐसा कर बैठते। रात-भर वह इसी उधेड़बुनमे रहे। क्षितिज पर उषाकालका आलोक प्रस्फुटित हो गया, परन्तु वह किसी भी निश्चय पर न पहुंच सके।

उधर जस्सो भी रात भर जागती रही। बारह बजे तक तो उसे अपनी दादीके पास बैठना पड़ा। इसके पश्चात् एक बजे तक वह चम्पासे बातें करती रही। एक बजेके पश्चात् चम्पा तो सो गई, परन्तु वह जगती रही। उसके व्यथित तथा दुःखी हृदयने निद्राको पास भी न फटकने दिया।

प्रातःकाल होते ही नित्य-क्रियासे निवृत्त होकर उसने पहले स्नान किया और तदुपरान्त यात्राकी तैयारीमे लग गई।

इधर रामनाथ भी शौच इत्यादिसे निवृत्त होकर नन्दरामके पिता के पास पहुँचे। नन्दरामके पिता उस समय अपना बिस्तर बँधवा रहे थे। रामनाथने कहा—तैयारी हो रही है ?

जमींदार साहबने कहा—हाँ बाबूजी—और तैयारी तो हो चुकी, खाली बिस्तर बँधवाना था सो वह भी बँध गया।

रामनाथ—अभी तो बहुत सवेरा है।

जमींदार—रेल पर कुछ जल्दी पहुच जानेसे ठीक रहता है। भीतर भी कहला दीजिए, वह भी तैयार हो जायँ।

रामनाथ विषाद-युक्त स्वरमें बोले—वहाँ भी तैयारी हो रही है।

उसी समय नन्दराम वहाँ आ गया। नन्दरामको देखकर उसके पिताने पूछा—कहो बेटा, सब तैयार ?

नन्दराम—हाँ मैं तो तैयार हूँ, भीतरका हाल मालूम नहीं।

पिता—वहाँ भी कहला दो।

नन्दराम—कहला तो दिया है।

रामनाथ—वहाँ तैयारी हो रही है। देखिये मैं देखे आता हूँ।

यह कहकर रामनाथ अन्तःपुरकी ओर चले। हृदयमे जस्सोको एकबार और देखनेकी लालसा प्रबल हो उठी।

अन्तःपुरके द्वार पर पहुंचकर उन्होंने पुकारा—चम्पा।

चम्पाने कहा—हाँ भइया।

रामनाथ—देखो, जस्सो और उसकी दादीसे कह दो तैयार हो जावे।

यह कहते समय उनके कण्ठमे एक गोला सा अडने लगा।

चम्पाने कहा—अभी तो बहुत सवेरा है, गाडी तो नौ बजे जाती है।

यह कहती हुई चम्पा रामनाथके पास आ गई।

रामनाथ—हाँ गाड़ी तो नौ बजे जाती है, पर इन्हे तो आठ बजे यहाँसे चल देना चाहिए।

चम्पा—यहाँ तो सब तैयारी है, खाली बिस्तर बँधने हैं सो अभी ज़रा देरमें बँधे जाते हैं।

रामनाथ—तो बिस्तर बँधवा लो न, फिर कब बँधेगा ?

चम्पा—अभी बँधवाये देती हूं, पहले जरा जस्सो और उसकी दादी कुछ खा ले।

रामनाथ—हाँ, यह बहुत अच्छा सोचा, बाहर ठाकुर साहबके लिए भी कुछ भेज देना और नन्दरामको भी खिला देना।

चम्पा—हाँ, यह तो मैं पहले ही सोच चुकी हूं। भइया तुम्हारी आँखें बड़ी लाल हैं ?

रामनाथ—हाँ, रात बहुत देर तक जागा किया, बैठा बातें करता रहा, इससे लाल हो गई होंगी।

चम्पाने समझा, भइया ठाकुर साहब और नन्दरामसे बातें करते रहे होंगे। उसने कुछ उदास होकर कहा—मैं भी एक बजे तक जस्सो से बातें करती रही। वह विचारी तो रात भर पड़ी रोती रही।

रामनाथके हृदयमें पुनः ठेस लगी, आँखोंमे आँसू छलछला आये।

रामनाथ थोडी देर तक इस प्रतीक्षामे खड़े रहे कि कदाचित इधर उधर चलते फिरते जस्सोके दर्शन हो जावें; परन्तु जब ऐसी आशा न दिखाई पड़ी तब वह यह कहकर चल दिये—'मैं जाता हूँ, ठाकुर साहबके लिए कलेवा जल्दी भेज और बिस्तर-विस्तर बँधवादे।' बाहर आकर उन्होंने देखा कि उनके पिता ठाकुर साहबसे वार्तालाप कर रहे हैं।

रामनाथको देखते ही उनके पिताने कहा—रामनाथ, ठाकुर साहब के लिए कुछ चाय-पानी तो मँगवाओ।

रामनाथ—आ रहा है।

वकील साहब—उधर कोचवानसे कहलवादो कि गाड़ी तैयार करे—दोनों गाड़ियाँ जोतले। पाल्की गाड़ीमें औरतें बैठ जांयगी और फिटनमे मर्द।

रामनाथने नौकरको बुलाकर दोनों गाडी जुतवानेकी आज्ञा देदी।

रामनाथ ये सब कार्य उसी तरह कर रहे थे जिस प्रकार कोई प्राण-दण्ड पानेवाला अपने प्राण-दण्डका समस्त प्रबन्ध स्वयम् ही कर रहा हो।

अब उनके हृदयमें यह प्रश्न उठा कि वह स्टेशन तक ठाकुर साहबको भेजने जाँय या न जाँय। जस्सोके अन्तिम दर्शनोंकी लालसा तो उनसे स्टेशन तक जानेका अनुरोध कर रही थी और जस्सोके वियोगकी वेदना, जिसके कारण उनके मनमे कुछ वैराग्यकी भावना उत्पन्न हो गई थी, उनसे कह रही थी—क्यों अधिक माया मोहमे पडकर अपनी आत्माको कष्ट पहुँचाते हो, जाने दो, उसे भूल जाओ। वह तुम्हारी कौन है?

बड़ी देर तक रामनाथ इसी उधेड़बुनमे पडे रहे। एक बार तो उन्होंने यह तय कर लिया कि अब नहीं जांयगे। वहाँ जानेसे क्लेश ही होगा—कोई सुख नहीं मिलेगा। परन्तु जब गाड़ियाँ जुतकर आगईं और असबाब लादा जाने लगा तो उनके हृदयमे पुनः गुदगुदी उत्पन्न हुई। उनके मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ कि जस्सो भी उनसे प्रेम करती है। अतएव यदि वह स्टेशन तक न जांयगे तो सम्भव है उसे दुःख हो और वह यह समझे कि इतनी जल्दी उदासीन हो गये। अतएव स्टेशन तक जाना उनका कर्तव्य है। यह

ध्यान आते ही उन्होंने अपने पितासे कहा—यदि आप अनुचित न समझें तो मैं स्टेशन तक चला जाऊँ।

वकील साहब—नहीं इसमें अनुचित क्या है—चले जाओ।

रामनाथने शीघ्रतापूर्वक वस्त्र पहने और चलनेके लिए तैयार हो गये।

विदा होते समय जस्सो चम्पा तथा चम्पाकी माताके गले लगकर बहुत रोई। चम्पा और चम्पाकी माता भी रोई। नन्दरामने भी रामनाथकी माताके चरण छुए और नेत्रोंमे आँसु भरके कहा—बहूजी, इस ग़रीबको भूल न जाना।

बहूजी बोलीं—हम तो भूलेंगे नहीं, पर भाई तू भी कभी-कभी खबर लेता रहना। क्या कहें हमारी तो यही इच्छा थी कि तू और जस्सो यहीं रहती, पर क्या करें। खैर, अपने घर जा रहे हो, बरसोंके बिछुडे मिले हैं—यह बडे आनन्दकी बात है।

नन्दराम वकील साहबसे भी विदा हुआ और चलते समय उनके भी पैर छुए।

सब लोग गाड़ियोंपर बैठकर स्टेशनकी ओर चले। स्टेशनपर पहुंचनेपर ज्ञात हुआ कि गाड़ी आनेमें केवल पन्द्रह मिनिटकी देर है। रामनाथने सबको उतारकर प्लेटफार्मपर पहुंचाया। नन्दराम टिकट खरीदने चला गया। प्लेटफार्मपर पहुंचकर रामनाथ इधर उधर टहलने लगे। जस्सो तथा उसकी दादी प्लेटफार्मपर पड़ी हुई एक बेञ्चपर बैठ गई। ठाकुर साहब और उनके दोनों आदमी एक दूसरी बेञ्चपर बैठ गये।

रामनाथ ठहरते हुए उस ओर आये जिस ओर जस्सो बैठी हुई थी। उन्होंने जस्सोकी ओर देखा। जस्सोका मुख प्रतिभाहीन हो रहा था। एक क्षणके लिए रामनाथ और जस्सोकी आँखें चार हुईं; जस्सोने अत्यन्त निराश तथा उदास होकर अपना मुंह दूसरी ओर घुमा लिया। रामनाथके अन्तस्तलसे एक दीर्घ निश्वास निकली।

नन्दराम टिकिट लेकर आगया। नन्दरामके आनेके पाँच मिनिट पश्चात् ही गाडी आ गई। और सब लोग गाड़ीमें बैठ गये। जस्सो और दादी भी ठाकुर साहबके साथ ही मर्दाने इन्टरमें बिठादी गई।

सबके बैठ जानेपर नन्दराम रामनाथसे हाथ जोडकर बोला—बाबूजी, मुझसे भूल-चूकमे कोई अपराध हुआ हो तो क्षमा कीजिएगा। मैं आपका एहसान इस जन्ममे नहीं भूलूगा। आपके चरणोंसे अलग होते हुए मुझे बडा कष्ट हो रहा है। मेरी इच्छा तो यही थी कि मेरे शेष दिन आपहीकी सेवामे व्यतीत होते पर ईश्वरकी जो इच्छा है वही हो रहा है।

रामनाथ एक दीर्घ विश्वास छोड़कर बोले—हाँ, ईश्वरकी इच्छा तो पूरी ही हो रही है। परन्तु अब भी जब तुम्हारी इच्छा हो बिना सङ्कोच चले आना।

नन्दराम—हाँ सो तो मैं यहाँ अपना घर ही समझता हू।

ठाकुर साहब बोल उठे—बाबूजी, एक दफे आप हमारी कुटिया पवित्र कर दीजिएगा।

नन्दराम भी बोला—हाँ बाबूजी, एक बार तो अवश्य आइयेगा, मेरा चित्त प्रसन्न हो जायगा।

रामनाथने कहा—अच्छी बात है, आऊंगा।

नन्दराम—तो पहले चिट्ठी लिख दीजिएगा—जिससे स्टेशन पर सवारी भिजवा दी जाय।

रामनाथ—अच्छी बात है।

नन्दराम—तो कब आइयेगा ?

रामनाथ—अब यह तो अवकाश पर निर्भर है, पर आऊंगा अवश्य।

उसी समय गार्डने अपनी सीटी बजाई। रामनाथने ठाकुर साहब और नन्दरामसे कहा—बैठ जाइये गाड़ी जाती है।

नन्दराम रामनाथके पैर छूनेके लिए झुका। रामनाथ पीछे हटकर बोले—यह क्या, यह बातें मुझे पसन्द नहीं।

ठाकुर साहब बोल उठे—तो हरज क्या है—आप मालिक हैं।

रामनाथ—मालिक जब थे तब थे अब नहीं।

नन्दराम—मैं तो अब भी आपको वैसा ही समझता हूं।

दोनों रामनाथसे विदा होकर गाडीमे बैठ गये। गाडीने सीटी दी।

रामनाथकी दृष्टि पुनः जस्सोपर पड़ी। जस्सो अपना आधा मुख घूंघटमें छिपाये थी, रामनाथने देखा—जस्सो उनकी ओर स्थिर दृष्टिसे देख रही है। नेत्रोंमें आँसू भरे हुए हैं मुख शुष्क हो रहा है। बहुत कुछ धैर्य रखनेपर भी रामनाथके नेत्रोंमें आसू उमड़ ही आये।

ट्रेन चलदी, रामनाथका हृदय बैठने लगा, मानो उनका सर्वस्व उस ट्रेनके साथ जा रहा है—उन्होंने जेबसे रूमाल निकालकर आंखोंसे लगा लिया।

उधर जस्सोको ऐसा प्रतीत हुआ कि उसके प्राण वहीं रह गये और उसका निर्जीव शरीर गाडीमें जा रहा है। उसने खिडकीपर सिर धर दिया और उसके अश्रु-भार-थकित नेत्रोंसे सावन भादोंकी वर्षाकी भाँति बड़े-बडे बूँद टपकने लगे।

१५

उपरोक्त घटना हुए तीन मास व्यतीत हो गये। बाबू रामनाथ इस समय इलाहाबादमे एल० एल० बी० तथा एम० ए० साथ-साथ पढ़ रहे थे। यद्यपि जस्सोको गये हुए छः महीने व्यतीत हो गये थे, परन्तु अब भी उनके हृदयमें जस्सोकी मूर्ति स्पष्ट विद्यमान थी। समयके इतने दिनोंमे भी वह किंचिन्मात्र भी धुधली नहीं हुई थी। रामनाथ हृदयसे यह चाहते थे और इसके लिए चेष्टा भी करते थे कि वह जस्सोको भूल जाय, परन्तु इसमे उन्हें सफलता नहीं मिल रही थी। दिनमे अध्ययनमें लगे रहने तथा मित्रोंके साथ घूमते फिरते रहनेके कारण उनको जस्सोका स्मरण नहीं होता था, परन्तु रात्रिमें शय्यापर लेटते ही उनके सन्मुख जस्सोकी मूर्ति—वह मूर्ति जो ट्रेन चलते समय उन्होंने देखी थी—उनकी आँखोंके सामने उपस्थित हो जाती थी। उस मूर्तिको देखकर वह व्याकुल हो जाते थे। उस ओरसे अपना ध्यान हटानेके लिए वह कोई पुस्तक उठाकर पढ़ने लगते थे, परन्तु थोड़ी देरतक पढ़ने पर पुस्तकके अक्षर लुप्त हो जाते थे और पृष्टपर वही मूर्ति प्रस्फुटित हो उठती थी। रामनाथ को कभी-कभी अपनी इस दुर्बलता पर बड़ा क्रोध आता था। परन्तु इसके अतिरिक्त और वह कुछ नहीं कर सकते थे। जस्सोको भूलना उन्हे एक असम्भव कार्य प्रतीत हो रहा था।

एकदिन प्रातःकालकी डाकसे उन्हे एक पत्र मिला। वह पत्र

कानपुरके पतेपर भेजा गयाथा और कानपुरसे उनके पिताने उनके पास भेजा था। रामनाथने पत्र खोलकर पढ़ा। पत्रमें लिखा था—

"श्रीमान बाबू रामनाथजीको चन्द्रपुरसे दास नन्दरामका प्रणाम पहुंचे। आगे यहां सब प्रकारसे कुशल है। आशा है आप भी कुशल पूर्वक हैं। बाबूजी, आपने हमारी कुटिया पवित्र करनेका वादा किया था; पर आप अभी तक नहीं आये। क्या कारण है? क्या आप मुझे भूल गये। आप जैसे सज्जन तथा प्रेमी पुरुषसे मुझे यह आशा नहीं है कि आप अपने सेवकको भूल जाँय। मेरी प्रार्थना है कि आप एक दिनके लिये यहां हो जाय। आशा है आप मेरी प्रार्थना अस्वीकार नहीं करेंगे। जस्सो आपको बहुत याद करती है। चम्पा बीबीकी चिट्ठी जस्सोके पास आती रहती है। चम्पा बीबीकी चिट्ठीसे पता लगा कि आप आजकल इलाहाबादमें पढ रहे है। मुझे आपका इलाहाबादका पता मालूम नहीं, इस लिए मैं कानपुरके पते पर ही यह चिट्ठी भेज रहा हूं। आशा है वहासे यह आपके पास पहुंच जायगी। पिताजी आपको 'जयरामजी' कहते है। बाबूजी, मैं एकबार फिर प्रार्थना करता हूं कि एक बार तो अपने दासको कुटिया पवित्र कर जाइये। जिस दिन और जिस गाड़ीसे आप आवे उसकी सूचना मुझे भेज दे जिससे स्टेशन पर गाड़ी भेज दी जाय।"

पत्र पढ़ चुकने पर रामनाथको पत्रका केवल एक वाक्य याद रहा 'जस्सो आपको बहुत याद करती है।' यह वाक्य दिन भर उनके मस्तिष्कमें चक्कर खाता रहा। रातको जब शय्यापर लेटे तो पुनः पत्र निकालकर पढ़ा। उक्त वाक्यपर पहुंचकर उनकी दृष्टि रुक गई। वह

बारबार उसी वाक्यको पढ़ने लगे—'जस्सो आपको बहुत याद किया करती है।' इस पत्रके आनेके पूर्व रामनाथके हृदयमें कई बार जस्सोको देखनेकी लालसा उत्पन्न हुई थी, परन्तु उन्होंने इस लालसा को बलात् हृदय ही मे दबा दिया था। किन्तु आज पत्रके उक्त वाक्य पढकर उनके हृदयमे जस्सोको देखने की लालसा पुनः बलवान हो उठी। इस लालसाके बलवान हो उठनेका मुख्य कारण यह था कि 'जस्सो आपको बहुत याद किया करती है' इस वाक्यसे उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि जस्सो उनके देखनेके लिये व्याकुल है। जस्सोकी व्याकुलताका ध्यान आतेही उनकी अधीरता बढ गई। वह अपनी लालसाका दमन कर सकते थे, अपनी इच्छाओंका खून कर सकते थे, परन्तु जस्सोकी लालसाका खून करना उनके लिये एक ऐसी बात थी जिसके ध्यान मात्रसे उनका हृदय व्यथित होने लगता था। उन्होंने सोचा—'अब मुझे वहा अवश्य चलना चाहिए। इसलिए नहीं कि मैं जस्सोको देखना चाहता हूँ वरन इस लिए कि जस्सो मुझे देखना चाहती है। यदि मैं वहाँ न गया तो उस बेचारीको कष्ट होगा। वह समझेगी कि रामनाथ मुझे भूल गये। इससे उसकी क्या दशा होगी? नहीं, मैं जस्सोकी दृष्टिमें निठुर नहीं बनूगा। मैं अपनी निष्ठुरतासे उसको व्यथित नहीं करूँगा। वह बेचारी परतन्त्र है, कहीं आ-जा नहीं सकती, परन्तु मैं इस सम्बन्धमें स्वतन्त्र हूं। अतएव मेरा यह कर्तव्य है कि मैं वहां केवल जस्सोको प्रसन्न करनेके लिए चलूँ। आह! जस्सोको एक क्षणके लिए प्रसन्नता पहुंचाने, उसे सुखी करनेके लिए मैं अपने प्राण तक दे सकता हूं।

रामनाथ रातमें बहुत देर जागते रहे और इसी सम्बन्धमें सोच विचार करते रहे। अन्तमे उन्होंने चन्द्रपुर जानेका पक्का निश्चय कर लिया। प्रातःकाल उन्होंने अपने एक सहपाठी मित्र रामचन्द्रशर्मासे कहा—अगले सप्ताहमे तीन दिन की छुट्टी है, इन छुट्टियोंमे कहीं देहातमें चलना चाहिए।

रामचन्द्रने कहा—देहातमे। देहात जाकर क्या करोगे?

रामनाथ—वाह। देहातहीमे तो प्रकृतिकी पूर्ण छटा देखनेको मिलती है। चलो बडा आनन्द रहेगा। आजकल सरसों फूली होगी, चारों ओर बसन्तही बसन्त दिखाई पडेगा।

रामचन्द्र—तो एक शर्त पर चल सकता हू।

रामनाथ—वह क्या?

रामचन्द्र—वहा शिकार खिलानेका प्रबन्ध कर दो तो चलू।

रामनाथ—बस इतनोही सी बात? चलिये, शिकारकी वहां क्या कमी है। चाहे रात दिन शिकार खेलिये। बल्कि यदि बन्दूक न हो तो वहा बन्दूक भी मिल सकती है।

रामचन्द्र—बन्दूक तो मेरे पास है।

रामनाथ—तो बस आप बेखटके चलिये।

रामचन्द्र—एक आध आदमी और साथ ले लूँ?

रामनाथ—यह तुम्हारी इच्छाकी बात है।

रामचन्द्र—मेरे एक मित्र है, वह शिकारके बड़े प्रेमी है, उनके पास राइफल है—कहो तो उन्हे भी साथ लेलूं?

रामनाथ—क्या हर्ज है, ले लो।

रामचन्द्र—तो बस ठीक रहा। किधर चलोगे ?

रामनाथ—चन्द्रपुर एक गांव है, वहांके ज़मींदार मेरे मित्र हैं, उन्हींके यहां चलेंगे।

रामचन्द्र—तब तो सब तरहका आराम रहेगा।

रामनाथ—और नहीं तो क्या। मैं ऐसा बेवकूफ़ थोडा ही हूं कि बिना अच्छा ठिकाना हुए ऐसे जाडेमे वहां मरने जाऊं।

रामचन्द्र—तब तो आनन्द ही आनन्द है। अब तो अपने राम सौ काम छोडके चलेंगे। तो किस रोज चलोगे ?

रामनाथ—शनिश्चर, इतवार, सोमवार तीन दिनकी छुट्टी है। शुक्रवारको यहांसे चलो—या शनिश्चरको सवेरे चलो और सोमवारको किसी ट्रेनसे लौट आओ।

रामचन्द्र—शुक्रवारको तो लेक्चर्स होंगे, उस दिन कैसे चल सकते हो ?

रामनाथ—शामको कोई ट्रेन जाती हो तो चल सकते हैं।

रामचन्द्र—यहांसे कितनी दूर है ?

रामनाथ—कुल तीन स्टेशन।

रामचन्द्र—तब तो दूर नहीं है—यदि पांच बजे तक कोई ट्रेन जाती हो तो पहुंच सकते हैं। अच्छा ज़रा टाइम-टेबुल तो देखो। चन्द्रपुर स्वयम् स्टेशन है ?

रामनाथ—नहीं स्टेशन तो दूसरा है।

यह कहकर रामनाथने स्टेशनका नाम बता दिया और तत्पश्चात्

टाइम-टेबुल उठाकर देखा। टाइम-टेबुल देखकर उन्होंने कहा—ठीक, साढ़े चार बजे एक गाड़ी जाती है।

रामचन्द्र—तो बस शुक्रवारको इसी गाड़ीसे चलो।

रामनाथ—अच्छी बात है। आज मैं चिट्ठी लिखे देता हूं, शुक्रवारको स्टेशन पर सवारी आ जायगी।

इस प्रकार रामनाथने चन्द्रपुर जानेका पक्का निश्चय कर लिया और नन्दरामको दिन तथा समयकी सूचना, पत्र द्वारा, भेज दी।

१६

शुक्रवारको रामनाथने रामचन्द्र तथा उनके दूसरे मित्र सहित साढे चार बजेकी गाडीसे चन्द्रपुरके लिए प्रस्थान किया। इनके साथ केवल इनके बिस्तर और एक दोनली बन्दूक तथा एक राइफ़ेल थी। ६ बजेके लगभग ये तीनों व्यक्ति अपने निश्चित स्टेशन पर जा पहुंचे। स्टेशन पर स्वयम् न ... म दो बहेलियां, जिनमे पश्चिमी बैल जुते हुए थे, लिये उपस्थित ... दो लालटेनें तथा बन्दूक भी थी। नन्दराम रामनाथको ... उनके पैर छूनेके लिए आगे बढा। रामनाथने पीछे हटकर ... दराम। मैंने तुमसे कहा था कि यह बात मुझे पसन्द नही ... तुम मानते नहीं। मुझे इससे दुःख होता है।

नन्दराम हाथ जोडकर बोला- ... प मेरे मालिक ...।

रामनाथ उसे रोककर बोले—। ... वही बात। मैं तुम्हे अपना मित्र समझता हूं, मालिक किस चिड़ियाका नाम है। ऐसी बात अब कभी मत कहना, अन्यथा मुझे दुःख होगा।

नन्दरामके साथ बन्दूक देखकर रामनाथने कहा—यह बन्दूक क्यों लाये ?

नन्दराम—बात यह है कि रातका वास्ता है और जंगलका रास्ता, सौ दोस्त सौ दुश्मन। इसलिए हथियार पास रहना अच्छा होता है।

रामनाथ—बन्दूक़ तो हमारे साथ एक छोड़ दो-दो हैं।

नन्दराम—अब यह मुझे क्या मालूम था। ऐसा जानता तो न लाता

रामनाथने अपने दोनों साथियोंकी ओर संकेत करके कहा—यह मेरे मित्र पंडित रामचन्द्र शर्म्मा है, मेरे साथ यह भी वकालत पढ रहे है और यह इनके मित्र बाबू राधाचरण हैं, आप इलाहाबादके रईस है।

नन्दरामने दोनों सज्जनोंको प्रणाम किया और बोला—मेरे बड़े भाग्य हैं जो ऐसे-ऐसे बडे आदमी मेरी कुटिया पवित्र करने आये हैं।

सब लोग बहेलियों पर बैठकर चन्द्रपुरकी ओर चले। रामनाथ ने नन्दरामसे पूछा—तुम्हारा गाँव यहाँसे कितनी दूर है।

नन्दराम—यहाँसे दो कोस है। आध घण्टेमे पहुच जाँयगे।

रामनाथ—भाई नन्दराम। मेरे ये दोनों मित्र शिकारके प्रेमी हैं और ये शिकार खेलनेके लिए ही आये है। इनको शिकार खेलानेका प्रबन्ध करना पडेगा।

नन्दराम—शिकार यहाँ बहुत है। हिरन, सुअर, बत्तख, मुर्गाबी जिसे इधर सवन कहते है, हरियल सब मिलेगे। जमनाकी तराईको ओर तेंदुवे भी कभी-कभी मिल जाते है। शिकारकी कोई कमी है ? चाहे दिन-रात शिकार खेले।

रामनाथ रामचन्द्रसे बोले—भाई तुम्हारा काम बन गया। अब कल प्रातःकालसे ही शिकार खेलो।

रामचन्द्रने रामनाथसे कहा—और तुम नहीं खेलोगे ?

रामनाथ बोले—कौन मैं? अजी राम भजो। मुझे हिंसासे घृणा है। न मैं मांस खाऊं, न शिकार खेलूं।

रामचन्द्र—कण्ठी बांध ली है क्या?

रामनाथ—हृदयमे कण्ठी होनी चाहिए। ऊपरसे कण्ठी बांध भी ली और हृदयमे दया न हुई तो ऐसी कण्ठी पर लानत है।

रामचन्द्र—तुम कैसे क्षत्री हो?

रामनाथ—हम जैसे है अपने भले है। यदि हिरन और चिडियां मारनेमे ही क्षत्रीपन रह गया है तो ऐसे क्षत्रीपनको दूरहीसे प्रणाम है। क्षत्रीपनको एक ही कही। भला चिड़ियां मारनेमें कौन सी वीरता और क्षत्रीपन है? हां शेर मारो, चीता मारो तो एक बात भी है।

रामचन्द्र—शेर चीते मिलते कहां है? मिले तो शर्तिया मारें।

रामनाथ—सूरत देखलो तो धोती बिगड जाय—शेर मारना हसी-खेल नहीं है।

रामचन्द्र—तुम तो जैसे स्वयम् बोदे हो वैसा ही सबको समझते हो।

रामनाथ—हां तुम्हारी तरह चिडियां मारें तो बोदे न रहे।

रामचन्द्र—तुम चिडियोंका स्वाद क्या जानो। मांस खाते होते तो जानते।

रामचन्द्रके दूसरे साथी दूसरी बहेलीसे बोल उठे—यार तुम व्यर्थ बहस करते हो इसमें क्या? यह तो अपना-अपना सिद्धान्त और अपनी-अपनी रुचि है।

रामनाथ—बिलकुल ठीक है। मुझे मांससे स्वाभाविक घृणा है। जब मैं मांस नहीं खाता तब व्यर्थ हत्या करनेसे लाभ ?

रामचन्द्रके मित्र बोले—सही है।

इसी प्रकारकी बातें करते हुए लगभग पौन घण्टेके अन्दर सब लोग चन्द्रपुर पहुंच गये। बहेलियां नन्दरामके विशाल भवनके सन्मुख जाकर खडी हो गईं। नन्दरामके पिता ठाकुर अर्जुनसिंह प्रतीक्षा कर रहे थे। बहेलियोंके आनेका शब्द सुनकर वह बाहर आ गये। रामनाथने उन्हे प्रणाम किया। अर्जुनसिंह बोले—आपको बडा कष्ट हुआ।

रामनाथ सहास्य मुखसे बोले—कष्ट किस बातका। आपके यहां कष्टका क्या काम ?

अर्जुनसिंह—आपकी बडी दया है। हम तो समझे थे कि सायत आप कष्टके विचारसे न आवें।

रामनाथ—प्रथम तो कष्ट ही नहीं और यदि कष्ट होता भी तब भी मैं आपकी आज्ञाका उल्लंघन नहीं कर सकता था।

अर्जुनसिंह—यह आपकी लायकी है जो आप ऐसा सोचते हैं। हम तो आपके सेवक हैं। नन्दराम। बाबू साहबोंका असबाब बडे कमरेमें पहुंचवाओ। आइये बाबूजी, आप मेरे साथ आइये।

अर्जुनसिंह आगे-आगे चले उनके पीछे ये तीनों व्यक्ति चले। अर्जुनसिंह उन्हे एक बड़े कमरेमे ले गये। कमरेमे भूमि पर एक बड़ी दरी बिछी हुई थी। एक ओर तीन निवाड़के पलंग बराबर बराबर पड़े हुए थे। दूसरी ओर कोनेमे एक मध्याकार मेज रक्खी थी और उसपर एक लेम्प रक्खा हुआ था। मेज़के पास चार कुर्सियां

पड़ीं हुई थीं। कमरा पक्का बना हुआ था। रामनाथने अपने दोनों साथियोंका परिचय ठाकुर साहबसे कराया। इसके उपरान्त सबने अपने-अपने कोट उतारकर खूँटियों पर टाँगे। उसी समय दो आदमी इनके बिस्तर कमरेमे ले आये।

ठाकुर साहबने उन आदमियोंसे कहा—तीनिउ बिस्तर खोलके पलंग पर बिछाय देओ। नन्दराम कहाँ है ?

एक आदमी बोला—भीतर गे हैं।

ठाकुर—अच्छा जिउरखना तेनी कहि देओ, हाथ मुह धोवैं खातिर गरम पानी लै आवैं।

रामनाथ बोल उठे—सब आजायगा, आप क्यों कष्ट करते हैं। यह तो हमारा घर है, हमे जो आवश्यकता होगी माँग लेंगे।

ठाकुर साहब दाँत निकालकर बोले—हमारे ऐसे भाग्य कहाँ जो आप लोगोंकी सेवा करनेको मिले। हमे तो इसीमे सुख मिलना है।

थोड़ी देर पश्चात् नन्दराम आया। उसके साथ एक कहार था जो एक बड़े बर्तनमें गर्म पानी लिए हुए था। नन्दरामने रामनाथसे कहा—बाबूजी, गरम पानी हाजिर है हाथ मुंह धो डालिये।

तीनों व्यक्तियोंने हाथ मुँह धोया। इसके पश्चात तीनों आदमी कुर्सियोंपर बैठ गये। एक कुर्सीपर ठाकुरसाहब भी बैठ गये। अर्जुन सिंहने नन्दरामसे पूछा—भोजनमें क्या देर है ?

नन्दराम—देर कुछ नहीं, तैयार ही है।

रामनाथ अपनी रिस्टवाच देखकर बोले—अभी तो शाम ही हुई है, साढ़े सात बजा है।

नन्दराम—भोजन तैयार ही है जब आपकी इच्छा हो कह दीजियेगा ।

रामनाथ मुस्कराकर बोले—तुम्हें इन बातोंके लिए चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं। हमें जो आवश्यकता होगी। स्वयं मांग लेंगे। हां ठाकुर साहब, हमारे ये दोनों मित्र शिकारके बड़े शौकीन हैं और इसी वास्ते हमारे साथ आये हैं। इसलिए इनको शिकार खिलानेका प्रबन्ध करा दीजिए।

अर्जुनसिंह—हां हां शिकार जितना जी चाहे खलें, शिकारकी क्या कमी है।

रामचन्द्र बोल उठे—हम कल मुंह अंधेरे ही शिकारके लिए जाना चाहते हैं। यहां कोई झील है ?

अर्जुनसिंह—हां झील भी है। झीलमें सवन, बत्तख, सुर्खाब बहुत मिलेंगे। सबेरे के बजे जाइयेगा। सवन तो सूरज निकलनेके पहले ही मिलेंगे।

रामचन्द्र—इसी लिए तो मुंह अंधेरे जाना ठीक है। बस यही कोई चार-पांच बजे। झील यहांसे कितनी दूर है ?

नन्दराम बोल उठा—यही कोई डेढ़-दो मील है।

रामचन्द्र—तो बस चार बजे चल देना चाहिए। (अपने साथीकी ओर देखकर) क्यों भई ? उनके साथीने कहा—हां बस चार साढ़े चार बजे तक चल देना चाहिए। दिन चढ़े तक झीलपर चिड़ियोंका शिकार खेलेंगे उसके बाद हिरनका शिकार होगा।

अर्जुनसिंहने पुकारा—अलगुवा रे।

अलगुवा कमरेके बाहर ही बैठा था। अतएव वह तुरन्त सामने आकर बोला—काहे मालिक ?

अर्जुनसिह—तनो गुडैतवाका गोहराय ले (पुकारले)।

थोडी ही देरमे एक पासी हाथमे लट्ठ लिये आ पहुचा।

अर्जुनसिह उससे बोले—सुनरे अँगनुवाँ। सवेरे ई बाबूलोग सिकार खेलै जैहैं। एहिते सवेरे चार बजे आठ आदमी लैके हाजिर रह्यो—समझेओ। एहि माँ फरक न पडे, नाहीं चरसा उडाय दीन जैहैं।

अँगनुवाँ बोला—बहुत अच्छा मालिक हम तीन बजे आय जाइबे।

अर्जुनसिह—बाबू साहबोंको खूब नीकी तना (तरह) सिकार खिलयो।

अँगनुवाँ—मालिक सुअरका सिकार खेलैं तो रातका बारह एक बजे हमरे साथ चलें—रात माँ सुअर बहुत आवत है।

रामचन्द्र बोले—भई आज तो नहीं, कल रातमे सुअरका शिकार खेलेंगे।

अँगनुवाँ—बहुत अच्छा सरकार! तो मैं तीन बजे हाजिर होइजैहौं।

यह कहकर अँगनुवाँ चला गया।

नन्दराम अपने पितासे मुस्कराकर बोला—देखा, सुअरको कैसी जल्दी कहा—

अर्जुनसिह—हाँ सुअर खातिर तो सारे प्रान दीने फिरत हैं।

रामनाथने पूछा—क्या बात है ?

नन्दराम बोला—ये पासी सुअरका शिकार बहुत खेलते हैं। सोई इस समय भी कहा। जानते हैं कि सुअर मारा जायगा तो हमींको मिलेगा।

रामचन्द्र हां, ये लोग शिकारके बड़े शौकीन होते है और सुअर पर तो जान देते है। खैर कल रातमे इनके लिए एकाध सुअर मार देंगे।

अर्जुनसिंहने कहा—कहिये तो एक बहेली भी साथमे करदी जाय।

रामचन्द्र—बहेली क्या होगी ?

अर्जुन०—सायत सिकारमे आप लोग थक जाय तो लौटते समय उसीपर बैठकर चले आइयेगा।

रामनाथ बोल उठे—हां हां ठीक तो है।

रामचन्द्र—नहीं जी बहेलीकी क्या आवश्यकता है। बहेली हमारे साथ कहां-कहां फिरेगी।

नन्दराम—नहीं, रहेगी तो आपके साथही, खाली मील डेढ मील का फरक रहेगा—सो भी वहा, जहां बहेली जानेकी राह न होगी। जहां राह होगी वहां आपके पीछे-पीछेही रहेगी।

रामाचन्द्रने अपनी मित्रकी ओर देखकर पूछा—क्यों भई, क्या राय है।

वह बोले—मुझे तो कोई आवश्यकता नहीं। मुझे तो तुम जानते ही हो—पन्द्रह-बीस मीलतक चल सकता हूं। हां, तुम अपने लिये सोच लो।

रामचन्द्र—तो मैं भी कमजोर नहीं हू।

रामनाथ बोले—यहा कमज़ोरी और शहजोरी का प्रश्न नहीं है, आरामका प्रश्न है। बहेलीसे आराम रहेगा।

नन्दरा—हा यह बात तो पक्की है।

रामचन्द्र बोले—अच्छी बात है, यदि कुछ अड़चन हा तो ।

नन्दराम—अजी सरकार अड़चन काहेकी—एक क्या चार बहेलीका प्रबन्ध हो सकता है। उसमे थोड़ा खानेको भी रख दिया जायगा। जब इच्छा हो जलपान कर लीजिएगा।

रामनाथ—हा, यह तुमने खूब सोचा—खानेको अवश्य रख देना, नहीं मारे भूखोंके मर जायगे।

रामचन्द्र—कौन? इस धोखेमें न रहियेगा। हम लोग है शिकारी, बारह घण्टे तक भूखे रह सकते है—और शिकार मिल जाय तो वहीं भून खाय।

अर्जुनसिंह हँसकर बोले—हा साहब, शिकारीके माने यही है।

यह कहकर अर्जुनसिंहने उसी समय बहलवानको बुलाकर कहा—देखो, सबेरे चार बजे बहली जोतके दरवाजेपर लै आयो—ई बाबू लोग शिकार खेलै जैहै, सिकार मा इनके साथ-साथ रह्यो। और सुनो, अपने खातिर खायका राख लीन्ह्यो—न जाने कब लौटब होय।

यह सब प्रबन्ध ठीक हो जानेके पश्चात् नन्दरामने पूछा—कहिये, भोजन मँगवाऊँ?

अर्जुनसिंह बोल उठे—अब तो भोजनका समय हो गया। अब क्या पूछना है—मँगा लेओ।

नन्दराम—तो क्या यहीं ले आऊँ ?

अर्जुनसिंह—यहा क्या लाओगे, वहाँ दलानमे आसन बिछवाओ।

पन्द्रह मिनिटके पश्चात् नन्दराम आया और बोला—चलिये, भोजन आगया।

तीनों व्यक्ति भोजन करने गये। दालानमे तीन आसन बराबर बिछे थे और उनके सामने कलईदार मुरादाबादी थाल भोजन सामग्रीसे भरे हुए रक्खे थे। भोजन सामग्रीमे पूरी-कचौरी, तीन तरहका साग, पापड, मलाई, रबड़ी, अचार तथा रायता था। रामनाथ थालकी ओर ध्यानसे देखकर बोले—बडा तकल्लुफ किया है।

नन्दराम—अजी सरकार तकल्लुफ हो कहाँ सकता है। शहरमे जो चीजे मिलती है, उनके यहा दर्शन भी नहीं होते।

रामचन्द्र बोल उठे—अब इससे अधिक और क्या होगा। शहर-वाले कुछ मोती थोडाही चुगते है। सच पूछो तो शहरवालोंको ऐसा शुद्ध, स्वच्छ भोजन नसीब नहीं होता।

तीनों आदमियोंने भोजन करना आरम्भ किया। भोजन करते जाते थे और प्रशंसा करते जाते थे। रामचन्द्र बोले—घी कितना सुन्दर है—ऐसा घी शहरमें देखनेको नहीं मिलता।

रामनाथ—मलाई देखिये—ऐसी मलाई शहरमे कहाँ—वहां तो वही आरारोट चलता है।

रामचन्द्रके साथी बोले—इन चीज़ोंका सुख तो यहीं है।

रामनाथ—सब चीजें स्वादिष्ट बनी हैं।

रामचन्द्र—क्या बात है।

नन्दराम रामनाथसे बोला—ये सब जस्सोने अपने हाथसे बनाया है। किसी दूसरे को हाथ नहीं लगाने दिया। पांच बजेसे इसीमें जुटी हुई थी।

रामनाथने कहा—राम, राम, बेचारीको बड़ा कष्ट हुआ।

नन्दराम—कष्ट। आज जैसी प्रसन्न तो जबसे वह यहाँ आई, तबसे नहीं दिखाई पडी। जबसे उसने सुना कि आप आवेंगे तबसे दिन गिना करती थी।

रामनाथने मनमें सोचा—इस भोजनमे प्रेम की भी पुट है—तभी यह इतना स्वादिष्ट बना है। प्रकट रूपमे वह नन्दरामसे बोले—मेरी ओरसे उसे बहुत बहुत धन्यवाद दे देना।

नन्दराम मुस्कराकर बोला—कल सबेरे उससे आपकी भेंट होहीगी उस समय आप खुद धन्यवाद दे दीजियेगा। और उसे धन्यवाद देने की आवश्यकता ही क्या है—यह सब तो उसने आपहीके घरमे सीखा है।

'कल सबेरे आपकी भेंट होगी।' इस वाक्यसे रामनाथका शरीर रोमाञ्चित हो उठा।

भोजन करनेके पश्चात् सबलोग पुनः कमरेमे आ बैठे। एक नौकर तश्तरीमें पान-इलायची ले आया। सबने पान खाये और परस्पर वार्त्तालाप करने लगे।

अर्जुनसिंह और नन्दराम भी भोजन करने चले गये। एकान्त होनेपर रामचन्द्रने पूछा—मालूम होता है यह नन्दरामसिंह कुछ दिनों आपके यहाँ रह चुका है।

रामनाथ—हाँ यह और इसकी लड़की दोनों रह चुके हैं।

सोते समय तीनों व्यक्तियोंके लिए दूध आया। दूध पीकर सब लोग लेट रहे।

रामनाथके दोनों मित्र तो लेटतेही सो गये, परन्तु रामनाथ बड़ी देर तक जागते रहे और यह सोचते रहे कि कल जस्सोसे भेट होनेपर उससे क्या कहेंगे। नन्दरामके वही वाक्य उनके मस्तिष्कमें गुञ्जार करते रहे—'आज जैसी प्रसन्न तो, वह जबसे यहाँ आई तबसे नहीं दिखाई पडी। जबसे उसने सुना कि आप आवेंगे तबसे रोज दिन गिना करती थी।'

रामनाथके लिये ये वाक्य कितने मधुर थे, उनके लिए इनमें कितना सुख अन्तर्निहित था। ज्यों-ज्यों वह इन वाक्यों पर मनन करते थे त्यों-त्यों उनके हृदयमे जस्सोके दर्शन करनेकी उत्कण्ठा बढती जाती थी। अन्तमें इसी प्रकार विचार करते-करते वह सो गये।

१७

प्रातःकाल रामनाथ सोकर उठे। रामचन्द्र तथा उनके मित्र सवेरे मुँह-अन्धेरेही शिकारके लिए चले गये थे। रामनाथने शौचादिसे निवृत्त होकर स्नान किया। नन्दरामने पूछा—बाबूजी, चाय पीजियेगा या दूध?

रामनाथने कहा—चाय हो तो अच्छा है नहीं तो दूधही सही।

नन्दराम—चाय भी बन सकती है—मैं अभी तैयार करता हूं।

थोडी देरमे चाय, थोडा हलुवा और कुछ मिठाई रामनाथके सन्मुख आई। रामनाथने किञ्चित मुस्कराकर कहा—चायके साथ हलुवेकी क्या आवश्यकता थी—ख़ाली थोडी मिठाई काफ़ी थी।

अर्जुनसिह बोले—जो इच्छा हो खा लीजिये बाकी रहने दीजिए।

चाय पीनेके पश्चात् नन्दरामने पूछा—बाबूजी, रसोइ कैसी बनवाई जाय—कच्ची या पक्की?

रामनाथ—कच्ची बनवाओ, इस समय पक्की का क्या काम?

नन्दराम—मैंने केवल इसलिए पूछा कि शायद आप हमारे यहाँ की कच्ची न खावें।

रामनाथ—क्यों, न खानेका कारण? अरे भाई तुम भी क्षत्री, हम भी क्षत्री—खत्री भी तो क्षत्रीही हैं—फिर क्या हर्ज है?

अर्जुनसिह—बहुत लोग इसका विचार करते है इसलिए पूछना पड़ा।

रामनाथ—मैं इतनी संकीर्णता पसन्द नहीं करता। मैं स्वयम् तो हिन्दू जाति मात्रके हाथका बना हुआ भोजन खा सकता हूं—हा शुद्धता तथा स्वच्छतापूर्वक बनना चाहिए—मैं केवल दो बातें देखता हू—एक तो भोजन बनानेवाला हिन्दू हो और भोजन शुद्ध तथा स्वच्छ हो—बस।

अर्जुनसिह बोले—बाबूजी खता माफ़ कीजिएगा—कोरी-चमार भी तो हिन्दूही है।

रामनामनाथ—हा हैं, परन्तु उनके यहा इतनी शुद्धता तथा स्वच्छता नहीं हो सकती जितनी कि ब्राह्मण, क्षत्रियों तथा वैश्योंके यहा होती है।

अर्जुनसिह—मान लीजिये कोई चमार खूब शुद्धतापूर्वक और सफाईके साथ बनावे तो क्या आप खा लेंगे?

अब रामनाथ बडे असमंजसमे पडे। यद्यपि उन्हे स्वयम् ऐसा करनेमे कोई आपत्ति नहीं थी, परन्तु उनके हृदयमें इतना आत्मबल नहीं था कि वह इस बातको एक कट्टर और छूताछूता का विचार रखनेवाले हिन्दूके सामने स्वीकार कर लेते। उन्होंने कुछ क्षणों तक सोचकर कहा—बात यह है कि होना तो ऐसाही चाहिये कि भोजन शुद्धता तथा स्वच्छतापूर्वक बनाया जाय तो बनानेवाला चाहे चमार ही क्यों न हो उसे ग्रहण करना चाहिए। आप यदि समाचार-पत्र पढ़ते होंगे तो आपको यह पता अवश्य होगा कि आजकल अछूतोद्धार का आन्दोलन चल रहा है और अनेक अवसरोंपर कट्टर सनातनधर्मी हिन्दुओंने अछूतोंकी छुई हुई मिठाई, पान इत्यादि खाई है। ऐसी दशामे यदि मैं

भी ऐसाही करूँ तो कौन पाप है ? होना तो ऐसाही चाहिए, परन्तु बात यह है कि अभी हमारा समाज इस बातके लिए पूर्णतया तैयार नहीं हुआ है, इसलिये हिचक होती है।

अर्जुनसिंह—बाबूजी, हमसे यह कभी नहीं हो सकता कि चमारका छुवा हुवा खा लें—वह चाहे कैसा ही शुद्ध व साफ़ हो।

रामनाथ—हां आपसे तो ऐसा होना असम्भव है। जो काम समस्त आयु नहीं किया उसे इस बुढ़ापेमे करते ग्लानि मालूम होती है।

अर्जुनसिंह—जो सब करने लगें तबतो करते अच्छा भी लगे। अब खालो हम ऐसा करें तो जाति बाहर कर दिये जायँ—भाई-बिरादरी में हुक्का-पानी बन्द हो जाय।

रामनाथ—यही तो कठिनता है। इसीलिए तो, जो इसे बुरा नहीं समझते, उनका भी साहस नहीं पड़ता।

अर्जुनसिंह—जो सच पूछिये तो आजकल धर्म्म-कर्म्म सब चौपट होगया। शहरोंमे लोग पम्पका पानी पीते हैं, पम्पमे चमड़ा लगता है—अब बताइये पम्पके पानीमें और चमारके छुए पानीमे क्या फ़रक है। सच पूछिये तो चमारका छुवा पानी उससे कहीं अच्छा है। काहेसे कि चमार तो खाली बर्त्तन छुवेगा, पर पम्पमें तो चमड़ेका धोवन आता है। चमड़ा हर समय पानीमें डूबा रहता है—वही पानी लोग पीते हैं।

रामनाथ—यही तो खराबी है कि लोग ऐसी-ऐसी बातोंकी तो परवा नहीं करते और यदि कोई अछूत छू ले तो आकाश पाताल एक कर दें।

अर्जुनसिंहने नन्दरामसे कहा—अच्छा जाओ कच्चो रसोई बनवाओ।

नन्दरामके जानेके पश्चात् अर्जुनसिंहने कहा—बड़ा बुरा समय है बाबूजी। जबसे अंग्रेजीका प्रचार हुआ तबसे धर्म्म-कर्म्म उठ गया।

रामनाथ इस बात पर मनही मन कुछ खिन्न हुए। उन्होंने सोचा—अर्जुनसिंह हमें भी उन्हीं लोगोंमे समझते हैं जिन्होंने अंग्रेज़ी पढकर धर्म्म-कर्म्म नष्ट करनेका पाप किया है। उँह! समझें तो समझा करें। हमने अपने सच्चे विचार प्रकट कर दिये, अब वह जो चाहे समझें। यह तो मानी हुई बात है कि ये पुराने लोग ऐसी बातें कदापि अच्छी नहीं समझ सकते।

इसके पश्चात् फिर इस विषय पर कोई वार्त्तालाप नहीं हुआ।

दस बजेके लगभग नन्दरामने कहा—बाबूजी, भोजन तैयार है।

रामनाथ—इतनो जल्दी ?

नन्दराम—दोपहर तो होने आई है।

रामनाथने पूछा—क्या अन्दर चलना होगा ?

नन्दराम—जी। जो यहाँ इच्छा हो तो यहीं मँगा दूँ।

रामनाथ—नही, कच्चा भोजन यहाँ क्या मंगाओगे।

नन्दराम रामनाथको साथ लिए हुए अन्दर पहुँचे। अन्तःपुरके प्रांगणमें पहुँचते ही पहले नन्दरामकी मातासे साक्षात्कार हुआ। रामनाथने उन्हे प्रणाम किया। नन्दरामकी माताने उन्हे आशीर्वाद देकर पूछा—कहो बेटा अच्छे रहे ?

रामनाथने कहा—जी हाँ सब आपकी दया है, आप तो अच्छो रहीं।

नन्दरामकी माता—हाँ बेटा, अभी तक भगवान्‌की दया है। घरमें सब खैरसल्ला ?

रामनाथ—घर तो मैं इधर कई महीनोंसे नहीं गया। चिट्ठी-पत्री आती रहती है—उनके अनुसार तो अभी तक सब कुशल है।

नन्दरामकी माता—बड़ी खुशीकी बात है। मुझे चम्पा बहुत याद आती है—बड़ी नेक लड़की है।

रामनाथने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया, केवल मुस्कराकर रह गये।

नन्दरामकी माता बोली—तुम आ गये, जी खुसी हो गया। हमारे ऐसे भाग कहाँ जो तुम यहाँ आओ-जाओ।

नन्दराम बोल उठा—अच्छा, बातें पीछे कर लेना, पहले इन्हें भोजन कर लेने दो।

नन्दरामकी माता—हाँ बेटा पहले खा लेओ।

रसोईके निकट एक दालान था। वहाँ रामनाथके लिए आसन बिछा था। रामनाथ वहीं बिठाये गये। सामने ही रसोई-घरमें जस्सो बैठी हुई थी। रामनाथने एक बार जस्सोको दृष्टि भरके देखा। जस्सो का शरीर कृश हो रहा था। बनारसमें उसके मुखपर सुस्वास्थ्यकी जो लालिमा थी—उसका इस समय कहीं चिन्ह भी नहीं था। रामनाथने सोचा—ऐसे स्वास्थ्यकर खुले वायुमण्डलमें रहकर भी जस्सो का स्वास्थ्य अधिक अच्छा होनेकी अपेक्षा और उलटा खराब हो गया—इसका क्या कारण है ? रामनाथ यह सोच ही रहे थे कि जस्सोने नतमस्तक किये किञ्चित् लजाते हुए पूछा—बाबूजी, अच्छी तरह रहे ?

रामनाथने कहा—हाँ मैं तो अच्छी तरह रहा, पर तेरा स्वास्थ्य अच्छा नहीं मालूम होता—बहुत दुबली हो गई। देहातमें तो स्वास्थ्य और अधिक अच्छा होना चाहिए।

जस्सोने इसका कुछ उत्तर न दिया। नन्दरामकी माता बोल उठी—जबसे यह तुम्हारे यहाँसे आई तबसे इसका यही हाल होता चला जा रहा है। न अच्छी तरह खाना चले न दाना।

इसी समय नन्दरामने रसोईसे भोजनकी थाली लाकर रामनाथ के सामने धरदी। नन्दरामकी माता भी वहीं उनके सामने थोडी दूर पर बैठ गई। रामनाथने भोजन करना आरम्भ किया। भोजन करते हुए उन्होंने कहा—आखिर इसका क्या कारण है ?

नन्दरामकी माता—क्या जाने क्या कारन है ? तुम्हारी दयासे यहाँ इसे किसी बातको कमी नहीं, कोई दुख नहीं—फिर भो न जाने क्या बात है। तुम्हारे घरकी बहुत याद किया करती है।

रामनाथ—चम्पा भी इसे बहुत याद किया करती है।

नन्दरामकी माता—हाँ जरूर याद करती होगी—इसका उसका बड़ा प्रेम है।

रामनाथने इसपर कुछ नहीं कहा।

जस्सोने पूछा—नमक-वमक सब ठीक है ?

रामनाथ—बहुत ठीक। बड़ा सुस्वाद भोजन बना है।

नन्दरामकी माता—यह सब इसने आपहीके यहाँ सीखा है। हमारे यहाँ ऐसा कौन बना सकता है। हम तो गँवार आदमी हैं—अच्छा-बुरा जैसा बना पेट भर लिया।

रामनाथ—तो क्या यह सब जस्सोने ही बनाया है ?

नन्दरामकी माता—हाँ, इसीने तो बनाया ही है। हम भला ऐसी कहाँ बना सकती है। जो भला-बुरा बनाती थीं सो भी आँखोंके मारे छूट गया।

रामनाथ—हाँ आँखोंसे आपको कम दिखाई देता है।

नन्दराम बोल उठा—आँखोंके मारे तो बेचारी दुखी है।

नन्दरामकी माता—अब तुम इतने पास बैठे हो पर तुम्हारा मुँह हमे साफ नहीं दिखाई पड़ता। खाली बोलीसे पहचान मिलती है।

रामनाथ—राम ! राम ! यह तो बड़े दुखकी बात है। किसी डाक्टरको दिखाओ।

नन्दराम—डाक्टरको तो दिखाया था, पर उसने कहा कि जबतक दिखाई देना बिल्कुल बन्द न हो जाय तबतक आँख नहीं बन सकती।

रामनाथ—हाँ यह तो बिल्कुल ठीक है। जबतक थोड़ासा भी दिखाई देता रहेगा तबतक नहीं बनेगी।

नन्दरामकी माता—अरे बेटा ऐसा न कहो। आँखें चाहे बने चाहे न बने, पर जितना दिखाई देता है उतना ही बना रहे।

इसी प्रकार रामनाथने बातें करते हुए धीरे-धीरे भोजन समाप्त किया। भोजनमें यद्यपि स्वाद मिला, पर रामनाथकी आत्मा प्रसन्न नहीं हुई। क्यों ? जस्सोसे उनका कुछ वार्त्तालाप न हो सका। वार्त्तालाप होना तो दूर वह उसे भली भाँति देख भी नहीं सके।

१८

सन्ध्याको चार बजेके लगभग रामनाथके मित्र रामचन्द्र अपने साथी सहित शिकारसे लौटे। रामनाथने उन्हें देखते ही मुस्कराकर पूछा—कहो कुछ मिला ?

रामचन्द्र बोले—शिकारी लोग भला कभी खाली लौटते हैं—कुछ न कुछ ले ही आते हैं।

रामनाथ—क्या लाये ?

रामचन्द्र—दो मुर्गाबी, चार हरियल और एक हिरन।

रामनाथ—तब तो बहुत कुछ मिला—इससे अधिक और क्या मिलता ?

रामचन्द्रके दूसरे मित्र बोले—क्या कहें, साथके गुडैतकी गलतीसे काम बिगड गया नहीं तो कमसे कम आध दर्जन मुर्गाबियाँ मिलतीं।

रामनाथ—उसने क्या किया ?

मित्रने बताया—

उससे कहा था कि धीरे-धीरे बैठे-बैठे शिकारको ओर जाय, थोडी दूर तक वह गया, परन्तु न जाने क्या समझकर खडा हो गया। उसके खड़े होते ही सब मुर्गाबियाँ भडभडाकर उड गईं—जो वह खड़ा न होजाय तब तो छः सातसे कम किसी दशामे न मिलती।

रामनाथ—तो फिर यह दो कैसे मिलीं।

रामचन्द्र—इनकी मौत थी इससे मिल गईं। ज्यों ही सब उडीं त्योंही इन्होंने लगातार दो फ़ायर किये उसीसे दो गिर गईं।

रामनाथ—ईश्वर सबकी रक्षा करता है—ऐसा न हो तो आप लोग एक ही दिन सबको यमपुरी पहुँचादें।

इसी समय आदमियोंने हिरन लाकर आँगनमें डाल दिया। रामनाथने पहले तो देखा परन्तु दूसरे ही क्षण उस ओरसे मुँह फेर लिया और कमरेके भीतर चले गये।

रामचन्द्र भी उनके साथ ही अन्दर आये और बोले—कल आप भी चलियेगा।

रामनाथ—मैं क्या करूँगा चलके। मुझे शिकार तो खेलना ही नहीं है।

रामचन्द्र—शिकार न खेलना, घूम ही आना।

रामनाथ—घूमनेका वहाँ कौन सा स्थान है, वही मसल है कि—'शिकारी शिकार खेलें बेवकूफ साथ-साथ फिरें' सो जनाब मैं बेवकूफ तो हूँ नहीं।

रामचन्द्र—शिकारियोंको और शिकारियोंके साथ रहनेवालोंको जंगलके जो सुन्दर प्राकृतिक दृश्य देखनेको मिलते हैं वे सर्व-साधारणको नसीब नहीं। किसी दिन साथ चलो तो पता लगे—ऐसे दृश्य देखनेको मिलें कि चित्त प्रसन्न हो जाय।

रामनाथ—साथमें हत्याका दृश्य भी देखें—क्यों?

रामचन्द्र—हत्याके दृश्यसे आपको क्या मतलब—हम अलग रहेंगे आप अलग। हमारे साथ तो आप रह भी नहीं सकते।

रामनाथ—क्यों?

रामचन्द्र—हम लोगोंका कोई ठीक है, कभी कहीं, कभी कहीं।

कहीं दौडना पडता है, कहीं बैठे-बैठे चलना पडता है, कहीं लेटे-लेटे। यह सब आप कहाँ कर सकेंगे। आप तो केवल बहेली पर बैठे रहियेगा—या जहाँ बहेली खडी रहे—उसके आसपास घूम-फिर लीजिएगा।

रामनाथ—मैं नहीं जाऊंगा।

रामचन्द्र—अरे यार, देहातमे आये हो तो देहातका कुछ आनन्द भी तो लूटो—यहाँ पडे रहनेसे क्या लाभ। चले चलना जरा जंगल की हवा खा आना।

रामनाथ—अच्छा विचार करके बताऊंगा।

रामचन्द्र—विचार करनेकी उसमे कौनसी बात है।

रामनाथ—चलनेमे तो कोई हर्ज नहीं है, पर यदि तुमने मेरे सामने किसी पशु-पक्षीको मारा तो मेरा जी दुखेगा।

रामचन्द्र—यदि यह बात है तो लीजिए हम आपसे वादा करते है कि आपकी आँखोंके सामने हम किसी जीवका शिकार न करेंगे—चाहे वह हमारी खोपड़ी ही पर क्यों न खडा हो। बस—। अब तो आप चलेंगे।

रामनाथ—देखो, यदि इच्छा हुई तो चला चलूँगा?

रामचन्द्र—इच्छा हो या न हो, पर कल तो आपको चलना ही पडेगा। हम लोग तुम्हारे साथ यहाँ तक आये—तुम जरा दूर चलने मे भी नाक-भौं सिकोड़ते हो। यह बात ठीक नहीं है उस्ताद?

रामनाथ—यह तो अच्छी जबरदस्ती है।

रामचन्द्र—ज़बरदस्ती नहीं चलनकी बात है। जब देहातमें

आये हो तो जरा जंगलकी बहार भी लूटो शिकार नहीं खेलते ता न खेलो। मैं यह तो नही कहता कि तुम शिकार खेलो।

रामनाथ मुस्कराकर बोले—कहो तो सब कुछ, परन्तु जब यह आशा हो कि मैं तुम्हारी बात मान लूँगा।

रामचन्द्र—खैर योंही सही।

इसी समय रामचन्द्रके साथी भी अन्दर आ गये और उनके साथ अर्जुनसिंह तथा नन्दराम भी आये। रामचन्द्र अपने साथीसे बोले—ज़रा इनको देखिये, यहाँ दबके पडे हैं, मैंने कहा कि कल तुम भी शिकारमें साथ चलना तो नाक-भौं सिकोडने लगे।

रामचन्द्रके साथी बोले—हाँ घूमने-फिरनेमे तो कोई हर्ज नही है। जंगलमें बड़े-बडे सुन्दर दृश्य देखनेको मिलते हैं।

रामनाथ—अच्छा तो चला चलूँगा—बस। अब तो आप लोग प्रसन्न हैं?

रामचन्द्र—हमारी प्रसन्नता और अप्रसन्नताका प्रश्न थोडा ही है, प्रश्न तो तुम्हारे मनोरञ्जनका है। आज ही एक दृश्य इतना रमणीक और सुन्दर मिला कि मुझे उस समय तुम्हारी याद आई। मैंने इनसे कहा भी था कि यदि इस समय रामनाथ साथ होते और इस दृश्यको देखते तो कितने प्रसन्न होते। मनुष्य जब कोई सुन्दर चीज़ देखता है तो उसको यह इच्छा होती है कि वह चीज़ उसके इष्ट-मित्र भी देखें। इसीलिए तुमसे कहा। आप उलटा हमारी खोपड़ी पर एहसान लादते हैं।

रामनाथ—नहीं एहसान लादनेकी कोई बात नहीं।

अर्जुनसिंह बोल उठे—हाँ कल आप भी जरा जंगलकी हवा खा आइयेगा—इसमें तो कोई हर्ज है नहीं।

रामनाथ—नहीं ठाकुर साहब, हर्ज काहेका। बात यह है कि मैं जीवोंकी हत्याका दृश्य देखना पसन्द नहीं करता, इसलिए कहता था। ये लोग साथमें होंगे तो मेरे सामने शिकार अवश्य मारेंगे इससे मुझे दुख होगा—इसलिए सङ्कोच करता था। अब इन्होंने यह वादा कर लिया है कि मेरे सामने ये शिकार नहीं खेलेंगे, अतएव अब मुझे कोई आपत्ति नहीं—मैं चला चलूँगा।

दूसरे दिन प्रातःकाल तीनों व्यक्ति बहेली पर सवार होकर चले। लगभग दो मील चलनेके पश्चात् सब लोग ढाकके घने जंगलके पास पहुँचे। यहाँपर बहेली रोक दी गई। रामचन्द्रने रामनाथसे कहा—अच्छा अब हम लोग तो शिकारके लिए जाते है—आपकी इच्छा हो तो हमारे साथ चलिये या बहेली पर रहिये।

रामनाथ—तुम्हारे साथ भला कहाँ-कहाँ फिरूँगा।

रामचन्द्र—आपके साथ दो आदमी रहेंगे—आप हमारे पीछे मज़े-मजे चले आइये। वैसे आनन्द तो हमारे साथ रहनेमें ही है।

रामनाथ—आज तुमने बेवकूफ बनाया।

रामचन्द्र—क्यों, बेवकूफ क्यों बनाया ?

रामनाथ—और क्या। वहाँसे तो यह कहके लाये कि बहेलीपर बैठे रहना—यहाँ अब कहते हो कि हमारे साथ चलो।

रामचन्द्र—मैं तो केवल इतना कहता हूँ कि हमारे साथ चलनेमें दृश्य देखनेको मिलेंगे।

रामनाथ—परन्तु तुम तो शिकार खेलोगे ?

रामचन्द्र—तुम्हारे सामने नहीं मारेंगे—तुम हमारे पीछे-पीछे रहना।

रामनाथ—आज बने और काफी बने। अच्छा चलिये, अब तो फंस ही गये—जहाँ ले चलोगे चलना पडेगा।

रामचन्द्र मुस्कराते हुए चल दिये। रामनाथ तथा अन्य लोग उनके पीछे-पीछे चले।

गुडैतने रामचन्द्रसे पूछा—पहले हिरनका सिकार होई न ?

रामचन्द्र—हां ! क्यों ?

गुडैत—ई बन माँ सुवरौ मिलत हैं—हुकुम होय तो सुवरका हाँका कराई।

रामचन्द्रने रामनाथसे पूछा—क्यों भाई, सुअरका शिकार खेलने में तो तुम्हे आपत्ति नहीं। सुअर तो हिंसक जन्तु है।

रामनाथ—हाँ जंगली सुअरका शिकार करना मैं बुरा नहीं समझता। सुअर, शेर, चीता इत्यादिका शिकार खेलनेमें हर्ज नहीं।

रामचन्द्रने गुडैतसे कहा—अच्छा तो हाँका कराओ।

गुडैत—अच्छा तो मालिक जहाँ-जहाँ हम बताई तहाँ-तहाँ आप दूनौ जने ठाढ (खड़े) होइ जाँय।

रामचन्द्र—चलो।

गुडैतने रामचन्द्र तथा उनके साथीको दो ऐसे नाकों पर खड़ा कर दिया—जहाँसे सुअरोंके भागते हुए निकलनेकी आशा थी। इसके पश्चात् हाँका आरम्भ हुआ।

रामनाथ दो आदमियोंके साथ एक ऊँचे टीले पर जिसके एक ओर घनी झाड़ियाँ थीं खड़े हो गये। लगभग बीस मिनिट तक लोग हो-हल्ला करते रहे, परन्तु एक भी सुअरके दर्शन न हुए।

हाँका करनेवाले हाँका करते हुए रामनाथकी ओर आ रहे थे। हठात् एक किसी पशुके भागनेका पद-शब्द सुनाई पडा। रामचन्द्र और उनके साथीने बन्दूकें सँभालीं। इसी समय एकने चिल्लाकर कहा—गोली न चलाना—नीलगाय है।

नीलगाय रामनाथके पाससे होकर भागती हुई निकल गई। राम-नाथने उसे स्पष्ट देखा। अब रामनाथको भी कुछ आनन्द आया। उन्होंने चिल्लाकर कहा—अरे भाई कोई सुअर निकालो।

लोग पुनः आँका करते हुए आगे बढ़े। हाँका करते हुए रामनाथके पासकी घनी झाडियोंके निकट आये और उन्होंने झाडियों पर लाठी मार मारकर हो-हल्ला किया। ठीक इसी समय रामनाथके पासकी झाडोके अन्दर खडखड़ाहट हुई। हाँका करनेवालोंने रामनाथसे कहा-—'मालिक होसियार, इसके भीतर सुअर है।' उनका यह कथन समाप्त भी न होने पाया था कि झाड़ीके भीतरसे एक बडा जंगली सुअर तीरकी तरह निकला। उसी समय रामनाथ उछलकर टीलेके बिल्कुल किनारे आ गये, टीलेकी कगार परसे उनका पैर फिसला और वह टीलेसे, जो समतल भूमिसे बारह फीटके लगभग ऊँचा था, लुढ़ककर भूमि पर आ गिरे। सुअर तेज़ीके साथ नाककी सीध भागता हुआ चला गया। यदि रामनाथ उछलकर अलग न हो जाते तो सुअर निस्सन्देह उनपर आक्रमण करता। रामनाथको गिरते देख-

कर उनके साथके दोनों आदमी दौड पडे और उन्होंने उनको उठाकर खड़ा करना चाहा, पर रामनाथ खडे न हो सके। उन्होंने कराहते हुए कहा—मेरी टाँग गाँठ परसे उखड गई है, मैं खडा नहीं हो सकता।

यह सुनते ही दोनों पासियोंके चेहरेका रंग उड गया। एक बोला—अरे दादा यह तो बडा गजब भवा, ठाकुर हमार चमड़ी उधिलाय डरिहै।

इसी समय दनादन दो फायरका शब्द सुनाई पडा।

वे दोनों पासी रामनाथको उठाकर बहेलीकी ओर चले। बहेली पर पहुँचकर दोनोंने रामनाथको बहेली पर लिटा दिया। इसके उपरान्त एक बोला—'जाई हम धौरके (दौड़के) बाबू लोगनका खबर करी।' यह कहकर वह दौडता हुआ चला गया। दस मिनटके पश्चात् चार आदमी सुअरकी लाश टाँगे हुए आये। उनके साथ ही रामचन्द्र और उनके मित्र भी आये। रामचन्द्रने दूर ही से पुकारकर पूछा—अरे क्या हुआ?

रामनाथके साथके पासीने कहा—बाबूजी, ई बाबूजी टिलवा पर से भरभराय परे तौन टाँग उखर (उखड़) गै है।

रामचन्द्रका मुँह फक़ हो गया, बोले—अरे यह कैसे गिर पड़े?

पासी—सरकार जौनी झाड़ीके लगे (पास) ई ठाढ़ रहै ओही झाड़ी माँ यो सार सुअरवा बैठ रहा, जब झाड़ी खड़खड़ान तो ई कूदि कै हटे सोई पाँव फिसिल गा और ढनग (लुढ़क) परे। वह तो बड़ी खैर भई, नहीं आज सुअरवा इन्हैं लै डारत।

रामचन्द्र—यह तो बड़ा बुरा हुआ, हम लोग जबरदस्ती लाये थे।

पासी बोला—तो मालिक तुम्हार कौन कसूर। तुम नीतिन (वास्ते) लाये रहा।

रामनाथ कराहते हुए बोले—अरे भाई इसमें तुम्हारा क्या अपराध ? तुम व्यर्थ ही अपनेको दोषी समझते हो।

रामचन्द्र—परन्तु तुम्हारी इच्छा नहीं थी, हम लोगोंके कहनेसे आये थे। क्या कहे—ऐसा जानते तो न लाते। राम। राम। अच्छा शिकार खेला।

रामनाथ—अरे जो हुआ सो हुआ अब व्यर्थ पश्चात्ताप करते हो।

गुड़ैत—मुदा सुवरऊ सरऊका फल मिलिगा।

रामचन्द्र—अरे वह तो वैसे भी मारा ही जाता, फल क्या मिला। अच्छा इस सुअरको तुम ले जाओ हमारे यह किसी कामका नहीं, तुम सब मिलकर बाँट खाओ, हम लोग अब गाँव जाते हैं।

यह कहकर उन्होंने बहलीवालेको गाँवकी ओर चलनेका संकेत किया। रामचन्द्र तथा उनके मित्र उदासभावसे बेहलीके पीछे पीछे चले।

१६

सब लोग यथा समय गाँव पहुँचे। एक आदमी आगे-आगे चाला आया था—उसने नन्दराम तथा अर्जुनसिंहको इस दुर्घटनाकी सूचना दी। दरवाजे पर बेहली पहुँचते ही अर्जुनसिंह तथा नन्दराम बाहर आगये। अर्जुनसिंहने पहले यह प्रश्न किया—बाबूजीके साथ कौन-कौन आदमो रहे?

एक पासी आगे बढ़कर डरता हुआ बोला—मालिक हम रहन और मैकुवा रहै।

अर्जुनसिंह—तुम इन्हे ऐसी जगह काहे ठाढ कीन्हे रहौ, जहाँ गिरैका खटका रहा।

पासी काँपता हुआ बोला—वह तनी ऊँची जगह रहै ई मारे हुवाँ ठाढ कर दीन ग रहै।

अर्जुन०—तुमका सरऊ यौ न सूझ पडा कि सुअरके सिकारका मामला है, कहूँ ऐसी वैसी भागैका पडा तो गिर परिहै।

पासी मोन खड़ा रहा।

अर्जुनसिंह चिल्लाकर बोले—बोलता नहीं हरामजादे।

पासी—अब ले मालिक हम यौ का जानत रहन कि ओही ठाँय सुअर बैठ होई।

अर्जुनसिंह नन्दरामसे बोले—'जाओ हमारा कोड़ा ले आओ।

नन्दरामसे यह कहकर पासोसे बोले—अब आज तुम्हे खूब नीकी तना मालूम होइ जाई। वह सार मैकुवा कहाँ है ?

मैकुवा बहेलीकी आड़में छिपा खड़ा था। अर्जुनसिहकी बात सुनकर हाथ जोडे हुए सामने आया।

नन्दरामसिह कोड़ा ले आये। अर्जुनसिहने नन्दरामसे कहा—बाबूजीको उतारकर कमरेमें ले जाओ।

नन्दरामसे यह कहकर अर्जुनसिह पासियोंकी ओर कोड़ा लेकर बढे। यह देखकर रामनाथने चिल्लाकर कहा—ठाकुर साहब, ये बेचारे निरपराध हैं—इनको कुछ मत कहिये, नहीं तो मुझे दुःख होगा।

अर्जुनसिह रामनाथकी बात सुनकर ठिठुक गये और बोले—यह इन्हींकी गलतीसे हुआ, ये लोग यदि आपको ठीक जगह खड़ा करते तो यह काण्ड न होता।

रामनाथ—नहीं इनका कुछ भी अपराध नहीं मैंने स्वयम् वह स्थान पसन्द किया था।

नन्दरामसिह भी बोल उठा—जाने दीजिए, जो होना था सो तो हो ही गया। जरा इधर आकर इनकी टाँग देखिये।

अर्जुनसिहने पासियोंसे कहा—अच्छा जाओ ई दफा छोडे देइत है, आगे कबहूँ ऐसी गफलत करिहौ तो खाल उडाय दीन जाई।

अर्जुनसिह बहेलीके पास आये और रामनाथकी टाँग देखी। इतने समयमें घुटना सूज आया था। अर्जुनसिहने गुड़ैतको बुलाकर कहा—जा दौड़के बुधुवाका तो बुलाय ला।

बुधुवा गाँवका अहीर था। यह व्यक्ति उखड़े तथा टूटे अंग जोड़नेके लिए आसपास दस पन्द्रह कोस तक विख्यात था।

रामनाथ उठाकर कमरेमें लाये गये और पलँग पर लिटा दिये गये। रामचन्द्रने कहा—अब क्या होगा, इनका घुटना किस तरह बिठाया जाय।

अर्जुनसिंह—वह सब अभी हो जायगा—मैंने आदमी बुलवाया है।

रामचन्द्र—कौन आदमी ?

नन्दराम बोल उठा—हमारे इसी गाँवका आदमी है।

रामचन्द्र—वह भला क्या बिठायेगा—कहीं कुछ अट-शंट कर दे तो और दिक्कत हो।

रामनाथ—अरे भई, यहाँका आदमी क्या बिठावेगा। यदि इलाहाबाद पहुँचनेका प्रबन्ध हो जाता तो किसी डाक्टरको दिखाते।

अर्जुनसिंह—आप घबराइये नहीं। अभी सब हुआ जाता है। बुधुवा बड़ा होशियार आदमी है।

थोड़ी देरमे बुधुवा आगया। बुधुवाकी सूरत देखकर रामचन्द्रने मनमें सोचा—यह गँवार आदमी घुटना क्या बिठायेगा।

अर्जुनसिंहने बुधुवासे कहा—देख रे ई बाबूजीका घुटना उखरिगा है—जरा बिठाय तो दे।

बुधुवाने कहा—अच्छा मालिक, अबहीं बैठि जाई। जरा मैं देख लेओं।

नन्दराम बुधुवाको रामनाथके पलँगके पास ले गया। बुधुवाने

घुटनेको भली भाँति देख-भालकर कहा—अबही सब ठीक होइ जाई। थोड़ा कपड़ा मँगा देओ और एक हाथ भरेका डंडा।

कुछ ही क्षणोंमें दोनों वस्तुएँ आगईं। बुधुवाने अपनी क्रिया आरम्भ की। रामनाथने कहा—देखो भई, अगर तुम बिठा सको तो हाथ लगाना।

बुधुवा बोला—मालिक, एहिमाँ है का, खाली उखरिगा है।

अर्जुनसिंह—बाबू जी, इसने टूटी हड्डी तक जोड दी है, यह तो खाली उखडा हुआ है। आप किसी बातका खटका मत कीजिये—बडा उस्ताद आदमी है।

यह सुनकर रामनाथ चुप होगये। बुधुवाने दो ही तीन मिनिटमे घुटना बिठा दिया और उसके नीचे डंडा लगाकर कपडेसे खूब कसकर बाँध दिया।

अर्जुनसिंहने पूछा—एहिमाँ दवा का लगाई जाई?

बुधुवा—दवाईकी कौनो जरूरत नहीं हवै, खाली कडुआ तेल लगावा जाय।

अर्जुनसिंह—तो तुमही आयके लगाय दीन करो।

बुधुवा—हाँ हमही लगाय जावा करब।

रामनाथ—क्यों भई बुद्धू, मैं कबतक चलने-फिरने लगूँगा।

बुधुवा—आजके चौथे दिन चलै फिरै लगिहौ।

यह कहकर बुधुवा चला गया।

रामनाथने अर्जुनसिंहसे कहा—निःस्संदेह आदमी होशियार है। बडा मुलायम हाथ है, मुझे कुछ मालूम ही न हुआ।

अर्जुनसिंह—बड़ा होशियार है। इधर दस-बीस कोसके गिर्दमें जहाँ किसी आदमी या जानवरका कोई अङ्ग टूटता है या उखड़ता है—यही बुलाया जाता है।

रामचन्द्र—यह तो डाक्टरोंके भी कान काटता है।

अर्जुनसिंह—हाँ साहब, है तो ऐसी ही बात।

रामनाथ रामचन्द्रसे बोले—क्यो भई, अब मैं तो चार दिन यहाँसे हिल नहीं सकता। तुम आज शामको चले जाओ, क्योंकि कल लेक्चर्स होंगे। मैं एप्लीकेशन (अर्जी) लिख दूँगा—वह दे देना।

रामचन्द्र—मैं तुम्हें अकेला छोड़कर कैसे जा सकता हूँ।

रामनाथ—अकेला क्यो, यहाँ तो सब अपने ही आदमी है।

रामचन्द्र—हाँ यह तो ठीक है, परन्तु मेरा जी तो नही मानता। मेरा चित्त तो यहीं धरा रहेगा।

रामनाथ—यह ठीक है, किन्तु कोई चिन्ताकी बात नहीं है। तुम्हारा जाना बड़ा आवश्यक है। तुम यदि पहुच जाओगे तो सब ठीक हो जायगा, अन्यथा हम तुम दोनों 'एबसेन्ट' (अनुपस्थित) लिखे जांयगे। यदि तुम पहुच जाओगे तो यह न होने पायेगा।

रामचन्द्र—हाँ, यह तो ठीक है पर... ...।

रामनाथ—तुम मेरे लिए तो कोई चिन्ता करो ही नहीं। मैं तो एक तरहसे अपने घर होमे पड़ा हूं। इसके अतिरिक्त कोई ऐसी बात नहीं जिसमें प्राणोंका भय हो, पैर उखड़ गया था—बिठा दिया गया, दो तीन रोजमे ठीक होजायगा।

रामचन्द्र—ख़ैर, जैसा कहो वैसा करूँ।

रामनाथ—कहना यही है कि तुम आज शामकी गाड़ीसे चले जाओ।

रामचन्द्र—अच्छी बात है, चला जाऊंगा।

रामनाथ—आजके चौथे दिन मैं भी इलाहाबाद पहुंच जाऊंगा।

रामचन्द्र तथा उनके मित्रने स्नान इत्यादि करके भोजन किया। रामनाथने केवल थोडासा हलुवा खाया और दूध पिया। दोपहरको तीनों व्यक्ति परस्पर वर्त्तालाप करते रहे। रामचन्द्रने कई बार कहा—क्या बतावें, सब मजा किरकिरा होगया। आये थे आनन्द उठाने, हो यह गया। ऐसा जानते तो तुम्हें शिकारमें कदापि न ले जाते।

रामनाथ—यह व्यर्थकी बातचीत क्यों करते हो? पढ-लिखे होकर मूर्खोंकी-सी बातें करते हो। भविष्यमें क्या होनेवाला है, यह कोई जान सकता है। यदि ऐसा होता तो संसारका इतिहास, जो ऐसी-ऐसी भूलोंसे भरा पडा है जिनके कारण कि युगान्तर उपस्थित हो गया, आज कुछ और ही होता।

रामचन्द्रके मित्र बोल उठे—यह सब ठीक है, पर यह जो कह रहे हैं वह भी सदैव ही कहा जाता रहा है और कहा जायगा। जब कोई काम बिगड़ता है तो मनुष्य सदैव यही कहता है कि यदि हम यह जानते तो ऐसा न करते। यह तो मनुष्यका स्वभाव है। इस कारण यदि यह कह रहे हैं तो कोई पाप नही कर रहे हैं।

रामनाथ हँसकर बोले—हाँ, यह बात भी पक्की है। आपने इस समय अच्छी विकालत की।

ये लोग इसी प्रकारकी बातें करते रहे। तीन बजेके लगभग राम-

नाथने नन्दरामसे कहा—भई इनके लिए गाडी तैयार करा दो—इन्हे स्टेशन जाना है ।

नन्दरामने कहा—बहुत अच्छा, अभी तैयार होती है ।

दस मिनिटके अन्दर बेहली दरवाजेपर आगई । दोनों व्यक्तियोंके बिस्तर उसपर रख दिये गये । रामचन्द्रने रामनाथसे बिदा होते समय आँखोंमें आँसू भरकर कहा—क्या कहूँ मित्र, साथ आये थे—अकेले रहे जाते हो । मेरी इच्छा तो नही थी कि तुम्हे छोडकर जाऊँ, पर तुम्हारी आज्ञा मानकर जारहा हूँ ।

रामानाथ किञ्चित् मुस्कराकर बोले—ओफ ओह ! इस भावुकता-का भी कोई ठिकाना है । यह तो एक साधारण-सी बात है । समझलो कि मुझे कोई काम लग गया इसलिए तुम्हारे साथ नहीं चल सकता, दो दिन बाद आऊगा ।

रामचन्द्र—और, अब जबकि जा ही रहे है तब तो कुछ न कुछ समझना ही पडेगा । अच्छा प्रणाम, ईश्वर करे आजके चौथे दिन तुम इलाहाबादमे दिखाई पडो ।

रामनाथ—निश्चय ।

अर्जुनसिंह तथा नन्दराम दोनों व्यक्तियोंको बेहली तक पहुचाने आये । अर्जुनसिंहने कहा आपको शिकार खेलनेका नहीं मिला ।

रामचन्द्र—शिकारके पीछे ही तो यह दशा हुई कि तीन आये थे दो जा रहे हैं ।

अर्जुनसिंह—हाँ, होतव्यताकी बात है । अब फिर कभी आइयेगा तब खूब जीभरके खेल लीजिएगा।

रामचन्द्र—देखिये, हम तो यदि आयेंगे तो रामनाथ ही के साथ आयेंगे।

नन्दराम बोल उठा—बाबूजी, यह आपका घर है, जब आपका जी चाहे बिना संकोच चले आइयेगा।

रामचन्द्र—यह आप लोगोंकी दया है, पर हम लोगोंको सदैव तो छुट्टी रहती ही नहीं, जब छुट्टी मिलेगी तब आ जावेंगे। अच्छा आज्ञा दीजिए। रामनाथको देखभाल रखियेगा और जब चलने-फिरने योग्य हो जाय तभी उन्हें इलाहाबाद आने दीजियेगा। ऐसा न हो कि वह सनकमें आकर बीच ही में चल दें।

अर्जुनसिंह—अरे राम राम! ऐसा कहीं हो सकता है। आप निश्चिन्त रहिये। यहाँ उनको किसी बातका कष्ट नहीं होगा। बाबू रामनाथजी मेरे प्राणोंके साथ हैं।

दोनों व्यक्तियोंने ठाकुर साहबसे बिदा माँगी और बहलीमें बैठकर स्टेशनकी ओर चल दिये।

रामचन्द्र तथा उनके मित्रके चले जानेके पन्द्रह मिनट पश्चात् नन्दरामकी माता रामनाथको देखने आईं। उनके पीछे-पीछे जस्सो भी थी। अर्जुनसिंह तथा नन्दराम दोनों रामनाथके पलंगके निकट दूसरे पलंग पर बैठे हुए थे। नन्दरामकी माताने पतिको देखकर सिरका कपड़ा किञ्चित् आगेको खिसका लिया।

कमरेमें पैर रखकर उन्होंने कहा—यह कैसे क्या होगया? मैंने तो जबसे सुना तबसे जी न जाने कैसा होरहा है।

अर्जुनसिंह बोले—हुआ यही कि एक टीले परसे पैर फिसल गया

और गिर पड़े। पर कोई चिन्ताकी बात नहीं है, घुटना उखड़ गया था, वह बिठा दिया गया।

ठकुराइन—तो इनके साथ कोई आदमी नहीं था ?

अर्जुनसिंह—था क्यों नहीं, आदमी तो एक छोड़ दो दो थे, पर समयकी बात है।

ठकुराइन—कौन आदमी थे ? उन दाढ़ीजारोंको यह न सूझा कि ऐसी जगह क्यों खड़ा करे जहां गिरनेका खटका हो।

रामनाथने कहा—उन बेचारोंका क्या अपराध ? वह क्या जानते थे कि ऐसा होगा। उन्होंने तो अपनी समझमें ऐसी ही जगह खड़ा किया था जहां कोई खटकेकी बात नहीं थी, पर जो होनी है वह तो टलती नहीं।

ठकुराइन—राम। राम। बैठे-बिठाये रोग खड़ा होगया। वहां बाबू और बबुआइन सुनेंगे तो यही कहेंगे कि लड़केको बुलाकर टांग तुड़वा दी, मुझे तो तबसे यही डर खाये जा रहा है।

रामनाथ मुस्कराकर बोले—वह सुनेंगे ही काहेको। मैं तो उनसे यह कहूंगा नहीं।

ठकुराइन—अरे बेटा, सुननेको क्या हुआ ? ऐसी बात छिपती थोड़ी ही है। वह जो तुम्हारे साथ आये थे वही कह देंगे।

रामनाथ—वह दोनों तो इलाहाबादमें रहते हैं और बिना मुझसे पूछे वह कभी नहीं कह सकते।

ठकुराइन—और कुछ बात नहीं—बदनामीका डर लगता है।

रामनाथ—बदनामी काहेकी, बदनामीकी कौन सी बात है।

ठकुराइन—बात क्यों नहीं है। लोग कहेंगे कि खबरदारी न रक्खी।

रामनाथ—यह सब व्यर्थकी बातें हैं।

ठकुराइन—तो अब जी कैसा है ?

रामनाथ—जी बिल्कुल अच्छा है।

रामनाथने जस्सोपर एक दृष्टि डाली। जस्सोका मुख-मण्डल उदास तथा मलिन था। थोड़ी देरके पश्चात ठकुराइन जस्सो सहित अन्तःपुरकी ओर चली गईं।

२०

सवेरेके आठ बज चुके थे। रामनाथका घुटना बिठाये हुए आज तीसरा दिन था। अब उनका घुटना प्रायः अच्छा हो गया था। उसकी सूजन जाती रही थी और पीडा भी नहीं थी। वृद्धने आज प्रातःकाल पट्टी बाँधते समय कहा था—'बाबूजी आप कल चलने-फिरने काबिल हो जायँगे।' इस समय रामनाथ अपनी शय्यापर बैठे हुए थे। कमरेमे और कोई नहीं था। इसी समय जस्सोने कमरे-मे प्रवेश किया। उसके एक हाथमे दूधका गिलास और दूसरेमे मिष्ठान्नकी तश्तरी थी। शय्याके पास ही मेज रक्खी थी—उस मेज पर जस्सोने दोनों चीजें रख दीं।

रामनाथने एक बार चारों ओर देखकर जस्सोसे कहा—जस्सो।

जस्सो उनके सन्मुख सिर झुकाकर खड़ी हो गई। रामनाथने पुनः कहा—जस्सो।

जस्सोने सिर झुकाये हुए कहा— जी।

"कैसी हो?" रामनाथने अत्यन्त स्नेहपूर्ण स्वरमें पूछा।

"किसी न किसी प्रकार जीवित हूं।"

"तुम बहुत दुबली हो गई हो। क्या यहाँ तुम्हे कोई कष्ट है?"

जस्सो मौन रही।

रामनाथने पुनः पूछा—तुम्हे यहाँ क्या कष्ट है जस्सो?

जस्सोने एक बार ऊपर सिर उठाया और एक क्षणके लिए राम-

नाथसे आँख मिलाई इसके पश्चात उसने पुनः आँखे नीची करलीं। केवल इतने ही से उसने रामनाथकी बातका उत्तर दे दिया। रामनाथ जस्सोकी उस भावपूर्ण दृष्टिका मर्म्म समझकर तड़प गये। उन्होंने कहा—जस्सो! मैं जानता हूँ तुम्हे क्या कष्ट है—मुझे सब मालूम है, परन्तु क्या करूँ विवश हूँ। तुम्हे जितना कष्ट है उतना ही मुझे भी है। परन्तु यह कष्ट कैसे दूर हो, यह बात समझमे नहीं आती। इसका उपाय केवल एक है और वह यह है कि हम दोनों एक दूसरेको भूलनेकी चेष्टा करें। हम दोनोंके लिए यही बात हित-कर है।

जस्सोने सिर झुकाये हुए कहा—परन्तु यह अपने बसकी बात नहीं है।

"ठीक कहती हो। परन्तु इसके अतिरिक्त और हो ही क्या सकता है। हम दोनों जिस परिस्थितिमे हैं उससे किसी प्रकारकी आशा नहीं है।"

जस्सो चुपचाप खड़ी पैरके अँगूठसे भूमि खोद रही थी।

रामनाथ कुछ क्षणों तक उसकी ओर सतृष्ण नेत्रोंसे ताकते रहे। तदुपरांत पुनः बोले—क्या कहती हो जस्सो! यदि तुमने कुछ सोचा हो तो कहो।

"मै सोच ही क्या सकती हू।" जस्सोने उसी प्रकार सिर झुकाये हुए उत्तर दिया।

रामनाथने एक लम्बी साँस छोड़कर कहा—ठीक कहती हो, इस संबन्धमे और क्या सोचा जा सकता है। कोई उपाय नहीं सूझता।

दोनों पुनः कुछ क्षण मौन रहे। हठात् रामनाथ बोल उठे—मेरा पर ठीक हो गया है—सम्भवतः कल मैं चला जाऊंगा। कल नहीं तो परसों तो अवश्य ही जाना पड़ेगा। अब देखो कब भेंट हो।

रामनाथने देखा—जस्सोके नेत्रोंसे बड़े-बड़े बूंद निकलकर उसके वक्षस्थल पर गिर रहे हैं। रामनाथके नेत्रोंमे भी अश्रु आ गये। उन्होंने व्याकुल होकर जस्सोका एक हाथ अपने हाथमें ले लिया और कहा—इस प्रकार दुखी होनेसे क्या लाभ। ईश्वरकी य ी इच्छा है कि हम दोनों निर्दयी प्रेमकी बलिवेदी पर भेंट हो जावें। हमारा तुम्हारा प्रेम ईश्वरको नहीं भाया।

हठात किसीके आनेकी आहट पाकर रामनाथने जस्सोका हाथ छोड़ दिया। जस्सो भी हटकर कुछ दूरपर खड़ी हो गई। इसी समय नन्दराम कमरेके भीतर आया। उसने आते ही एक बेर जस्सो-को ओर एक बेर रामनाथको सिरसे पैर तक देखा। रामनाथने नन्द-रामके मुखको ध्यानपूर्वक देखा—उसका मुख गम्भीर था। उसने शुष्कतापूर्ण स्वरसे पूछा—आपने दूध पी लिया ?

रामनाथने कुछ घबराकर कहा—जी नहीं, अभी तो आया ही है—अब पीता हूं।

नन्दरामने जस्सोकी ओर देखकर कहा—अच्छा तो तू जा—भोजन-वोजनका काम देख।

जस्सो चुपचाप वहांसे चली गई।

नन्दराम एक कुर्सी पर बैठ गया और किसी विचारमे डूब गया। रामनाथने मिष्ठान्न खाया और दूध पिया। इसके पश्चात एक सिगरेट

सुलगाकर चुपचाप धूम्रपान करने लगे। नन्दराम उसी प्रकार सिर झुकाये गम्भीर बैठा था। रामनाथ उसके मुखको ध्यानपूर्वक देख रहे थे—मानो उसके मुखका भाव देखकर वह उसके हृदयकी बात जाननेका प्रयत्न कर रहे हों। हठात् नन्दरामने कहा—बाबूजी आपका पैर तो अब ठीक हो गया।

रामनाथने कहा—हाँ ठीक तो जान पड़ता है।

इसपर नन्दराम कुछ कहने ही वाला था, परन्तु वह रुक गया। ऐसा प्रतीत हुआ कि वह बात कहना उसने उचित नहीं समझा। रामनाथको नन्दरामके व्यवहारमें कुछ परिवर्त्तन प्रतीत हुआ। उन्होंने सोचा—"नन्दराम इस समय कुछ रुखाईकी बातें कर रहा है कहीं इसने मेरा और जस्सोका वार्त्तालाप तो नहीं सुन लिया।" यह सोचकर उन्होंने कहा—मेरा इलाहाबाद पहुंचना आवश्यक है। मेरी इच्छा है कि कल चला जाऊँ। पैर अब अच्छा ही है।

नन्दरामने कहा—हाँ अब तो पैर ठीक है, बुधुवा भी कहता था कि अब बाबूजी चल-फिर सकते हैं कोई खटकेकी बात नहीं। आप कल जा सकते हैं।

रामनाथको नन्दरामका यह कथन बुरा लगा। इसके पूर्व नन्दराम रामनाथकी बातका उत्तर सदैव बड़े आदरसे मुस्कराकर दिया करता था। परन्तु आज उसके प्रत्येक वाक्यमें रूखापन था। रामनाथने सोचा निश्चय इसने हमारी बातचीत सुन ली। अब यहाँ ठहरना उचित नहीं है। अतएव उन्होंने कहा—तो बस यही ठीक है, मैं कल जाउँगा।

नन्दरामने कहा—अच्छी बात है।

रामनाथने सोचा—यदि इसने हमारा वार्त्तालाप न सुना होता तो यह कहता—अभी दो एक दिन और ठहर जाइये।

इसके पश्चात् रामनाथ भी मौन हो गये।

रातमे जब नन्दराम शयन करनेके लिए अपनी चारपाईपर पहुंचा तो उसके हृदयमे एक तूफ़ान उठ रहा था। असली बात यह थी कि जिस समय रामनाथ तथा जस्सोमे बातचीत हो रही थी उस समय नन्दराम द्वारपर खडा उन दोनोंकी बाते सुन रहा था। वह रामनाथके कमरेमे आ रहा था, द्वारके निकट पहुचनेपर उसके कानमे रामनाथके यह शब्द पड़े—"हम दोनों एक दूसरेको भूलनकी चेष्टा कर।" ये शब्द सुनकर नन्दराम द्वारपर ही ठिठुक गया और उन दोनोंकी बातें सुनने लगा। अन्तमे जब उससे अधिक न सुना गया तो उसने अपने पैरोंसे शब्द करके रामनाथको पहले सचेत किया और इसके पश्चात् कमरेमे प्रवेश किया।

नन्दराम अपनी शय्यापर बैठ गया और सोचने लगा। हठात् उसके मुखसे निकला—"ओफ! मैं तो समझा था कि अब मेरा जीवन शान्तिपूर्वक बीतेगा। परन्तु सच बात तो यह है कि मेरे पापोंका प्रायश्चित्त अब आरम्भ हुआ। ईश्वर! क्या अभी तेरी संतुष्टि नहीं हुई? मेरे हृदयकी ज्योति सोनाको तूने छीन लिया, बरसों मुझे गली-गलीका भिखारी बनाकर रक्खा—फिर भी तूने मुझे क्षमा नहीं किया। क्या मेरा अपराध इतना गुरुतर था कि उसका प्रायश्चित्त होना अभी बाकी रह गया है?" इतना कहकर नन्दराम रोने लगा।

थोडी देर तक वह बिलख-बिलखकर रोता रहा। अन्तमे उसने आँसू पोछे और अपने ही आप बोला—"जान पड़ता है जो मैंने दूसरोंके साथ किया था वही मेरे साथ भी होनेवाला है। जो दुख, जो कष्ट सोनाके पिताको उठाने पडे वेही सब मुझे भी उठाने पड़ेंगे। (कुछ क्षण सोचकर) परन्तु नही, ऐसा नही होने पायेगा। सोनाको और मेरी बात दूसरी थी—मे और वह साथ-साथ खले थे—एक जातिके थे। मेरा यह अधिकार था कि मैं उससे प्रेम करूँ और उससे विवाह करके उसे पत्नी बनाऊँ। इस खत्रीके लड़केका ऐसा कोई अधिकार नहीं। इसकी यह अनुचित अभिलाषा है, अनधिकार चेष्टा है। मैं इसे कभी पूरी नहीं होने दूंगा। ओफ! मैंने कितना बड़ा धोका खाया। मैं समझता था कि इसने जो कुछ मेरे साथ उपकार किया वह इसकी सहृदयता थी, इसका दयाभाव था। मुझे यह क्या पता था कि इस दुष्टका नीयत खराब है। इसने जो कुछ किया वह इस अभिप्रायसे कि यह जस्सो । ओफ (दाँत पीसकर) यदि मुझे यह ज्ञान होता तो मैं सड़कपर पडे-पडे मर भले ही जाता, पर इस नीचके आश्रयमे कभी न रहता। भगवान जाने जस्सोका इसका यह व्यवहार कबसे हो। तो क्या मेरी जस्सोका इस दुष्टने सर्वनाश कर डाला। यदि इसने ऐसा किया हो और मुझे विश्वास होजाय तो मैं इसे कभी जीवित न छोड़ूँ। परन्तु मुझे विश्वास नहीं होता। रामनाथ इतना नीच नहीं है—मेरी जस्सो भी बडी नेक है—अतएव यह आशा नही कि सर्वनाश हुआ हो। परन्तु इसका निश्चय कैसे हो। ओफ़! मेरा सिर चक्कर खाता है—कहीं मैं पागल न होजाऊँ।

क्या कहूं ? ईश्वर—दयामय, तू इस समय मेरी सहायता कर—दीनानाथ तुम इतने रुष्ट क्यों हो गये। क्यों मुझे पग-पगपर जलील कर रहे हो—अब तो क्षमा करो दीनबन्धु! अब तो मेरी ओर निहारो।"

इतना कहकर नन्दराम पुनः रोने लगा। परन्तु हठात् उसके कानोंमे जस्सोके आगमनकी आहट सुनाई पड़ी। उसने झटपट अपने आँसू पोंछ डाले और गम्भीर होकर बैठ गया। इसी समय जस्सो हाथमे दूधका गिलास लिये हुए आई। उसने आते ही कहा—"लो पिताजी, दूध पी लो। मुझे तो डर था कि कहीं सो न गये हो।"

नन्दरामने गिलास हाथमे लेकर एक दीर्घ-निश्वास छोड़ते हुए कहा—हमारे ऐसे पापीको नींद कहाँ बेटी।

जस्सो पिताकी यह बात सुनकर कुछ क्षणोंके लिए हत बुद्धि-सी हो गई। परन्तु फिर सभलकर बोली—क्यों पिताजी, आज आप ऐसी बात क्यों कहते है ?

नन्दराम बोला—संसारकी गति बड़ी विचित्र है बेटी। जिसपर विश्वास करो वही विश्वासघात करता है।

"किसने विश्वासघात किया ?"

"किसे बताऊं।"

"कुछ तो बताओ।"

"वैसे ही एक साधारण बात कह रहा हूं।"

जस्सो चुप हो रही, परन्तु उसकी तुष्टि नहीं हुई।

जस्सोने कहा—"लो, दूध पी लो।"

नन्दरामने दूध पिया। दूध पीनेके पश्चात् उसने कहा—"कल रामनाथ बाबू जायँगे।"

यह वाक्य कहकर नन्दरामने जस्सोके मुखको ध्यानपूर्वक देखा। नन्दरामकी बात सुनकर जस्सोका मुख पीला पड गया। उसने घबराकर कहा—"कल चले जायँगे।"

"हा चले जायँगे।"

"इतनी जल्दी क्यो?" जस्सोने अपनेको किञ्चित् संभालकर कहा।

"यहाँ कुछ रहने तो आये नहीं थे—वह तो चोट लगगई इससे इतने दिन ठहर भी गये, नहीं तो अबतक कभी के चले गये होते।"

"टाँग बिल्कुल अच्छी होगई?"

"हाँ अच्छी हो गई।"

"अभी एक-दो दिन और ठहर जाते तो अच्छा था।"

"क्या आवश्यकता है। अच्छे होगये, अब जाँय अपना काम-काज देखे?"

जस्सोने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। उसने गिलास उठाया और वहाँसे चली गई। नन्दराम दाँत पीसकर बोला—रामनाथके जानेकी बात सुनकर कैसी चौंकी। अवश्य कुछ दालमे काला है। अच्छी बात है, देखा जायगा।

इतना कहकर नन्दराम सोनेका प्रयत्न करने लगा।

दूसरे दिन, प्रातःकाल होते ही, रामनाथने अर्जुनसिंहसे कहा—ठाकुर साहब, आज मै जाऊँगा।

ठाकुर साहबने कहा—आज ही। ऐसी क्या जल्दी है। अभी

एक-दो दिन और ठहर जाइये। टाँग बिल्कुल ठीक होजाने दीजिए।

"टाँग अब बिल्कुल ठीक है।"

"अभी एक-दो दिन और बीत जाने दीजिए। बुधुवा अभी आता होगा—उससे पूछ ले।"

यथा समय बुद्ध आया। उसने टाँगकी पट्टी खोल दी।

अर्जुनसिहने उससे पूछा—बुधुवा, आज बाबूजी घर जाने कह रहे है, तुम्हारी क्या सलाह है?

बुधुवा बोला—कोई हरज नहीं, जाय सकत है। अब कोई चिन्ताकी बात नहीं है।

अर्जुनसिहने पूछा—अभी एक दो दिन और न चलें फिरें तो कैसा?

"तब भी कोई हरज नहीं है।"

"मेरी समझमे तो और अच्छा है। क्यों??"

"हाँ, है तो अच्छा।"

रामनाथ बोल उठे—ठाकुरसाहब। अब मुझे जाने ही दीजिए, नहीं मेरी बड़ी हानि होगी। मेरी टाँग अब बिल्कुल ठीक है। अब चलने फिरनेमे कोई हरज नहीं—क्यों बुद्ध?"

बुद्धने कहा—कोई हरज नहीं है सरकार।

"तो बस, आज मैं चला जाऊँगा।"

अर्जुनसिह म्लान-मुख होकर बोले—जैसी सरकारकी मर्जी, हम तो आपके ताबेदार है।

इसी समय नन्दराम आगया। अर्जुनसिहने नन्दरामसे कहा—

नन्दू, बाबूजी आज जाने कहते हैं। मैं चाहता था कि अभी दो-एक दिन और ठहर जाते, पर बाबूजी नहीं मानते।

नन्दराम बोला—तो जाने दीजिए। वहाँ पहुंचना भी तो जरूरी है।

अर्जुनसिंह हतोत्साहित होकर बोले—अच्छी बात है। तो, किस गाड़ीसे जाइयेगा?

"दो बजे जो गाड़ी जाती है उसीसे चला जाऊँगा।"

इस प्रकार रामनाथका जाना निश्चय हो गया। ग्यारह बजेके लगभग रामनाथने भोजन किया और चलनेकी तैयारी करने लगे।

चलते समय नन्दरामकी माता रामनाथसे मिलने आई जस्सो भी साथ थी। नन्दरामकी माताने कहा—अरे बेटा, ऐसे एक दमसे चलनेकी ठान दी—अभी दो-एक रोज तो और रहते।

रामनाथके कुछ बोलनेके पूर्व ही नन्दराम बोल उठा—कुछ घरके फालतू हैं जो यहाँ पड़े रहें। वहाँ पढ़नेका हरज हो रहा है।

रामनाथने भी कहा—ठीक बात है—बहुत हर्ज हो रहा है, नहीं तो वैसे मेरा घर है—दो एक दिन क्या हफ्ते दो हफ्ते पड़ा रहता।

"तो अब कब आओगे?" ठकुराइनने पूछा।

रामनाथने उत्तर दिया—देखो, समयकी बात है। जब समय मिलेगा आजाऊँगा

"हाँ, आना जरूर—ऐसा न हो यहाँसे जाकर भूल जाओ।"

"भूल कैसे सकता हूं। आप लोगोंको भूलना मेरे वशकी बात नहीं है।"

इतना कहकर रामनाथने जस्सोपर दृष्टि डाली। जस्सो चुपचाप सिर झुकाये खडी थी।

अर्जुनसिहने नन्दरामसे कहा—नन्दराम, तुम बाबूजीके साथ स्टेशन जाओ।

नन्दरामने रुखाईसे कहा—अच्छा चला जाऊंगा।

रामनाथ नन्दराम सहित बहेलीपर बैठकर स्टेशनकी ओर चले। रामनाथ नन्दरामके व्यवहार-परिवर्त्तनसे बहुत व्यथित थे। वह सोच रहे थे कि—"नन्दरामके व्यवहार-परिवर्त्तनका एक कारण यही हो सकता है कि इसने मेरी और जस्साकी बातचीत सुन ली हो। पता नहीं इसने उस वार्त्तालापके क्या अर्थ लगाये हों, ऐसी दशामें अच्छा यही है कि इसकी सफाई हो जाय। ऐसा न हो कि किसी प्रकारकी दुर्भावना उत्पन्न होजाय। यदि ऐसा हुआ तो इसका परिणाम कमसे कम जस्सोके लिए तो अवश्य ही बुरा होगा।" यह सोचकर रामनाथने नन्दरामसे कहा—नन्दराम, कलसे तुम कुछ खिन्न-चित्त हो रहे हो—इसका क्या कारण है?

नन्दराम कुछ क्षणोंतक रामनाथको स्थिर दृष्टिसे देखकर बोला—नहीं, खिन्न-चित्त तो नहीं हू!

"हो क्यों नहीं—अवश्य हो।" रामनाथने कहा।

नन्दरामने कुछ उत्तर नहीं दिया।

रामनाथने पुनः पूछा—क्या बात है? मैंने तुम्हे इतना खिन्न-चित्त कभी नहीं देखा, इसलिए पूछता हू। मेरे साथ तुमने कभी शुष्कताका

व्यवहार नही किया, परन्तु कलसे तुम्हारा व्यवहार अत्यंत शुष्क है। इससे मुझे कितना क्लेश हो रहा है—जानते हो ?

नन्दरामने कुछ विस्मित होकर पूच्छा—क्लेश हो रहा है ?

"हाँ क्लेश हो रहा है। परसोंतक तुम्हारा व्यवहार बडा नम्र तथा स्नेह-पूर्ण था, परन्तु कलसे बहुत ही शुष्क हो गया—क्या इससे मुझे क्लेश न होगा। वैसे तो मुझे कोई परवाह न होती; पर इतने दिनोंमे मुझे तुम्हारे साथ स्नेह हो गया है। इसलिए मैं यह कभी सहन नही कर सकता कि तुम्हे मेरे कारण कोई कष्ट पहुंचे। यदि तुम्हारी खिन्नताका कारण मेरा कोई व्यवहार है तो मुझे बतलाओ।"

नन्दराम कुछ घबराकर बोला—"नही, आपका कोई. . ।"

रामनाथ बात काटकर बोले—यह लोकाचार रहने दो। तुम मेरे यहाँ बहुत दिनों रहे हो—मै तुम्हारा स्वभाव अच्छो तरह जान गया हू। अतएव यदि तुम मुझे लोकाचारकी बातोंसे भ्रममे डालना चाहते हो तो यह तुम्हारा बहुत बडो भूल है। इसलिए या तो साफ़-साफ़ बता दो, या बतानेसे इन्कार कर दो।

नन्दराम बडे असमंजसमे पडा। यद्यपि वह स्वयम् यह चाहता था कि उसे जस्सो और रामनाथके संबन्धमे सब बातें ज्ञात हो जाय; परन्तु उसमें इतना साहस नहीं था कि वह रामनाथसे इस संबन्ध-में हृदय खोलकर बातचीत करे। इधर रामनाथको निर्भीकताने भो उसे कुछ हतबुद्धि कर दिया। उसने सोचा—"यह तो इस प्रकार बातें कर रहे है मानो इन्होंने कोई खोटा काम नहीं किया है। ऐसी

दशामें यदि मैंने कुछ कहा और मेरी धारणा गलत निकली तो मुझे बहुत लज्जित होना पड़ेगा।" यह सोचकर नन्दराम संकोचमें पड़ा हुआ था। उसकी यह दशा देखकर रामनाथने कहा—"देखो नन्द-राम, हृदयोंकी सफाई हो जाना बहुत अच्छा है। चाहे इससे थोड़े समयके लिए कटुता ही क्यों न उत्पन्न हो जाय। परन्तु यदि तुमने मेरे सम्बन्धमें कोई भ्रम-पूर्ण धारणा बना ली है और उसके कारण तुम मेरे प्रति अपने हृदयमें घृणा तथा द्वेषको स्थान दे रहे हो तो यह तुम्हारी बड़ी भारी भूल है—मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि तुम यह बड़ा पाप कर रहे हो। यदि इसका कोई बुरा परिणाम हुआ तो उसके उत्तरदाता भी तुम्हीं होगे। इसलिए मैं एक बार फिर अनु-रोधपूर्वक तुमसे कहता हूँ कि अपने हृदयको मेरे सामने खोलकर रख दो। मैंने अबतक तुम्हारा उपकार ही किया है—इसलिए मुझसे तुम्हें सदा अपनी भलाई ही की आशा रखनी चाहिए। तुम इसके विपरीत कर रहे हो, यह बड़े दुखकी बात है।"

नन्दराम रामनाथकी बात सुनकर व्याकुल हो गया। रामनाथके प्रति उसके हृदयमें पुनः वही पुराना स्नेह उमड़ने लगा। उसने राम-नाथके दोनों हाथ पकड़कर उन्हें अपने नेत्रोंसे लगाते हुए कहा—"मेरे स्वामी, मेरे अन्नदाता! मैं आपसे कुछ भी न छिपाऊँगा—मैं अपने पेटका सब पाप बतानेको तैयार हूँ, परन्तु इस समय नहीं—एकान्तमें।"

रामनाथने बहेली हाँकनेवालेकी ओर देखा और यह समझकर कि उसकी उपस्थितिके कारण नन्दराम संकोच करता है—उन्होंने

बहेलवानसे कहा—जरा बहेली रोक देना—हम दोनों पैदल चलेंगे। बहेली तुरन्त रोक दी गई। रामनाथ उतर पड़े और नन्दरामसे भी उतरनेको कहा। नन्दरामके उतर पड़ने पर उन्होंने बहेलवानसे कहा—तुम चलो हम पीछे-पीछे आते हैं।

नन्दराम बोल उठा—गाड़ीको देर तो न हो जायगी?

"नहीं, मैं इसीलिए एक घंटा पहले चल दिया हूं। अभी गाड़ीमें इतनी देर है कि हम कमसे कम एक घण्टा इसी स्थानपर रुक सकते हैं।"

नन्दरामने बहेलवानसे कहा—तुम यहाँ छायामें बहेली रोक लो अभी बड़ी देर है—थोड़ा ठहरकर चलेंगे। आइये बाबूजी सामने बागमें चलकर बैठें—वहाँ एकान्तमें बात होगी।

दोनों आमके बागमें पहुंचे। वहाँ बागकी मेड़के ऊपर दोनों बैठ गये। रामनाथने कहा—हाँ, अब कहो। परन्तु सच-सच कहना।

"आपसे झूठ बोलूं यह कभी नहीं हो सकता। जब बताने पर तैयार हुआ हूं तो सच ही सच बताऊंगा। कल जिस समय जस्सो आपके कमरेमें दूध लेकर गई थी उसी समय मैं भी आपके कमरेमें आरहा था। द्वार परसे मैंने आपको कुछ कहते हुए सुना। वे शब्द ऐसे थे कि मैं तुरन्त वहीं ठिठुक गया। इसके पश्चात् मैंने और भी बातें सुनीं। अन्तमें जब— ।"

रामनाथने उसे रोककर कहा—बस अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं। मैं पहलेसे ही यह समझे हुए था कि तुम्हारा यह शुष्क व्यवहार इसी कारणसे है कि तुमने हम दोनोंका वार्त्तालाप सुन लिया

है—वही बात निकली। खैर—अब मैं तुम्हे बताता हूँ कि मेरा और तुम्हारी कन्याका क्या और कैसा संबन्ध है।

इतना कहकर रामनाथने आदिसे लेकर अन्त तक सब बातें नन्दरामको बता दीं और अन्तमे कहा—मेरा और जस्सोका शुद्ध प्रेम है—हृदयमे हम एक दूसरेको चाहे जो समझते हों और चाहे जिस दृष्टिसे देखते हों, पर ऊपरी व्यवहार उतना ही पवित्र तथा शुद्ध रहा है जितना कि सगे भाई-बहिनका होता है। कहो तुम्हे मेरी बातपर विश्वास होता है ?

नन्दराम गद्गद कंठसे बोला—आपकी बातपर अविश्वास करना ईश्वरपर अविश्वास करना है। बाबूजी, मुझे क्षमा करो—कलसे लेकर आजके घण्टे भर पहले तक मेरे हृदयमे आपके विरुद्ध जो जो विचार उत्पन्न हुए उनके लिए मुझे क्षमा कर दो। मैं बड़ा नीच हूँ, बडा पापी हूँ।

रामनाथने कहा—नहीं नन्दराम, क्षमा करनेकी कोई बात नहीं, तुमने जो कुछ किया स्वाभाविक किया। प्रत्येक मनुष्य इस दशा-मे ऐसी ही बातें सोचता जसी कि तुमने सोचीं। इसके लिए मैं तुम्हे ज़रा भी दोषी नहीं ठहराता। हाँ, यदि तुम इस समय मेरे कहने पर भी अपने हृदयकी बात न बताते तब तो तुम अवश्य दोषी हो जाते, पर अब नहीं हो। खैर, अब तुम सब बातें जान गये—अब तुम मेरे संबन्धमे जो धारणा बनाओगे, उसकी मुझे शिकायत न होगी, क्योंकि तुम्हे सभी बातें ज्ञात हो गई है। अच्छा अब चलना चाहिए।

यह कहकर रामनाथ उठ खड़े हुए। नन्दराम भी चिन्तित भाव-से उठा और रामनाथके साथ-साथ आकर बहेलीपर बैठ गया।

बहेली चली। नन्दराम उसी प्रकार गम्भीर बैठा था मानो वह किसी गहरी चिन्तामें हो।

रामनाथने पूछा--क्या सोच रहे हो नन्दराम ? नन्दरामने एक दीर्घ निश्वास छोडकर कहा—बाबूजी, जान पड़ता है मेरे लिए इस संसारमे सुख-शान्ति नहीं। न जाने किस बुरी घडीमे मेरा जन्म हुआ था—जबसे होश सँभाला दुख ही झेलता रहा। सोचा था कि आपके यहाँ रहकर शांति मिलेगी। परन्तु वहाँ भी न रह पाया। फिर सोचा कि अब अपने घर आ गया—माता-पितासे सफ़ाई हो गई—अब जीवन शान्तिपूर्वक बीतेगा, परन्तु अब भी शान्ति न मिली और दूनी अशान्ति बढ गई।

रामनाथ विस्मित होकर बोले—अब अशान्तिका क्या काम है, नन्दराम ?

"क्या आप समझते हैं कि ऐसी दशामे मुझे शान्ति मिल सकती है ?"

"किस दशामें ?"

"किस दशामें ? इस दशामें जब कि मैं यह देखूँगा कि मेरी जस्सो, जिसके लिए मैंने गली-गलीकी ठोकरें खाकर, अनेक तरहके कष्ट झेलकर, अपनेको जीवित रक्खा, जिसका मुख देखकर मैं भिखारीकी दशामे भी सुखी था। जिसको सुखी देखनेके लिए मैं अपने समस्त दुखोंको भूल गया, मेरी वही जस्सो दुखी है।"

रामनाथ नन्दरामकी बातका मर्म्म समझकर बोले—"परन्तु इसके लिए तुम कर ही क्या सकते हो ?"

"इसीलिए तो कहता हूँ कि मेरे भाग्यमे सुख शान्ति नहीं है। सच तो यह है कि मेरे पापोंका प्रायश्चित्त अब आरम्भ हुआ है। यदि ऐसा न होता तो यह दशा क्यों होती।"

रामनाथने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। यथा समय दोनों स्टेशन पर पहुच गये। इनके पहुँचनेके दस मिनिट पश्चात् ही गाड़ी आ गई। रामनाथ गाड़ीमे बैठ गये। नन्दराम विदा होने लगा। रामनाथने पूछा—"मेरी ओरसे अबतो तुम्हारे हृदयमे कोई बात नहीं है ?"

नन्दरामने विषाद-पूर्ण स्वरसे कहा—कोई नहीं, बिल्कुल नहीं। आप सब निर्दोष है, दोष केवल मेरे भाग्यका है। मैं जानता हूं कि यह मेरे कर्म्मोंका फल मिल रहा है। खैर, ईश्वर आपका भला करे। आपने यह भी उपकार ही किया जो मुझे सब बातें बता दीं—अन्यथा और भी अधिक कष्ट होता। मेरा अपराध क्षमा कीजिएगा और मुझे सदा अपना दास समझकर कृपा दृष्टि रखिएगा। और यह मैं आपसे कहता हूं—इसे न भूलिएगा कि जस्सोको सुखी करनेके लिए मैं सब कुछ करूंगा—कोई बात उठा न रक्खूंगा, चाहे मेरे प्राण भले ही चले जांय।

यह कहकर नन्दराम रामनाथसे विदा हुआ। रामनाथ अश्रु-पूरित नेत्रोंसे उसकी ओर ताकते रह गये।

—:*:—

२१

बड़े दिन (क्रिसमस) की छुट्टियोंमें रामनाथ कानपुर गये। वहाँ पहुँचने पर पहली बात जो उन्हें ज्ञात हुई वह यह थी कि उनके विवाहकी बातचीत हो रही है। पहले पहल यह समाचार उन्हें अपनी भगिनी चम्पासे मिला। चम्पाने उनसे कहा—"भाई जी, आपको एक शुभ समाचार सुनाऊँ?"

"कैसा शुभ समाचार?" रामनाथने विस्मित होकर पूछा।

"मिठाई खिलाने कहो तो सुनाऊँ।"

"जान पड़ता है बहुत दिनोंसे मिठाई खानेको नहीं मिली।" रामनाथने मुस्कराकर कहा।

"चम्पा कुछ लज्जित होकर बोली—वाह! मिली क्यों नहीं, मिठाई तो रोज ही खाती हूँ।"

"तो फिर मिठाईके लिए इतनी लालायित क्यों है?"

"वह ऐसी ही मिठाई है कि जिसके लिए लालायित हुए बिना नहीं बनता।"

रामनाथ सोचने लगे—"जस्सोके संबंधकी बात है क्या। मेरे लिए तो संसारमें केवल वही समाचार शुभ है जो जस्सोके विषयमें हो। चलते समय नन्दरामने कहा—जस्सोको सुखी करनेके लिए मैं कुछ उठा न रक्खूंगा। कहीं उसीने तो कोई संदेश न भेजा हो।" यह सोचकर उन्होंने चम्पासे पूछा—"क्या समाचार है? कुछ बतावेगी भी।"

"पहले मिठाई खिलाने कहो।"

रामनाथ अधीर होकर बोले—अच्छा, यदि सत्य ही शुभ समाचार हुआ तो मिठाई खिलाऊँगा।

"बाबूजीने मेरे वास्ते एक बडी सुन्दर भाभी ढूढी है।"

रामनाथका कलेजा धडकने लगा। उन्होंने पूछा—"कहाँ?"

"बनारसमें।" चम्पाने चंचलतापूर्वक उत्तर दिया।

रामनाथपर मानो वज्रपात हुआ। उनके मुंहसे केवल इतना निकला—"दुर पगली।" यह कहकर वह शीघ्रतापूर्वक अपने कमरेमें चले आये और कुर्सीपर बैठ गये। बडी देरतक बैठे सोचते रहे—कभी बीचमे उठकर टहलने लगते थे। इस समय वह सोच रहे थे—"जिस बातका भय था वह सामने आ गई। अब इसे कैसे टालूँ? यदि मैंने विवाह कर लिया तो जस्सो अपने मनमे क्या कहेगी। —क्या मैं उसे मुंह दिखाने योग्य रहूंगा? कदापि नही। क्या करूं? कोई परामर्श देनेवाला भी तो नहीं है। ब्रजकिशोर मेरा कच्चा चिट्ठा जानता है। वह होता तो उससे सलाह लेता। परन्तु लखनऊ कुछ दूर नहीं है, ब्रजकिशोरसे मिलकर इस सम्बन्धमें सलाह लेना चाहिए। बस यही ठीक है। कल सवेरेकी गाडीसे जाऊँगा।" यह सोचकर उन्हे कुछ ढाढस बंधा।

उस दिन दोपहरको भोजन करनेके पश्चात् उनके पिताने उन्हे बुलाया और कहा—रामनाथ, बनारसमें तुम्हारे विवाहकी बातचीत पक्की हो रही है। बाबू जगदीशप्रसाद जो वहाँके जमींदार और रईस हैं, अपनी कन्याका सम्बन्ध तुमसे करना चाहते हैं। लड़की

सुन्दर और पढ़ी-लिखी है। जहाँ तक मेरा अनुमान है, बसंतपंचमी-पर टीका चढ़ जायगा और गर्म्मियोंमे विवाह हो जायगा। तबतक तुम्हारी परीक्षाएँ भी समाप्त हो जाँयगी—क्यों, है न ठीक ?

रामनाथने कहा—अभी विवाहकी कौन जल्दी है।

"क्यों, जल्दी क्यों नहीं, क्या बुढ़ापेमे विवाह होगा ?"

"मेरी इच्छा तो यह थी कि मैं एल-एल० बी० पास कर लेता तब विवाह होता।"

"एल-एल० बी० पास ही हो जाओगे। प्रथम वर्षकी परीक्षा तो विवाहके पहले ही हो जायगी। रह गया दूसरा वर्ष, सो पारसाल हो जायगा। विवाहसे उसमे कुछ बाधा नहीं पड़ेगी।"

रामनाथने सिर झुकाकर कहा—"मैं अभी विवाह नहीं करना चाहता।"

"तुम नहीं चाहते, पर हम तो चाहते है। चारों ओरसे तुम्हारे विवाहके तकाजे हो रहे है। अपना-पराया जो मिलता है वह यही कहता है कि रामनाथका विवाह क्यों नहीं हुआ। अभी तक तो शिक्षाका बहाना था—अब, जब कि तुम्हारी शिक्षा समाप्त हो रही है, तो क्या कहा जाय ?"

"मैं कोई लडकी तो हूँ नहीं जो विवाह न होनेसे बदनामी हो।"

बाबू श्यामनाथ हँस पडे। हंसते हुए बोले—क्या लड़केका विवाह न होनेसे बदनामी नहीं होती ? यह तुमसे किसने कहा ? भले आदमियोंमें तो चाहे लडका हो या लडकी—उचित समयपर विवाह न होनेसे बदनामी होती ही है।

"वह समय अब नहीं रहा।"

"तो अभी वह समय भी नहीं आया कि यूरोपियनोंकी भांति पुरुष तीस चालीस वर्ष तक अविवाहित रहे।"

"वैसे आपकी जैसी इच्छा हो, मैं उससे बाहर नहीं हूं, परन्तु मेरी इच्छा तो अभी विवाह करनेकी नहीं है।"

"इसमे तुम्हारी इच्छा नहीं चलेगी। यह कर्त्तव्य हमारा है, अतएव इसमें हमारे इच्छानुसार कार्य होगा।"

पिताकी इस बातपर रामनाथको कुछ कहनेका साहस न हुआ—यद्यपि हृदयमें पिताकी इस स्वेच्छाचारितापूर्ण बातपर वह बहुत कुढ़े।

बाबू श्यामनाथ पुत्रको मौन देखकर बोले—"कदाचित तुम यह समझते हो कि न जाने लड़की कैसी हो, सो उसके लिए मैंने बाबू जगदीशप्रसादको लड़कीका फोटो भेजनेके लिए लिखा है। सम्भवतः दो एक दिनमे फ़ोटो आया ही चाहता है।"

रामनाथ इसपर कुछ न कहकर बोले—कल जरा मैं लखनऊ जाऊँगा।

"क्यों?"

"एक मित्रसे मिलना है।"

"लौटोगे कब?"

"कल शाम तक ही लौट आऊंगा।"

"अच्छी बात है, चले जाना।"

दूसरे दिन रामनाथ सवेरे साढ़े आठ बजेकी गाड़ीसे लखनऊ

पहुँचे। ब्रजकिशोर इन्हे देखते ही बोले—"हेलो, रामनाथ! तुम यहाँ कहाँ ?

"तुमसे मिलने आया हूं।"

"असबाब कहाँ है ?"

"असबाब-वसवाब कुछ नहीं लाया—शामको लौट जाऊँगा।"

"कोन ? अब तुम आज थोड़े ही जा सकते हो।"

"यार, पहले दम तो लेने दो—आते ही लडनेपर तैयार हो गये।"

"खूब दम ले लीजिए, परन्तु मुझे दम न देना, मैं आज आपको नहीं जाने दूंगा।"

रामनाथने पहले तो हाथ-मुंह धोया—तत्पश्चात् चाय पी। इससे निवृत्त होकर उन्होने ब्रजकिशोरसे कहा—तुमसे एक बडे ही गम्भीर बिषयपर परामर्श लेने आया हूं।

"फर्माइये। परन्तु पहले यह बता दीजिए कि घरसे भागकर तो नहीं आये हैं ?"

रामनाथ हँस पड़े, बोले—तुम्हारा हँसोडपन नही जाता।

"अच्छा खैर, अब बताओ क्या बात है ?"

"यह तो तुम्हे मालूम ही है कि जस्सोका मेरा प्रेम बहुत ही सुदृढ़ है।"

"तो प्रेम होगया ?"

"प्रेम होगयाके क्या अर्थ ?"

"उस समय तुम कहते थे कि तुम अभी यह नही जान सके हो कि जस्सोसे तुम्हे प्रेम है या आसक्ति।"

रामनाथ मुस्कराकर बोले—"खूब याद रक्खा।"

"वह बात ही याद रखने योग्य थी।"

"खैर, यह तो मैं तुम्हे अब भी ठीक-ठीक नहीं बता सकता—यद्यपि मैं स्वयम् यह विश्वास करता हूँ कि वास्तवमें मैं जस्सोसे सच्चा प्रेम करता हूँ। परन्तु, अब एक बड़ी भारी मुसीबत यह आ पड़ी है कि पिताजी मेरा विवाह कर रहे हैं।"

"बिल्कुल ठीक है—उनका कर्त्तव्य है—वह अवश्य करंगे।"

"परन्तु मैं तो जस्सोके अतिरिक्त और किसीसे विवाह नहीं करना चाहता।"

"तुम भी बेजा नहीं कहते हो।"

"अजीब आदमी हैं आप—व, भी ठीक और यह भी ठीक।"

"निस्सन्देह। पिताजी अपना कर्त्तव्य कर रहे है और तुम जो विवाह नहीं करना चाहते—यह तुम्हारा कर्त्तव्य है।"

"परन्तु, दोनों व्यक्तियोंके कर्त्तव्य पूरे होना असम्भव है। इसलिए अब यह बताओ कि ऐसे अवसर पर मुझे क्या करना चाहिए।"

"मेरे हृदयकी बात पूछते हो?"

"हाँ, हृदयकी बात।"

"मेरे हृदयकी बात तो यह है कि तुम अपना विवाह कर डालो।"

रामनाथ चौंक पड़े। उन्होंने ब्रजकिशोरको सिरसे पैर तक देखकर कहा—"क्या कहते हो। विवाह कर डालूँ?"

"हाँ, विवाह कर डालो।"

"क्यों?"

"इसलिए कि तुम्हें विवाह करना पड़ेगा। विवाह नहीं करोगे तो क्या जन्म भर अविवाहित रहोगे।"

"हाँ, विवाह होगा तो जस्सोके साथ अन्यथा अविवाहित रहूँगा।"

ब्रजकिशोर मुस्कराने लगे। रामनाथने पूछा—"क्यों, आप मुस्कराते क्यों है ?"

"आप बातें ही ऐसी करते हैं। क्या आप समझते हैं कि जस्सो से आपका विवाह होना सम्भव है ?"

"क्यों, सम्भव होनेको क्या हुआ ?"

"व्यर्थ बात है। जस्सोसे आपका विवाह कभी नहीं होगा—यह आप नोट कर लीजिए।"

"क्यों ?"

"आप खत्री वह ठाकुर। ऐसी दशामें विवाह कैसे होगा।"

"खत्री भी तो ठाकुर ही हैं।"

"हुआ करें, पर, परस्पर विवाह तो नहीं होते।"

"हाँ होते तो नहीं हैं।"

"इसके अतिरिक्त, न तो आपके माँ-बाप और न उसके माँ-बाप यह स्वीकार करेंगे कि अपनी भाई-बिरादरी छोड़कर अन्य जातिवालेसे विवाह करें।"

"परन्तु एक बात है, उस्ताद। महीना भरके लगभग हुआ मैं नन्दरामके गाँवपर गया था वहाँ एक बड़ी मार्केकी घटना हुई।

ब्रजकिशोरने उत्सुकतापूर्वक पूछा—"वह क्या ?"

रामनाथने सब वृत्तान्त कह सुनाया।

ब्रजकिशोरने कहा—"ओफ ओह! यहाँ तक नौबत पहुंच गई।"

रामनाथ मुस्कराकर बोले—हाँ मित्र, परन्तु मैंने भी कितने जीवटका काम किया—न कहोगे। नन्दरामसे सब कह दिया।"

"निस्सन्देह बड़े साहसका काम किया। और यह अच्छा हुआ, अन्यथा नन्दराम तुम्हारा शत्रु हो जाता।"

"हाँ और क्या—यही सोचकर तो मैं जानपर खेल गया। हाँ तो नन्दरामने स्टेशनपर मुझसे विदा होते समय कहा था कि—'जिसमें जस्सो सुखी होगी मैं वही करूंगा।' इसके तुम क्या अर्थ लगाते हो?"

"इसके अर्थ तो यही हुए कि यदि जस्सो केवल तुमसे विवाह करके सुखी हो सकती है, तो नन्दराम उसका विवाह तुम्हारे ही साथ करेगा।"

"अब कहिये, ऐसी दशामें मैं विवाह कैसे करलूँ। आज मैं विवाह करलूं और कल नन्दराम जस्सोका विवाह मेरे साथ करनेको तैयार हो जाय तो फिर क्या होगा?"

ब्रजकिशोर हँस पड़े, बोले—ये सब हवाई किले हैं। जबतक नन्दरामके पिता जीवित हैं और आपके पिता जीवित हैं तबतक आपका और जस्सोका विवाह असम्भव है। इसलिए, आपके लिए सबसे उत्तम मार्ग यह है कि आप विवाह कर डालें और जस्सोको बिल्कुल भूल जांय।"

"रामनाथ कुछ देरतक ब्रजकिशोरकी बातपर विचार करके

बोले—"जस्सोको भूल जाऊँ! यह तो इस जन्ममें नहीं होगा। और, मैं चाहे भूल भी जाऊँ; पर जस्सो भी मुझे भूल सकेगी, इसमें मुझे सन्देह है।"

"सब भूल जायगी। इधर आप जहां नवबधूके प्रेममें फँसे वहां आप भूल जांयगे और उधर वह जहां अपने पतिसे मिली वह भी भूल जायगी।"

"किससे मिली, अपने पतिसे ?"

"हां और क्या—आखिर जस्सोका भी तो व्याह कहीं न कहीं होहीगा—क्वांरी तो बैठी नहीं रहेगी।"

"बस! रहने दो! मुझसे यह बात नहीं सुनी जाती। जस्सोका विवाह किसी दूसरेसे हो—यह बात मैं सुनना तक नहीं चाहता।"

ब्रजकिशोर मुस्कराकर बोले—"सुनी जाय या न सुनी जाय, परन्तु होगा अवश्य।"

"मैं आया था तुमसे सलाह लेने—सोचा था कोई उपाय बताओगे, सो तुम उल्टा पाठ पढ़ा रहे हो।"

"भई जो सच्ची बात होगी वही कहूँगा—तुम्हारी तुष्टिके लिए ऊटपटांग तो बकूँगा नहीं।"

रामनाथ हतोत्साहित होकर बोले—यह तो तुम कुछ अच्छी बात नहीं बता रहे हो।

"तो फिर आप चाहते क्या हैं। घरमें रहोगे तो बिना विवाह किये बच नहीं सकोगे। यदि विवाह न करना चाहोगे तो घर छोड़ना पड़ेगा। सो इसकी सलाह मैं तुम्हें कदापि न दूँगा। नन्दरामका व्याह-

रण तुम्हारे सामने है। यद्यपि वह अपनी प्रेमिकाको पा गया परन्तु सब कर्म हो गये और प्रेमिका भी न रही। उसने तो ख़ैर अपनी प्रेमिका पा भी ली थी, परन्तु तुम्हे घर छोड़ने पर भी जस्सो नहीं मिलेगी। तुम अकेलेही चाहे जहाँ चले जाओ, पर जस्सोको साथ नहीं ले जा सकते—वह तुम्हारे बसके बाहरकी बात है। इसलिए भाई साहब, यह इश्क़बाजी छोडिये—यह आपके बूतेका रोग नहीं है। इसमें वही पड सकता है जो माँ-बाप, घर-द्वार, लाज-शरम सबको तिलाञ्जलि दे दे। आनन्दसे घर जाकर विवाह करो और भले आदमियोंकी तरह जीवन मे प्रविष्ट हो जाओ।"

"परन्तु जस्सोकी क्या दशा होगी?"

"दशा क्या होगी—वह भी सब्र कर लेगी। इसके अतिरिक्त और वह करही क्या सकती। वह तो आपसे अधिक परतन्त्र है।"

रामनाथ एक दीर्घ-श्वास खींचकर बोले—"पर इस हृदयको कैसे समझाऊँ, यह नहीं मानता।"

"नहीं मानेगा तो जलील भी होगा।"

"दो व्यक्ति मेरे अनुकूल है—एक तो स्वयम् जस्सो दूसरे उसका पिता। इससे कुछ आशा होती है कि कदाचित कभी ऐसा समय आ जावे जो मेरा उसका विवाह हो सके।"

"परन्तु आपके विरुद्ध कौन-कौन हैं—यह भी सोचा है? आपके प्रतिकूल आपकी और उसकी जाति-भिन्नता है, नन्दरामका पिता और उसकी माता है। इधर आपके माता-पिता हैं। जो आपके प्रतिकूल हैं वे

अनुकूल पक्षसे अधिक शक्तिशाली हैं। इसके अतिरिक्त क्या आप समस्त आयु प्रतीक्षा करेंगे ?"

"हाँ यह तो तुम्हारा कहना ठीक है, परन्तु—।"

"परन्तु क्या ? अच्छा तो यदि आपकी समझमे ये बातें नहीं आतीं, तो जाइये जस्सोको किसी युक्तिसे उडा लाइये—बन्देका घर हाजिर है, यहाँ लाकर उससे विवाह कीजिए। नन्दरामकी जीवनीको दोहरा दीजिए। देखा जायगा—कहो अबतो तुम्हारे मनकी कह दी।"

रामनाथ लम्बी साँस खींचकर बोले—"यह भी तो मुझसे नहीं हो सकता— कठिनता तो यही है।"

"यह भी नहीं हो सकता, वह भो नहीं हा सकता—तो फिर हो क्या सकता है ? विवाह न करोगे—बस यह हो सकता है, पर मैं कहता हूं कि यह भी तुममे न हो सकेगा। तुम विवाह अवश्य करोगे।"

रामनाथने मुस्कराकर कहा—"सम्भव है।"

"तो बस, जो सम्भव है वही होगा।"

रामनाथ मित्रके इस वाक्य पर बहुत हँसे और बोले—"यह अच्छी कही—यह भी सम्भव है कि मैं विवाह न करूँ।"

ब्रजकिशोरने सिर हिलाते हुए कहा—"सम्भव तो एकही बात हो सकती है।"

रामनाथ ब्रजकिशोरके मुखके पास अपना मुख लाकर बोले—"नहीं एकबात और भी सम्भव हो सकती है। वह तुम्हे नहीं सूझी—मैं तुम्हे बताता हूं। वह बात यह है कि, यह भी सम्भव हो सकता है कि मेरा और जस्सोका विवाह हो जाय। यदि प्रकट नहीं तो गुप्त रूपसे

ही सही। जब हम विवाह-सूत्रमें बंध जांयगे तब मुझे विवाह सम्बन्ध प्रकट कर देनेमें कोई भी भय न होगा। उस समय जो कुछ परिणाम होगा उसे मैं झेल लूंगा।"

ब्रजकिशोर मुस्कराकर बोले—"परन्तु जस्सोसे विवाह हो कैसे? प्रश्न तो यह है।"

"यदि जस्सोका पिता चाहे तो हो सकता है।"

रामनाथकी यह बात सुनकर ब्रजकिशोर विचारमें पड़ गये। कुछ देर पश्चात बोले—"हाँ यदि पिता चाहे तो हो सकता है, पर मुझे आशा नहीं कि वह चाहेगा।"

"जस्सोको सुखी करनेके लिए वह सब कुछ कर सकता है। यदि उसे यह विश्वास हो जाय कि जस्सो केवल मेरेही साथ विवाह करके सुखी हो सकती है तो वह अवश्य विवाह करने पर तैयार हो जायगा। अब केवल प्रश्न यह है कि वह गुप्त रूपसे तैयार होगा या नहीं।"

"उसे यदि विवाह करना होगा तो कदाचित तैयार भी हो जाय। यदि वह अपने माता-पिताको राजी कर सका तब तो उसे गुप्तरूपसे विवाह करनेकी कोई आवश्यकता न रहेगी। परन्तु मुझे इसमें सन्देह है कि उसके माता-पिता राजी हो जांयगे। इस लिए केवल एक यही उपाय है कि यदि नन्दराम गुप्तरूपसे विवाह करना चाहे तो हो सकता है।"

"गुप्तरूपसेही ठीक भी होगा, क्योंकि नन्दराम चाहे अपने माता-पिताको उद्यत कर भी ले, पर मैं कदाचित ही अपने पिताको राज़ी कर सकूँगा।"

"हाँ यह बात भी पक्की है। परन्तु भाई, गुप्तरूपसे विवाह करनेमें भी कोई अच्छा परिणाम नहीं निकलेगा।"

"उस दशामें तो मैं सबकुछ सहन कर लूंगा। अधिक से अधिक यह होगा कि पिताजी मुझे त्याग देंगे—मैं अलग हो जाऊंगा।"

ब्रजकिशोरने आश्चर्यसे नेत्र विस्फारित करके कहा—"तो जस्सो के लिए तुम अपने माता-पिताको भी छोड दोगे ?"

"मैं क्यों छोड़ूगा—छोड़ेंगे तो वेही—मैं अपने आप तो अलग नहीं होऊँगा।"

"वह एक ही बात है। अलग होनेका कारण तो तुम्हीं उत्पन्न करोगे।"

"हाँ इससे तो मैं इन्कार नहीं कर सकता।"

इसके पश्चात् दोनों कुछ क्षणों तक मौन बैठे रहे।

तदुपरात रामनाथ बोले—"यदि नन्दरामसे बातचीत हो सके तो कुछ उपाय निकल सकता है।"

"तो नन्दरामसे बातचीत करके देख लीजिए—अरमान क्यों रह जाय।"

"मेरा बात करना ठीक न होगा—इस कार्यको कोई दूसरा करे तो ठीक है।"

"तो किसी दूसरेसे कहलवाओ।"

"तुम्हारे अतिरिक्त और कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो मेरा यह रहस्य जानता हो। यदि तुम चाहो तो कर सकते हो।"

"कौन मैं ? यार मुझे इस झगड़ेमें मत डालो।"

"देखो ब्रजकिशोर—मेरे घनिष्ट मित्र तुम्हीं हो। तुम्हारे अतिरिक्त इस विषयमें और कोई मेरी सहायता नहीं कर सकता। यदि तुम मेरी सच्ची सहायता करना चाहते हो तो तुम यह काम अपने हाथ में लो।"

ब्रजकिशोर विचारमें पड गये। थोडी देर पश्चात् बोले—"मैं व्यक्तिगत रूपसे तो इसके विरुद्ध हूं, परन्तु केवल तुम्हारे कहनेसे मैं ऐसा कर सकता हू।"

"खैर किसी तरह करो परन्तु करो अवश्य—यही मेरी प्रार्थना है।"

"नन्दरामसे कहां भेंट हो सकती है?"

"उसके गांवमें।"

यह कहकर रामनाथने नन्दरामके गांवका पूरा-पता बता दिया। ब्रजकिशोर बोले—"तो मुझे उसके गांव जाना पड़ेगा?"

"हां हां, कोई खटकेकी बात नहीं है, परेशानी तो तुम्हे कुछ अवश्य होगी।"

"परन्तु उन लोगोंसे मेरा कोई परिचय नहीं है।"

"मैं चिट्ठी लिख दूंगा—परिचय हो जायगा।"

"वहां जाऊं किस बहानेसे?"

"शिकार खेलनेके बहानेसे।"

"शिकार तो मैं खेलता नहीं हूँ।"

"परन्तु बन्दूक तो तुम्हारे पास है?"

"हां बन्दूक तो है।"

"तो बस, बन्दूक साथ लेते जाना। वहाँ पहुँचकर अस्वस्थता का बहाना करके शिकार न खेलना—झगड़ा खतम। यह सब नन्द-रामके पिताके कारण करना पड़ेगा, अन्यथा कोई आवश्यकता न थी। नन्दरामसे एकान्तमें यह सब वृत्तान्त कहना—और उसका उत्तर लेकर चले आना।"

"अच्छी बात है—जैसा कहोगे करना पडेगा। अच्छा जाऊँ कब?"

"यह तुम्हारी सुविधा पर निर्भर है। परन्तु जहाँ तक जल्दी हो अच्छा है।"

"अभी चार पाँच दिन मुझे छुट्टी है। कहो तो कल चला जाऊ।"

रामनाथ प्रसन्न होकर बोले—"बहुत उत्तम। कल चले जाओ।"

इसी समय ब्रजकिशोरके नौकरने आकर कहा—"खाना तैयार है।"

ब्रजकिशोर रामनाथसे बोले—"अच्छा, अब स्नान करके भोजन करो। दोपहरको नन्दरामके नाम चिट्ठी लिख देना—मैं कल चला आऊँगा।"

२२

शामको चार बजेके लगभग ब्रजकिशोर चन्द्रपुर ग्रामके स्टेशन पर उतरे। उनके साथ एक नौकर था—जो उनका बिस्तरा तथा बन्दूक लिये हुए था। स्टेशनसे उन्होंने चन्द्रपुर तकके लिए एक इक्का किया और पाँच बजे चन्द्रपुर पहुंच गये। उस समय अर्जुनसिंह अपनी चौपालमें बैठे थे। ब्रजकिशोर सीधे चौपालमे चले गये और अर्जुनसिंहसे उन्होंने पूछा—"ठाकुर अर्जुनसिंह आपही हैं?"

अर्जुनसिंहने उन्हे सिरसे पैर तक देखकर कहा—"जी हाँ, कहिये।"

"कानपुरके बाबू रामनाथने मुझे भेजा है।"

"अच्छा।" कहकर अर्जुनसिंह उठे और बोले—"आइये।"

ब्रजकिशोरका नौकर बिस्तर लिये उनके पीछे था। उसको ओर देखकर अर्जुनसिंहने कहा—"यह आपके साथ है न?"

ब्रजकिशोरके "हाँ" कहने पर अर्जुनसिंहने अपने एक आदमी से कहा—"जिउराखन—जाओ, कमरा खोलो और बिस्तर रखवाओ और नन्दरामको खबर करो। कहना बाबू रामनाथके पाससे एक बाबू आये हैं। (ब्रजकिशोरसे) आप इधर निकल आइये—इस कुर्सी पर बैठ जाइये।"

ब्रजकिशोर चौपालमें पड़ी हुई एक कुर्सी पर बैठ गये। जिउराखन उनके नौकरको साथ ले गया। थोड़ी देर पश्चात् नन्दराम

आगया। उसने ब्रजकिशोरको देखकर मुस्कराते हुए कहा—"ओहो, बाबूजी हैं—कहिये सब आनन्द ?"

ब्रजकिशोर मुस्कराकर बोले—"तुमने मुझे पहचान लिया ?"

"हाँ कानपुरमे बाबूजीके यहाँ एक बार आपको देखा था। आपने मुझसे मेरा हालचाल पूछा था।"

"ठीक है। खूब याद रक्खा—मैं तो समझता था कि शायद भूल गये हो।"

नन्दराम दाँत निकालकर बोला—"वाह। आपको कैसे भूल जाऊँगा—आपसे तो घंटा भर बातचीत हुई थी।"

ब्रजकिशोरने जेबसे रामनाथकी चिट्ठी निकालकर दी। चिट्ठी हिन्दीमें थी। नन्दरामने पढी। चिट्ठीमे लिखा था—"प्रिय नन्दराम सिंह, जय रामजीकी। मैं आजकल कानपुरमे हूँ—बडे दिनकी छुट्टियोंमे घर आया हूँ। मेरे मित्र बाबू ब्रजकिशोर तुम्हारे गाँवमें शिकार खेलनेके लिए जाते हैं। आशा है तुम उनका समुचित आदर-सत्कार करोगे। यहाँ सब प्रकार कुशल है। अपने पिताजी तथा माताजीसे मेरा प्रणाम कह देना। चम्पा बीबी जस्सोको राम-राम कहती हैं। यहाँके योग्य जो कार्य हो निस्सङ्कोच लिखना। भवदीय—रामनाथ।"

नन्दरामसिंहने चिट्ठी अपने पिताको भी सुनाई और तत्पश्चात ब्रजकिशोरसे कहा—"आपका घर है, जबतक जी चाहे रहिये। और बाबूजीकी चिट्ठीकी क्या आवश्यकता थी—आप वैसे भी आ सकते थे।"

ब्रजकिशोर बोले—"मैं समझा शायद भूल गये हो। और दूसरे, चिट्ठी तो वह वैसे भी लिखते—वहांके हालचालकी सूचना तो आपको देते ही।"

अर्जुनसिंहने नन्दरामसे कहा—"अच्छा जाओ, बाबूजीको ले जाओ—कपडे-वपड़े उतारें—सफरसे थके-मांदे चले आरहे है।"

नन्दराम बोला—"चलिये बाबूजी, कमरेमे चलिये।"

ब्रजकिशोर नन्दरामके साथ हमारे पूर्व परिचित कमरेमे पहुंचे। ब्रजकिशोरने कमरेको देखकर मनमे सोचा—"इसी कमरेमें प्रेमलीला का भण्डाफोड़ हुआ था।"

रातमें भोजन करनेके पश्चात् ब्रजकिशोरके पास नन्दरामसिंह और अर्जुनसिंह आकर बैठे। अर्जुनसिंहने पूछा—"शिकारके लिए सवेरे जाइयेगा?"

ब्रजकिशोर एक क्षण सोचकर बोले—"कल तो नहीं जाऊंगा! रास्तेमें ट्रेन पर उतरते-चढते पैरमे मोच आगई, इससे चलनेमें पैर दर्द करता है।"

अर्जुनसिंह मुंह बनाकर बोले—"राम। राम। आपसे तो बाबू रामनाथने बताया होगा—उनका यहां घुटना उखड़ गया था।"

"हां वह सब उन्होंने बताया था। आप लोगोंकी बड़ी प्रशंसा करते थे—कहते थे बिल्कुल घर जैसा आराम दिया।"

अर्जुनसिंह सिर झुकाकर बोले—"यह उनकी दया है। शहरका आराम यहां कहां।"

"अजी शहरसे अधिक—शहरमें क्या धरा है।"

नन्दराम बोल उठा—"पैरमें अधिक कष्ट हो तो मालिश करा डालिये।"

ब्रजकिशोर जल्दीसे बोले—"नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है—कल तक अपने आप ठीक हो जायगा।"

दूसरे दिन प्रातःकाल शौचादिसे निवृत्त होकर तथा चाय पीकर ब्रजकिशोरने नन्दरामसे कहा—"शिकार तो आज रह गया—चलिये जरा घूम ही आवें। आपका गाँव देखें।"

नन्दराम हँसकर बोला—"अजी यहाँ गाँवमें क्या धरा है—झोपड़ियाँ हैं। चलिये जगलकी तरफ़ चलें।"

"अच्छी बात है,—मुझे तो घूमना है—चाहे जिधर चलिये।"

दोनों व्यक्ति चले। गाँवके अन्दरसे होकर जिधर ये लोग निकलते थे उधरके आदमी नन्दरामको झुक-झुक कर "जुहार" तथा "सलाम" करते थे, अपने द्वारपर बैठे हुए आदमी खडे हो जाते थे। यह देखकर ब्रजकिशोरने सोचा—"यह आदमी भीख माँगता फिरता था, ईश्वरकी गति कुछ समझमें नहीं आती।"

गाँवके बाहर निकल जानेपर ब्रजकिशोरने नन्दरामसे कहा—"नन्दरामसिंह तुम्हे यह सुनकर बड़ा आश्चर्य होगा कि मैं शिकार खेलनेके अभिप्रायसे नहीं आया हूं—मैं शिकार नहीं खेलता।"

नन्दरामसिंह चौंक पड़ा। उसने ब्रजकिशोरको ध्यानपूर्वक देखते हुए कहा—"अच्छा।"

ब्रजकिशोर बोले—"यह तो केवल एक बहाना था; परन्तु तुम्हारे लिए नहीं—तुम्हारे पिताके लिए। असली बात यह है कि मैं रामनाथ

बाबूका एक सन्देश लाया हूं, और वह सन्देश केवल तुम्हारे लिए है। मैं तुम्हें इस समय इधर एकान्तमें इसी लिये लाया हूं कि वह सन्देश तुम्हे सुना दूँ। कहीं थोड़ी देर बैठो तो बताऊं।"

नन्दरामने इधर उधर देखा—सामने थोड़ी दूर पर एक पक्का कुंआ था—उसे देखकर नन्दराम बोला—"चलिये इस कुएंपर बैठें।"

दोनों जाकर कुएपर बैठ गये। नन्दरामसिंह बोला—"कहिये।"

ब्रजकिशोर बोले—"रामनाथके व्याहकी बात चीत हो रही है। परन्तु रामनाथ तुम्हारी कन्याके अतिरिक्त और किसीसे विवाह नहीं करना चाहते। इस समय उनकी वही दशा है, जो किसी समय तुम्हारी हुई थी और जिसके कारण तुम उनकी दशाको भली भाँति समझ सकते हो। तुमपर बीत चुकी है। अतएव तुम इसकी गम्भीरताको समझ सकते हो—और इसीलिए मुझे तुमसे यह बात कहनेका साहस भी हुआ।"

नन्दरामसिंह बोला—"यह तो सब ठीक है; पर मैं ठाकुर, वह खत्री—यदि मैं चाहूं भी तब भी विवाह कैसे हो सकता है?"

ब्रजकिशोरने कहा—"यह तो कोई बात नहीं, खत्री और क्षत्री एकही बात है। यह मैं मानता हूं कि ऐसे विवाह होते कम हैं; परन्तु यदि हों तो कोई हर्ज नहीं है।"

"हर्ज चाहे न हो, पर रवाजतो नहीं है बाबूजी। यदि बाबू रामनाथ मेरी जातिके होते तबतो मैं उनके साथ अपनी कन्याका विवाह करनेमें अपना अहोभाग्य समझता—मेरे पिता भी खुशीसे तैयार हो जाते; पर इस दशामें तो बड़ा कठिन है। विशेषतः जब कि मेरे पिता जीवितहैं।"

ब्रजकिशोर बोले—"यही अड़चन उधर भी है—रामनाथके पिता भी इस विवाहको कभी स्वीकार न करेंगे।"

"तब फिर आप विवाहके लिए कैसे कहते हैं।"

"बात यह है कि इसमें तुम्हारी कन्या और बाबूरामनाथ दोनोंके सुखका प्रश्न है। यदि दोनोंका विवाह हो गया तबतो दोनोंका जीवन सुधर जायगा। अन्यथा दोनोंका जीवन बिगडा समझो। यदि तुम्हारा विबाह सोनासे न होता तो तुम्हारी और सोनाकी क्या दशा होती—यही बात इस समय इस सम्बन्धमें भी है। यदि तुम विवाह करनेको तैयार हो, तो गुप्तरूपसे हो सकता है—न तुम्हारे पिताको खबर हो और न रामनाथके पिताको।"

"परन्तु विवाह हो जानेके बाद ?" नन्दरामने प्रश्न किया।

"विवाह होनेके पश्चात फिर प्रकट कर दिया जायगा—उस समय कोई कुछ न कर सकेगा।"

नन्दराम बडी देरतक चुप चाप सिर झुकाये बैठा सोचता रहा। अन्तमे बोला—"बाबूजी, मैं अपने पिता को अब अधिक दुखी करना नहीं चाहता। एकबार मैंने अपनी स्वेच्छाचारितासे जो कष्ट उन्हे पहुंचाया उसका अफ़सोस मुझे आजदिन तक है। अब फिर दूसरी स्वेच्छारिता करके उनका बुढापा दुखमय बनाऊं—इतना साहस मुझमें नहीं है।"

"यह तो ठीक है, परन्तु अपनी कन्याके दुखसुख पर भी तुम्हारी दृष्टि है ? यदि तुम्हारी कन्या किसी दूसरेसे विवाह करके सुखी हो सकती है तबतो मैं पहला व्यक्ति हूं जो तुम्हे यह सलाह दूँगा कि

तुम उनका विवाह रामनाथके साथ कदापि मत करो। परन्तु यदि तुम्हारी कन्या सुखी नहीं हो सकती तब तो इसपर विचार करना चाहिए।"

"जस्सोके हृदयकी बाततो मुझे मालूम नहीं कि वह रामनाथबाबूसे कितना प्रेम करती है। इतना मैं जानता हूं कि वह रामनाथ बाबूको बहुतही आदर तथा प्रतिष्ठाकी दृष्टिसे देखती है, परन्तु वह उनसे इतना प्रेम करती है कि बिना उनके सुखी नहीं हो सकती—यह बात मैं नहीं जानता।"

"यह बाततो आप जान सकते है?"

"कैसे? जस्सो मुझसे तो कभी बतावेगी नहीं, कन्या अपने पितासे—"

ब्रजकिशोर बात काटकर बोले—"नहीं मेरा तात्पर्य यह नहीं है कि आप उससे पूछें—ऐसे बहुतसे ढंग है जिनसे आप उसके हृदयकी बात जान सकते है।"

"आख़िर एकाध बताइये।" नन्दरामने उत्सुकता पूर्वक पूछा।

"एक तरीका तो यही है कि आज आप जस्सोसे यह कहे कि रामनाथ बाबूका विवाह होनेवाला है। इस वाक्यका जस्सो पर क्या प्रभाव पड़ता है इसे ध्यान पूर्वक देखिये।"

नन्दराम मौनहोकर कुछ देर तक इसपर विचार करता रहा तत्पाश्चात बोला—"खै़र, यह मैं देखूँगा, पर यह मुझसे न होगा कि अपने माता-पितासे चुराकर उसका विवाह करूं! मेरा यह अनुभव है कि ऐसी बातोंका परिणाम अच्छा नहीं होता। बाबू रामनाथको भी मैं यही

सलाह दूंगा कि वह भी अपने माता-पितासे चुरा-छिपाकर यह काम न करें।"

ब्रजकिशोर मनमें सोचने लगे—बात तो नन्दराम ठीक कहता है। मेरा विचार भी आरम्भसे यही है। पर क्या करूं, रामनाथके कहनेसे विवश होकर यहाँ तक आया। नन्दरामसे वह बोले—"तुम्हारा यह कथन ठीक है। मैंने भी, यहाँ आनेके पहले रामनाथसे यही कहा था, पर उनकी समझमे मेरी बात नहीं आई। खैर, अब मैंने सब बातें तुम्हारे सामने रख दी है, अब जो कहो वही उनसे जाकर कह दूं।"

नन्दराम बोला—"कहना सुनना क्या है—केवल इतनाही कि मैं बिना अपने पिता-माताकी अनुमतिके कुछ नहीं कर सकता।"

"यह अन्तिम निर्णय है? तुम जस्सोकी भावनाओंकी भी कुछ परवा न करोगे?"

नन्दराम कुछ घबरा कर बोला—"जस्सो? जस्सोकी भावनाओंका ध्यान तो मुझे सदा रहेगा, परन्तु जहाँतक मेरा अनुमान है जस्सो भी यह बात स्वीकार न करेगी कि इस प्रकार चुरा-छिपाकर उसका विवाह किया जाय।"

"यदि यह बात है तब तो मैं इस विषयपर अधिक कुछ कहना बिल्कुल व्यर्थ समझता हू।"

"मैं जस्सोका स्वभाव जानता हूं—वह इसे कभी स्वीकार न करेगी। परन्तु फिर भी मैं उसके मनकी बात जाननेकी चेष्टा करूंगा।"

"हाँ, यही मेरी भी सलाह है कि उसके विचारोंका ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है।"

"सो तो मैं जान लूंगा—इसके जाननेमें देर नहीं लगेगी। मैं उससे स्पष्ट रूपसे यह कहूंगा कि रामनाथ बाबूने यह सन्देश भेजा है। इसपर मैं उससे परामर्श करूंगा। जबसे उसने होश संभाला है तबसे वह प्रत्येक बातमे मुझे सलाह देती रही है—और उसकी सलाह सार्थक होती है, अतएव मुझे पूर्ण आशा है कि इस सम्बन्धमे भी वह अच्छीही सलाह देगी।"

ब्रजकिशोरने आश्चर्यसे नन्दरामकी ओर देखा तत्पश्चात कुछ मुस्कराकर कहा—"इस सम्बन्धमे तो कदाचित आपको वह कोई परामर्श न दे सकेगी। यह मामला तो वह आपही पर छोड़ देगी।"

"कान जस्सो? नहीं ऐसा नहीं होगा—वह अवश्य सलाह देगी, मैं जानता हूं। वह साधारण लड़की नहीं है। वह बहुत समझदार है—मुझसे अधिक समझदार है। मैं भूल कर सकता हूं, पर उससे भूल न होगी, मेरा पैर डगमगा सकता सकता है, पर उसका कभी न डगमगायगा। अच्छा चलिये चले कुछ और तो नहीं कहना है?"

"नहीं मुझे अब कुछ नहीं कहना है।"

२३

उस दिन रातमे नन्दरामने जस्सोको अपने पास बुलाया और कहा—"जस्सो! कल शामको जो बाबू आये हैं वह बाबू रामनाथके मित्र है यह तो तुझे मालूमही है। परन्तु वह आये किस लिये हैं यह कदाचित तू न जानती होगी।"

जस्सोने कहा—"शिकार खेलने आये है।"

"नहीं, शिकार खेलने नहीं आये हैं—वह रामनाथ बाबू का एक सन्देश लाये है।"

जस्सोका हृदय धडकने लगा, परन्तु उसने अपनी घबराहटको दबाकर गम्भीरता पूर्वक पितासे पूछा—"क्या सन्देशा लाये है?"

"पहली बात तो यह है कि रामनाथके पिता रामनाथका विवाह कर रहे है।"

यह सुनतेही जस्सोका मुख पीला पड गया। नन्दराम कहता गया—"वह सन्देसा ऐसा है कि उसपर मैं तेरी सलाह जानना चाहता हू। यद्यपि पिताको हैसियतसे मुझे उस सम्बन्धमे तेरीसे सलाह लेना उचित नहीं है, पर तू यह जानती है कि मैं प्रत्येक बातमे तेरे सुखदुखका ध्यान रखता आया हू। तेरेही कारण मैं फिर यहां आकर पडा हू—तू न होती तो मैं यहां कदापि न आता। इसलिए इस सम्बन्धमें मैं तेरी इच्छा जानना चाहता हूं। जो तेरी इच्छा होगी, जिसमें तुझे सुख मिलेगा मैं वही करूंगा।"

इतने समयमे जस्सोने अपनेको संभाल लिया था और वह पुन गम्भीर हो गई थी। अतएव उसने पूछा—"वह कौनसी बात है ?"

"रामनाथ बाबूने कहला भेजा है कि नन्दराम यदि तैयार हो तो मैं अपने माता-पितासे चुराकर उसकी कन्यासे विवाह करनेको तैयार हू। मुझे इसमे कोई आपत्ति नहीं थीं, क्योंकि रामनाथ बाबू बहुत भले और योग्य आदमी हैं, पर पहली बात तो यह है कि वह खत्री है और हम ठाकुर। यदि इसे भी छोड दिया जाय तो दूसरी बात यह है कि तेरे बाबा इस विवाहके लिए कभी राजी न होंगे। रामनाथकी यह इच्छा है कि उनसे छिपाकर विवाह किया जाय। उन्होंने कहा है कि उधर उनके पिताको न मालूम और तेरे बाबाको न मालूम हो और विवाह हो जाय। इसके बाद जो होगा देखा जायगा। रामनाथ बाबूके पिता भी इस विवाहके लिए कभी तयार न होंगे, इस लिए उनसे भी छिपाना पडेगा। रामनाथ बाबूके हमारे ऊपर बहुत एहसान है। यह उन्हींकी कृपाका फल है कि आज हम-तुम यहाँ सुखपूर्वक बैठे है। नहीं तो ईश्वर जाने आज कहाँ पडे होते। अतएव एहसानोंका बदला चुकानेकी दृष्टिसे उनके इस प्रस्ताव पर विचार करना पडेगा। परन्तु विचार करनेकी बात यह है कि क्या इस प्रकार चुरा-छिपाकर विवाह करना ठीक होगा ? यदि ऐसा किया जायगा तो इससे तेरे बाबा-दादी को घोर दुःख होगा—इधर रामनाथका परिवारभी अत्यन्त कष्टित होगा। इस प्रकार दो परिवार दुखी हो जयेगे। इसके अतिरिक्त मुझे भी घर छोड़ना पडेगा, क्योंकि पिताजीके विरुद्ध कार्य करके फिर मैं यहाँ एक क्षण न रह सकूँगा। यद्यपि मेरी हार्दिक इच्छा तो यही है कि अब

मुझसे कोई काम ऐसा न हो जो उन्हे इस बुढ़ापेमें दुःख पहुचावे। मैं उन्हे बहुत दुःख दे चुका हू—अब मुझ में इतना साहस नहीं कि दोबारा उन्हे कष्ट पहुंचाऊँ। बाबू ब्रजकिशोर मेरा उत्तर पानेके लिए ठहरे हुए है, मैं उन्हे क्या उत्तर दूँ—यही सोच रहा हू तेरी क्या राय है ?"

जस्सोको स्वप्नमे भी यह आशा नहीं थी कि उसका पिता उससे ऐसी स्पष्ट बातें करेगा। अतएव पहले तो वह कुछ क्षणोंके लिए हत-बुद्धि-सी हो गई। परन्तु दूसरेही क्षण उसे ध्यान आया कि उसका पिता केवल उसके (जस्सोके) सुखदुखके विचारसे ऐसा कर रहा है। वह नहीं चाहता कि उससे कोई काम ऐसा हो जो उसके (जस्सोके) लिए दुःखदाई हो। यह विचार आतेही जस्सोके हृदयमें पिताके प्रति श्रद्धा तथा स्नेह का स्रोत बह निकला। उसके नेत्रोमे आंसू छलछला आये, वह पिताके स्नेहसे गद्गद् होकर बोली—"पिताजी, इस सम्बन्धमे आप मुझसे क्या पूछते है। जिसमे आपको सुखशान्ति मिले आप वह कीजिए—मेरे सुखदुःखका विचार छोड दीजिए। मुझे उसीमे सुख है जिसमें आप सुखी हैं। यदि मुझे सुख भी मिला और आप दुःखी हुए तो भी मेरा वह सुख सुख नहीं रहेगा। आपको दुखी देखकर मैं किसी भी दशामें सुखी नहीं रह सकती। आपने मेरे पीछे बहुत कष्ट झेले—अब मेरे लिए आपको कष्ट उठानेकी आवश्यकता न पड़े—यही मेरी अभिलाषा है, यही मेरी कामना है।"

नन्दराम जस्सोकी इस बातसे बहुत प्रभावित हुआ। वह बोला—"मुझे अपनी कोई चिन्ता नहीं है बेटी। मुझे केवल तेरी चिन्ता है।

तुझे सुखी करनेके लिए यदि मुझे नरकमे भी जाना पडे तो सहर्ष जा सकता हूं। मेरे सुखकी बात कहाँ—मेरा सुख तो तेरी माताके साथ चला गया। आह! यदि वह आज जीवित होती तो—। उसने कोई आराम नहीं उठाया—कोई सुख नहीं देखा। हृदयकी अभिलाषाएँ हृदयमेंही लिए चली गयी। मेरे साथ रहकर उसने इतने कष्ट उठाये कि अन्तमे प्राणही दे दिये। ओफ़—उस समयकी उस प्रेम-प्रतिमाकी याद आनेसे हृदय विदीर्ण होने लगता है।" यह कहते कहते नन्दराम की आँखोसे आँसू बहने लगे। वह कुछ क्षण तक चुपचाप आँसू बहाता रहा। जस्सो भी अपनी माताको याद करके रोती रही।

कुछ देर पश्चात नन्दराम आँसू पोंछकर बोला—"बेटी! तू अपनी माताकी जीवित प्रतिमूर्ति है, उसकी जीती-जागती निशानी है। तेरे सुखके लिए मैं सबकुछ करूंगा। मेरा विश्वास है कि तुझे सुखी देखकर तेरी माताकी आत्मा को सुख मिलेगा। अतएव जिसमे तुझे सुख मिले वह निस्संकोच कह देना।"

जस्सो बोली—"मुझे कुछ भी कहना सुनना नही है। जो आप ठीक समझें—मेरे लिए वही ठीक है।"

"तो ब्रजकिशोर बाबूसे क्या कहना चाहिए?"

"यही कह दीजिए कि चुरा-छिपाकर कोई काम नहीं हो सकता"

नन्दराम बोला—"हाँ, यही मेरी भी इच्छा है कि उनसे कह दूँ कि जबतक रामनाथ बाबूके पिता तथा मेरे पिताकी सम्मति न होगी तबतक विवाह करना ठीक न होगा। बस यही ठीक है। सीधा और सच्चा रास्ता सदैव ठीक होता है। क्यों न?"

"निस्सन्देह !" इतना कहकर जस्सो चली गई। नन्दराम अपनेहीं आप बोला—मैं तो पहलेही कहता था। मेरी जस्सो बडी समझदार है। इतनी उमरमे ऐसी बुद्धि ! इसकी माँ भी तो बडी समझदार थी। परन्तु मेरे प्रेममे पडकर बेचारीकी बुद्धिने काम न दिया। राम-नाथ बाबू यह समझते होंगे कि जस्सो उनके साथ विवाह करनेके लिये झट राजी हो जायगी। (हँसते हुए) उन्हे अपने धन, अपने रूप तथा विद्याका अभिमान है। वह समझते है कि एक भिखारी और उसकी लडकी उनके साथ विवाह करनेके लिये उत्सुक हो उठेंगे। यह उनकी भूल है। हाँ वह यह भी तो कहते थे कि जस्सो उनसे प्रेम करती है और उन्हे छोडकर और किसीसे विवाह करने पर प्रसन्न न होगी। मुझे इसमे भी सन्देह होता है। यदि ऐसी बात होती तो जस्सो ऐसा रूखा उत्तर देनेकी सलाह कभी न देती। वह प्रेम-प्रेम कुछ भी नहीं करती। वह उनकी कृतज्ञ है, इसलिये उनका आदर और प्रतिष्ठा करती है—इसेही उन्होने प्रेम समझ लिया। खैर, अब उनकी आँखें खुल जाँयगी—उनका भ्रम दूर हो जायगा। वैसे आदमी बुरे नहीं है। सब तरहसे अच्छे है। यदि सम्भव होता तो मैं उन्हीं के साथ जस्सोका विवाह करता, पर सम्भव नही। पिताजी कभी स्वीकार न करेंगे। उधर रामनाथके पिताजी कभी स्वीकार न करेंगे।

इधर नन्दराम यह सोच रहा था। उधर जस्सो अपनी चारपाई पर पडी सोच रही थी—मैंने यह क्या किया। पिताजी तो तैयार थे और अब भी है, केवल मेरे जीभ हिलाने भर की देर है। पर क्या

कहूं उनके सामने तो मैं यह कभी न कहूंगी कि तुम ऐसा करो। इसके अतिरिक्त यह ठीक भी तो न होगा। बाबासे छिपाकर कोई काम करना बुरा है। पिताजी कहतेही थे कि "मुझे घर छोडना पडेगा।" मेरे पीछे वह इस उमरमे फिर मारे-मारे फिरें। ओफ! उस समयके कष्टोंको याद करनेसे रोएं खडे होते है। वही कष्ट पिताजीको फिर उठाने पडेंगे। नहीं, चाहे मेरे प्राण भलेही चले जांय, पर मैं पिताजीको कष्टमे कभी नहीं डालूंगी। उनकी सारी उमर कष्ट उठानेही बीती है--अब तो उनके दिन सुखशान्ति पूर्वक बीतने चाहिएं! यहां सब तरहका सुख है—ऐसा सुख उन्हे और कहां मिल सकता है। मैं अपने वास्ते उनका यह सुख छुडादूं—ऐसा अभी नहीं हो सकता। और बाबा-दादीको भी बडा दुख होगा। दादी तो पिताजीके कारण अच्छीही हो गई—अब जो फिर वह चले जायगे और मैं चली जाऊंगी तो उनकी क्या दशा होगी। उनको कितना दुख होगा। वह मुझे कितना चाहती है, कितना स्नेह करती हैं। मैं अपने वास्ते उनके इस स्नेहको ठुकराकर उन्हे कष्ट पहुचाऊं तो मेरे समान संसारमें और कोई नीच नहीं। मैने जो कुछ किया अच्छाही किया।

सहसा उसके कानमें किसीने कहा—"परन्तु यदि रामनाथ बाबूका विवाह हो गया तो?" यह विचार आतेही जस्सो कांप उठी। थोड़ी देरके लिए उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि यदि रामनाथने किसी दूसरी स्त्रीसे विवाह कर लिया तो उसका भविष्य सर्वथा अंधकारमय हो जायगा। परन्तु फिर उसे ध्यान आया कि रामनाथ ऐसा कभी न करेंगे और यदि करें तो मैं समझलूंगी कि मेरे साथ उनका प्रेम सच्चा

नहीं बनावटी था। चलो यह भी अच्छा—इसी बहाने उनके प्रेमकी परीक्षा भी हो जायगी। यदि उनका प्रेम सच्चा होगा तो वह कोई न कोई युक्ति निकालेंगे और अपने पिता तथा मेरे बाबाको राजी कर ही लेंगे। पिताजीसे कोई भय नहीं, वह जब अभी तैयार है तो उस समय भी हो ही जायंगे।

इसी प्रकारकी बातें सोचती-सोचती वह सो गई।

दूसरे दिन प्रातःकाल शौचादिसे निवृत होकर नन्दराम ब्रजकिशोर बाबूके पास पहुचा। अर्जुनसिंह पहलेसे ही उनके पास बैठे थे। नन्द-रामको देखते ही अर्जुनसिंह बोल उठे—"आज भी बाबूजी शिकारमे नहीं गये—कहते हैं तबीयत ठीक नहीं आज घर जावेके भी कह रहे है।"

नन्दरामने ब्रजकिशोरकी ओर देखकर पूछा—"क्यों बाबूजी?"

ब्रजकिशोर बोले—"हाँ—आज जानेका इरादा है। यहा आकर तबीयत बिगड गई। रातमे कुछ हरारत भी रही। इस समय सिरमें दर्द है। अब जाना ही ठीक है। शिकारके लिए आया था, पर नहीं खेल पाया। खैर फिर कभी सही।"

अर्जुनसिंह विषादयुक्त मुस्कराहटके साथ नन्दरामकी ओर देखकर बोले—"न जाने क्या बात है। बाबू रामनाथ जब आये थे तब भी ऐसा विघन होगया कि उनके मित्र लोग शिकार न खेल पाये और यह बाबूजी आये तो यह बेचारे भी शिकार न खेल पाये। हमारे भाग्य ही खोटे है कि हमारे यहाँ आकर इन सबकी तबीयत ही खराब हो जाती है।"

पिताकी इस बातपर नन्दरामको हंसी आने लगी, पर वह हँसीको दबाकर बोला—"बड़ी विचित्र बात है—क्या कहा जाय।"

ब्रजकिशोर बोल बठे—"आप लोग व्यर्थ ही उदास होते हैं। यह इत्तफ़ाक है। मुझे क्या, मैं फिर आजाऊँगा। जब जी चाहेगा आकर शिकार खेल लूंगा।"

अर्जुनसिह बोले—"सो तो बाबूजी आपका घर है आप हर समय आसकते हैं और आवेंगे ही; पर मैं समयकी बात कहता हूं—बाजी समय ही खराब होता है।"

ब्रजकिशोर हँसकर बोले—"हां सो तो ठीक ही है। ख़ैर।"

थोड़ी देरमे अर्जुनसिह स्नान करनेके निमित्त उठकर चले गये। एकान्त होनेपर ब्रजकिशोरने नन्दरामसे पूछा—"कहिये, क्या तय किया?"

"तय यही किया कि जबतक बाबू रामनाथके पिता और मेरे पिता इस विवाहके लिए राजी न होंगे तबतक विवाह नहीं हो सकेगा।"

"यह आपका उत्तर है; परन्तु जस्सो... ।"

नन्दराम बीचहीमें बोल उठा—"नहीं, यह केवल मेरा ही उत्तर नहीं वरन् जस्सोका उत्तर भी यही है।"

"अच्छा। आपने पूछा था?"

"हां मैंने पूछा था। उसने यही उत्तर दिया कि चुरा-छिपाकर कोई काम न होना चाहिए।"

ब्रजकिशोरके मुँहसे केवल "खूब।" निकला। वह मनमें सोचने

यदि कहा तब तो उसके त्याग और उसकी बुद्धिमत्ताकी प्रशंसा करनी चाहिए। यह भी सम्भव है कि वह रामनाथसे उतना प्रेम न करती हो जितना कि वह बेवकूफ समझे बैठा है। भावुक आदमी तो हई है—तिलका ताड बना लिया। खैर, अब बच्चाकी आँखें खुल जांयगी।" यह सोचकर उन्होंने नन्दरामसे कहा—"तो बस ठीक है—यही उत्तर मैं उन्हे सुना दूंगा। मैं तो केवल दूत हूँ जो उन्होंने कहा वह आपसे कह दिया और अब जो आप कह रहे हैं वह उनसे कह दूंगा।"

नन्दराम बोला—"बाबूजी आप खुद समझ सकते हैं कि ऐसा कैसे हो सकता है कि न उनके मां-बाप जानें और न मेरे—और विवाह हो जाय। यदि वह मेरा उदाहरण सामने रखकर कहते हैं तो भी उनकी भूल है। यदि मैंने किया तो कौन अच्छा काम किया। उसका फल तो मैं आज तक भोग रहा हू। बुरे कामका परिणाम बुरा ही होता है।"

ब्रजकिशोरने कहा—"तुम बिल्कुल ठीक कहते हो नन्दराम, मेरा आरम्भसे यही विचार है, पर क्या कहूँ, रामनाथ मेरे बहुत ही प्रिय मित्र हैं—उनकी बात न टाल सका, इसलिए तुम्हारे पास दौड़ा आया। मैंने अपना कर्त्तव्य पालन कर दिया—अब आगे आप जानें और वह।"

नन्दराम बोला—"आपने दोस्तीके नाते उचित ही किया। ऐसे दोस्त बड़े भाग्यसे मिलते हैं। मेरा भी एक ऐसा ही मित्र था। (दीर्घश्वास लेकर) उसने मेरा बहुत साथ दिया।"

"हाँ तुमने बताया था, उसके घरमें ही तुमने सोनासे विवाह किया था।"

"हाँ—वह इस समय बैकुण्ठमें बैठा होगा, मैं पापी यहाँ दुख भोग रहा हूँ। ऐसे मित्र कहाँ मिलते है।"

"उनके बाल-बच्चे तो होंगे ?" ब्रजकिशोरने पूछा।

"हाँ है और मजेमें हैं—उन्हे मेरी सहायताकी कोई आवश्यकता नहीं—यदि होती तो मैं अवश्य उनकी सहायता करता।"

"तुम वहाँ कभी जाते हो ?"

"किसके पास जाऊं। वहाँ अब कोई मुझे अच्छी तरह पहचानता भी नहीं। केवल उसकी पत्नी है—वह जानती है कि उसके पतिमें और मुझमें कितना स्नेह था—सो वह बेचारी आवभगत करती है—और कोई नहीं। वह बात कहाँ, प्रत्येक आदमी उतना स्नेह थोडा ही कर सकता है—जिसकी बात उसके साथ।"

"अच्छा तो मैं आज शामकी गाडीसे चला जाऊँगा।"

"जैसी आपकी इच्छा, अभी एकाध दिन बने रहते।"

"कोई हर्ज नहीं था—मेरा घर है, परन्तु वहाँ पहुँचना आवश्यक है—छुट्टियाँ समाप्त हो रही हैं। उधर रामनाथ भी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। कानपुर होता हुआ जाऊँगा—शायद एक दिन वहाँ भी ठहरना पड़े। इसलिए अब चलना ही ठीक है।"

"अच्छा, तो मेरी ओरसे हाथ जोड़कर कह दीजिएगा कि मैं मजबूर हूँ। इस ढंगसे कहियेगा कि उन्हें बुरा न लगे। मैं यह

नहीं चाहता कि वह यह समझें कि मैं उनके साथ कोई अनुचित व्यवहार कर रहा हूँ।"

ब्रजकिशोरने कहा—"नहीं, ऐसा नहीं सोचेंगे। मैं इस ढंगसे कहूँगा ही नहीं।"

२४

ब्रजकिशोर कानपुर पहुंचे। रामनाथ उनकी प्रतीक्षा ही कर रहे थे। दोनों एकान्तमें बैठे तो रामनाथने पूछा—"कहो क्या कर आये ?"

ब्रजकिशोरने कहा—"भई वह बिना अपने पिताकी अनुमतिके विवाह करनेको तैयार नहीं।"

रामनाथने म्लानमुख होकर कहा—"सच कहते हो ?"

"ख़ासे रहे। सच न कहूगा तो क्या झूठ कहूगा। उसने स्पष्ट कहा कि वैसे मैं रामनाथका दास हू, परन्तु इस संबंधमें मैं सर्वथा अशक्त हूं।"

"तो जान पड़ता है उसकी यह इच्छा नहीं कि मेरे साथ जस्सोका विवाह हो।"

"नहीं, ऐसी बात नहीं। उसकी बातोंसे तो यही प्रतीत होता था कि वह स्वयम् तो तैयार है, पर उसी दशामे जब उसके पिता तथा आपके पिताकी अनुमति हो।"

"मेरे पिताकी ?" रामनाथने आश्चर्यसे पूछा।

"हां आपके पिता की।"

"अच्छा। यह एक पख़ और लगी।"

"मैंने आपसे पहले ही कहा था कि ऐसा होना कठिन है। आप भी शरीफ़ आदमी हैं और वह भी—ऐसी दशामें इस प्रकार चोरोंकी तरह विवाह कैसे हो सकता है।"

"अरे यार होनेको तो सब कुछ हो सकता है। यदि नन्दराम चाहे तो विवाह हो सकता है।"

"हाँ अपना घर-द्वार छोड़े, माँ-बाप छोडे तब हो सकता है।"

"घर-द्वार क्यों छोडे ?"

"क्यों ? जब अपने पिताके प्रतिकूल होकर वह जस्सोका विवाह आपके साथ करेगा तो क्या फिर वह घरमे रह सकता है ?"

"अच्छा और क्या क्या बाते हुई—सब ब्योरेवार कहो।"

ब्रजकिशोरने सब बता दिया। अन्तमें उन्होंने कहा—"जिसके प्रेमपर आपको बहुत बडा गर्व था—वह भी आपसे इस प्रकार विवाह करनेको प्रस्तुत नहीं है।"

रामनाथ सन्नाटेमें आगये। बडी देर तक चुपचाप बैठे रहे। तदुपरात सिर ऊपर उठाकर बोले—"कम-से-कम जस्सोसे मुझे ऐसी आशा नहीं थी।"

"तो क्या यह आशा थी कि जब आप कहेंगे वह अपना घर छोड़कर आपके पास आ जायगी ?"

"नहीं, ऐसा तो नहीं, पर यह आशा अवश्य थी कि वह मेरे साथ विवाह करनेसे इन्कार नहीं करेगी।"

"तो इन्कार उसने कब किया। वह तो यही कहती है कि इस प्रकार चुरा-छिपाकर विवाहके लिए वह तैयार नहीं है—इसके अर्थ इन्कार तो होते नहीं।"

"यह इन्कारही सा है।"

"अच्छी बात है—यदि आप इसे इन्कार समझते हैं तो इन्कारही

सही। आप उसके स्वभावसे परिचित हैं, अपने प्रति उसके प्रेमकी गहराईको जानते हैं ; इस लिए आपकी बात माननीही पड़ेगी।"

ब्रजकिशोरकी अन्तिम बातसे रामनाथ कट गये। उन्होंने कुछ उत्तेजित होकर कहा—"हा, हां, यह तो मैं अब भी कहता हूं कि वह मुझसे प्रेम करती है।"

"तब तो यदि आप यह समझते हैं कि उसने इन्कार किया तो आप उसके साथ बहुत बड़ा अन्याय करते हैं।"

"खैर जी, होगा—हटाओ।'

"तो अब आप क्या करेंगे ?" ब्रजकिशोरने पूछा।

"मैं अब उसे भूलनेकी कोशिश करूंगा। जितना प्रयत्न मैं कर सकता था उतना करके देख लिया। अपने पितासे छिपाकर विवाह करनेके लिए तैयार था—इससे अधिक और मैं क्या कर सकता हू।"

"तुम्हारा विवाह होने जा रहा है—सो ?"

"जो होगा होने दूंगा—जब उधर कोई आशाही नहीं तब ख्वामख्वाह इधर क्यों दिक्क़त पैदा करूँ। परन्तु दोस्त, बडाही कटु अनुभव हुआ है। इसे जन्मभर न—भूलूंगा।"

"क्या कटु अनुभव हुआ ?"

"जो देख रहे हो यही कटु अनुभव है—इससे अधिक और क्या होगा।"

"जिसे तुम कटु अनुभव समझते हो यह अवश्यम्भावी था। इसके लिए तो तुम्हें पहलेसे ही प्रस्तुत रहना चाहिए था।"

"प्रस्तुत तो अब भी हूं—आखिर करही क्या सकता हूं।"

"पहलेसे प्रस्तुत होते तो यह कटु अनुभव न होता।"

ब्रजकिशोरने मुस्कराकर कहा—"खैर जो हुआ सो अच्छा हुआ। इतना सन्तोष है कि मैंने कोई काम ऐसा नहीं किया जिसके लिए मुझे कभी पश्चाताप करना पड़े। मुझे उससे प्रेम था और अब भी है—मैं उससे विवाह करना चाहता था। यह नहीं हुआ—न सही। (एक दीर्घ निश्वास छोड़कर—)

तबीयतको होगा कलक़ चन्दरोज,
बहलते-बहलते बहल जायगी।

ब्रजकिशोर मनही मन हंसकर सोचने लगे—यह इनके प्रेमकी दशा है—इसे यह सच्चा प्रेम समझते हैं। एक साधारणसा धक्का लगतेहो ठंढ पड़ गये, सारा प्रेम काफूर हो गया—विवाह करनेको तैयार हैं। कहते है–बहलते बहते बहल जायगी। मैं तो पहलेहीसे जानता था कि बहल जायगी और खूब बहलेगी। ऐसी बहलेगी कि जस्सो बेचारीका ध्यान तक नहीं आयगा। पता नहीं उसकी क्या दशा होगी। वह भी बहल जायगी। संसार इसीका नाम है।"

थोडी देर पश्चात उन्होंने कहा—"तुम्हारा काम कर दिया, मैं घर जाऊंगा।"

"आजही?" रामनाथने चौंककर पूछा।

"हां और क्या।"

"अजी नहीं—आज क्या जाओगे। आज रहो कल जाना।"

"क्या फ़ायदा?"

"रातमें कुछ बातें होंगी।"

"अच्छा, अभी कुछ बातें बाकी हैं ?"

"हां हां सम्भव है—अभी कोई युक्ति सूझ जाय।"

"सूझ चुकी।"

"अच्छा तो एक रात ठहरनेमें कौन आफ़त है।"

"ख़ैर ठहर जाऊंगा—सबेरे चला जाऊंगा।"

"हां यह ठीक है।"

रातमें ब्रजकिशोर तथा रामनाथ एकही कमरेमे लेटे। रामनाथने ब्रजकिशोरसे कहा—"मित्र कोई औरही युक्ति सोचो। इतनी सरलता पूर्वक जस्सोको हाथसे निकल जाने ..।"

ब्रजकिशोर बोल उठे—"आप तो है वडी आदमी। व्यर्थ बातें करते हो—मुझे इन बातोंसे नफ़रत है। आनन्दमे विवाह करो, बस—यही युक्ति है।"

"विवाह तो करना ही पडगा—चाहे आनन्दसे हो चाहे बे-आनन्दसे। परन्तु—।"

"अरन्तु-परन्तुको अब उठाकर ताक़पर रख दीजिए।"

"कोई तरकीब निकालो उस्ताद। तुमने तो हजारों नावेल चाट डाले है।"

"परन्तु जितने नावेल पढ़े सबका प्लाट अलग-अलग था।"

"इसीलिए तो कहता हूं कि तुम्हे बहुत-सी भिन्न-भिन्न घटनाओं का ज्ञान है—तुम सोच सकते हो कि ऐसी स्थितिमें क्या होना चाहिए।"

"अच्छा तो एक युक्ति और है—बोलो करोगे ?"

"बताओ।"

"करोगे ?"

"पहले बताओ तो।"

"नन्दरामके द्वारपर जाकर धरना दो—कहो या तो मेरे साथ जस्सोका विवाह करो—नहीं मैं यहीं अपने प्राण त्याग दूँगा।"

"बौड़म हो।"

"और सुनिये, तरकीब बताई तो गालियाँ देने लगे।"

"तरकीब बताते हो या उल्लू बनाते हो।"

"क्यों जनाब, इसमे उल्लू बनानेकी कौन बात है ?"

"क्यों ? ऐसा करना मुझे शोभा देगा ?"

"शोभा। उँहुं। यदि आपको अपनी शोभा रखना है तो उसका ध्यान छोड दीजिए।"

"ऐसी युक्ति हो कि काम भी हो जाय और शोभा भी न बिगड़े।"

"चिरजीव—प्रेम-लीलामें शोभा ढूढ़ते हो—अरे इसमें तो आदमी की हस्ती तक मिट जाती है—शोभा किस खेतकी मूली है। शोभा रखनेवाले क्या खाके इश्क़बाजी करेंगे। प्रेम पथ बड़ा विकट है भाई साहब, इस पथके छोर तक कोई बिरला ही पहुंचता है। अन्य सब थोड़ी-थोड़ी दूर जाकर भाग खड़े होते हैं। बहादुरशाह ज़फ़रने क्या अच्छा कहा है—

बुल हवस आया था मेरे साथ राहे इश्क में,
ऐ 'ज़फ़र' देखी जो उसने सख्त मंज़िल फिर गया।

"समझे ? इस पथ पर बुलहवस नहीं जा सकते।"

"मैं बुलहवस हूं ?"

"बातें तो, कम-से-कम, वैसीही करते हो।"

"अच्छा भाई जो चाहे कहलो—समयकी बात है।"

"हाँ समय तो हुई है—अच्छा अब सोइये, मुझे भी नींद आ रही है— सफरका थका हुआ हूं ।"

"तुम कुछ आदमी नहीं हो—कोई अच्छी तरकीब न निकाली।"

"मैं कभी इस फेरमेंही नहीं पड़ा—तरकीब क्या निकालूंगा—आप जो-जो कहते जायँ वह मैं करता जाऊं । इस संबंधमे तो आपके दिमागको अच्छा काम करना चाहिए था, परन्तु वह इस समय बहुतही कुन्द हो रहा है—बेचारा क्या करे—हृदयकी सहायता पावे तो कुछ जोर लगावे।"

"तो जनाब मैं पागल तो हूं नहीं जो कोई वाही-तबाही काम कर बैठूं ।"

"तो महाशयजी, ऐसे कामोंमे बुद्धिमानोंको सफलता भी बहुत कम मिलती है—बहुधा पागल होजाने वालेही बाजी मार ले जाते हैं।" रामनाथ चुप रहे—कुछ न कहा। थोड़ीही देरमें ब्रजकिशोर खर्राटे लेने लगे— रामनाथने भी एक दीर्घ-निश्वास छोड कर दूसरी ओर करवट ली और लिहाफ़ ओढ़ लिया।

प्रातः काल नित्य-क्रियासे निवृत्त होकर दोनों मित्र बैठे चाय पी रहे थे उसी समय हरद्वारीने आकर रामनाथसे कहा--"बड़े सरकार आपको बुलाते हैं।"

रामनाथ उठकर चलने लगे—ब्रजकिशोर बैठे रहे। हरद्वारीने ब्रजकिशोरकी ओर देखकर कहा—"आपको भी बुलाया है।"

रामनाथ चौंक कर बोले—"इन्हे भी बुलाया है ?"

हरद्वारी "जी हाँ" कहकर चला गया। रामनाथ ब्रजकिशोरकी ओर देखकर बोले—"हम दोनोंको क्यों बुलाया ? कहीं कुछ खबर तो नहीं लग गई।"

ब्रजकिशोर हँसकर बोले—"चोरकी दाढीमे तिनका।"

दोनों बाबू श्यामनाथके पास पहुंचे। ब्रजकिशोरको देखकर श्यामनाथ मुस्कराकर बोले—"आओ भाई, तुम अच्छे आ गये। रामनाथके विवाहकी बातचीत हो रही है। लडकीके पिताने लड़कीका फोटो भेजा है। तुम भी देखलो, रामनाथ भी देख लें। पीछे कोई शिकायत न हो। आज कलके शिक्षित लडके बडे नुकताचीन होते हैं। इन्हे सन्तुष्ट करना बडा कठिन हो जाता है।"

यह कहकर श्यामनाथने एक फ़ोटो ब्रजकिशोरके हाथमे दिया। ब्रजकिशोर कुछ क्षणोतक फ़ोटो देखकर बोले—"लड़की तो अच्छी है।"

श्यामनाथ प्रसन्नताका भाव दिखाते हुए बोले—"हाँ लड़की बहुत अच्छी है। मुझे तो इस लड़कीसे विवाह सम्बन्ध करनेमे कोई आपत्ति नहीं। इनसे तुम पूछ लो। मैं तो स्नान करने जाता हूं—कोर्टका समय निकट आ रहा है।"

यह कहकर श्यामनाथ चले गये। ब्रजकिशोर रामनाथके हाथमें फ़ोटो देकर बोले—"देखिये लड़की तो बहुत सुघर है।"

रामनाथने फ़ोटो हाथमें लेकर देखा। ब्रजकिशोरने पूछा—"कहिये क्या राय है ?"

रामनाथ मुँह बनाकर बोले—"हाँ बुरी नहीं है।"

"बुरी नहीं है। आपकी वह जस्सो इससे अधिक सुन्दर है ?"

"उसकी इसकी कोई तुलना नहीं हो सकती।"

"अर्थात् वह अधिक सुन्दर है।"

"नहीं—सुन्दर तो इससे अधिक नहीं है, पर वह वही है।"

"केवल इस लिए कि उसे आपने प्रत्यक्ष देखा है। इसको प्रत्यक्ष देखनेके पश्चात मैं आपसे फिर पूछगा। अच्छा तो इससे विवाह करनेके लिए आप तैयार हैं न ?—अभी जो कुछ आपत्ति हो बता दीजिये।"

"आप कौन है ? पहले यह बताइये।"

"मुझे आपके पिताने आपकी स्वीकृत लेनेके लिए नियुक्त किया है—अभी आपके सामने कह गये हैं।"

रामनाथ हँस पड़े, बोले—"बड़े बने हुए हो।"

"इसकी शिकायत आप अल्लाह मियाँसे कीजियेगा। मुझे इस समय यह बताइये कि क्या इरादे है ?"

रामनाथ मुस्कराकर बोले—"जैसी सलाह दो।"

"मेरी सलाह तो यह है कि ऐसी सुन्दर लड़कीसे यदि तुम विवाह न करो तो तुमसे बढ़कर अभागा और बेवक़ूफ़ कोई नहीं है।"

"चढ़ जा बेटा सूलीपर भगवान सब भला करेगा। यही बात है न ?" रामनाथने हँसकर पूछा।

"यह सूली नहीं है चिरंजीव, यह तुम्हारे हृदयके घावके लिए मरहम है। इस मरहमसे बहुत जल्दी चंगे हो जाओगे—समझे ?"

"चंगा तो क्या खाक होऊंगा, परन्तु खैर जब विवाह करनाही है, उससे बचत होही नहीं सकती, तब यही सही।"

ब्रजकिशोर मनही मन हंसकर सोचने लगे—"फंसे विद्यागुलग्नैम्न, फ़ोटो देखकर लोट-पोट हो गये। जरा विवाह हो जाने दो, यह तो जस्सोका नामतक न लेंगे।

२५

उपर्युक्त घटना हुए दो मास व्यतीत हो गये। रामनाथके विवाहकी तैयारियाँ हो रही थीं। सगाई हो चुकी थी। रामनाथ यद्यपि जस्सोको भूले नहीं थे, पर अब वह उसके लिये उतने व्याकुल न थे। वह अपनी समझमें जस्सोके प्रति और जस्सोके लिए उनके हृदयमें जो प्रेम था उसके प्रति अपना कर्त्तव्य पालन कर चुके थे। उनकी यह धारणा थी कि जस्सोने उनसे विवाह करना अस्वीकार कर दिया—यह जस्सोका बड़ा भारी अपराध है। इसके लिये उनके मनमें जस्सोके प्रति रोषभी उत्पन्न हो गया था। साथही यह अभिमान भी उत्पन्न हो गया था कि जब उसे उनकी परवाह नहीं तो वह उसके लिए क्यों इतने व्याकुल हों। जस्सोके आदर्शको वह नहीं समझे—उन्होंने उसकी कुछ भी कद्र न की।

इधर अर्जुनसिहको भी जस्सोके विवाहकी चिन्ता उत्पन्न हुई और उन्होंने इसके लिए प्रयत्न करना आरम्भ कर दिया। एक दिन उन्होंने नन्दरामसे कहा—"जस्सोके व्याहकी बात चीत तीन जगह हो रही है—एक तो मुकुन्दपुरके ठाकुरके बडे लड़के से, दूसरा शिवपुरके नम्बरदारका लड़का है, तीसरा शीतलपुरकी ठकुराइनका लड़का है। इनमेंसे जिसे पसन्द करो उसके लिए पक्का-पोढ़ा कर लिया जावे। तीनो लड़के मेरे देखे समझे हुए हैं। मेरी राय तो शीतलपुरकी ठकुराइनके लड़केके लिए है। वह बहुत ख़ानदानी हैं, उनके पास जमीं-

दारी भी काफ़ी है—दस हज़ार सालाना मालगुजारीकी जमींदारी है। लड़का देखने-सुननेमें अच्छा है और सुशील है।"

नन्दरामने कहा—"जिसे आप ठीक समझें वही ठीक है। जो आपकी राय है वही मेरी भी राय है।"

"तो बस इसी लड़केसे ठीक कर लिया जाय। अब देर करना उचित नहीं, लड़की बहुत सयानी हो गई है।"

बस उसी दिनसे जस्सोके विवाहकी भी तैयारी होने लगी। क्रमशः यह समाचार जस्सोने भी सुना। यह समाचार उसके लिए वज्रपातके समान प्रमाणित हुआ। वह अपनी ओरसे रामनाथके अतिरिक्त और किसीसे भी विवाह करनेके लिए प्रस्तुत न थी। तीन-चार दिनों तक वह बड़ी अधीर रही। उसे इस मुसीबतसे छुटकारा पानेका कोई समुचित उपाय न सूझा। अन्तमें उसने स्थिर किया कि अपने पितासे वह अपने हृदयकी बात कहे। परन्तु इसके लिए भी उसके हृदयमें साहसका अभाव था। कैसे कहे और क्या कहे? पिता अपने जीमें क्या सोचेंगे? मैं इतनी निर्लज्ज कैसे बनूं। क्या पिताजी मेरी बात मान कर कोई उपाय निकालेंगे? यदि उन्होंने मेरी बात न सुनी तो क्या होगा? इत्यादि प्रश्न उसके हृदयमें उठते थे। कई दिन वह इसी उधेड़बुनमें पड़ी रही। इधर विवाहकी बातचीत प्रतिदिन अधिक गम्भीर होती जा रही थी। जस्सोके सामनेही जस्सोकी दादी बड़े हर्ष तथा आनन्दसे आने-जाने वाली स्त्रियोंसे कहती थी—"जस्सोके ब्याहकी बातचीत पक्की हो रही है। सीतापुरकी ठकुराइनके यहां बातचीत हो रही है। लड़का बड़ा अच्छा है—बड़े ठाकुर (अर्जुनसिंह) का देखा

हुआ है। अब तो जस्सोका व्याह हो जाय तब चैन पड़े। न जाने कितने देवी-देवता मनाये यह दिन आया है।"

स्त्रियाँ इस पर अपनी प्रसन्नता प्रकट करतीं। परन्तु जस्सोके लिए यह प्रसङ्ग बडा अरुचिकर होता। उसके पेटमें खलबली मच जाती थी और रोनेकी इच्छा होती थी। अतएव वह उठकर एकातमें चली जाती और आँसू बहाकर थोडी देरके लिए अपना जी कुछ हल्का कर लेती थी। परन्तु जब उसने देखा कि यह समस्या प्रतिदिन अधिक जटिल होती जा रही है और शीघ्रही मामला उस सीमा तक पहुँचने वाला है जहा पहुँचकर वह असाध्य और वशके बाहर हो जायगा। तब उसने निश्चय किया कि कमसे-कम पिता पर यह प्रकट देना चाहिए कि वह इस विवाहसे सुखी नहीं होगी—फिर जो भाग्यमे बदा होगा—होता रहेगा।"

जिस दिन जस्सोने यह निश्चय किया उसी दिन एक ऐसी घटना घटी जिसके कारण परिस्थिति सर्वथा बदल गई। अर्जुनसिंह अपनी चौपालमें बैठे हुए थे। उसी समय एक कृषक उनके सन्मुख आकर बैठ गया। अर्जुनसिंहने उससे पूछा—"कहो लछमन, कहा गये थे, बहुत दिनोंमें दिखाई पड़े।"

लछमन बोला—"इधर जरा सीतलपुर चला गया था।"

सीतलपुरका नाम सुनकर अर्जुनसिंह बोले—"सीतलपुर ? अच्छा। वहाँ क्या काम था ?"

"वहाँ हमारे एक रिस्तेदार रहते हैं।"

"अच्छा। वहाका कुछ हाल तो बताओ। वहांकी ठकुराइनके लड़केसे हमारी पोतीके व्याहकी बातचीत हो रही है।"

"हा मुझे मालूम है।"

"तुम्हे कहा मालूम हुआ।"

"वहीं सुना था।"

"क्या सुना था ?"

"मालिक, हमने तो यह सुना कि ठकुराइन व्याह नहीं करेगी।"

"अर्जुनसिह कुछ घबराकर बोले—ऐं नही करेगी—क्यों ?"

"अब क्या कहे—मालिक।"

"नहीं, कहो क्यों नहीं। जरूर कहो।"

"अरे सरकार, वह बात कहने लायक नहीं है।"

अर्जुनसिह अधिकतर चिन्तित तथा उत्सुक होकर बोले—"नही तुम बेखटके कहो।"

लछमन केवल दात निकालकर रह गया। अर्जुनसिहने पुनः कहा—"तुम डरते क्यों हो, तुमने तो जो सुना होगा वही कहोगे, फिर डर काहेका।"

"मालिक, हमारे वही रिस्तेदार कहते थे कि ठकुराइन व्याह नहीं करेगी। उनको पता लग गया है कि छोटे ठाकुर गाँवकी लडकी सोनाको लेकर भाग गये थे उसीसे यह लड़की पैदा है। ठकुराइन कहती थीं कि ऐसी लड़कीके साथ वह अपने लड़केका व्याह नहीं करेगी।"

इतना कहकर लछमन भयभीत नेत्रोंसे अर्जुनसिहकी ओर ताकने

ह गा। उसे यह आशङ्का थी कि कहीं ऐसा अशुभ समाचार सुनाने पर अर्जुनसिंह उस पर नाराज़ न हो जांय ।

अर्जुनसिंहका चेहरा फ़क हो गया, उन्होंने "हूं" कहकर सिर झुका लिया ।

लछमन पुनः डरते-डरते बोला—"और भी न जाने क्या-क्या कहते थे—मुझे तो सब याद नहीं रहा ।"

अर्जुनसिंह बोले—"और क्या कहते थे ?"

"कहते थे कि ठकुराइनको यह पता भी लग गया है कि लड़की अपने बापके साथ बहुत दिनों तक भीख मांगती फिरती रही ।"

अर्जुन सिंह सहसा उत्तेजित होकर बोले—"कौन ससुरा कहता है कि भीख मांगती फिरती रही। हमारे सामने कहे तो मूछें उखड़वा लूँ । रही सोनाको भगा लेजानेकी बात सो वह कोई गैर-जाति तो थी नहीं, अपनीही जातकी थी—थी कि नहीं ?"

वह व्यक्ति अर्जुनसिंहका क्रोध देख कर मनही मन कांप रहा था। उसने जल्दीसे कहा—"हां सरकार, यह तो सारा गांव जानता है।"

अर्जुनसिंह कुछ नम्र होकर बोले—"अपनी जातिकी लड़की थी, विधि-पूर्वक उसके साथ व्याह हुआ था, कोई बैठाली घरडाली भी नहीं थी।"

"बिल्कुल ठीक बात है।"

"उन्हे व्याह नहीं करना है तो न करें, कोई उनकी खुशामद नहीं करता। लड़कोंकी कोई कमी है—एक नहीं तो दूसर सही।"

"हां सरकार, लड़के एक छोड़ हजार मिल जायँगे।"

इसी समय नन्दराम आ गया। उसने अर्जुनसिंहको उत्तेजित देखकर पूछा—"क्या बात है ?"

"शीतलपुरकी ठकुराइन व्याह करने पर राजी नहीं हैं।" अर्जुनसिंहने उत्तर दिया।

"क्यों ?"

"उनसे किसीने कह दिया कि लड़की अपने बापके साथ भीख मांगती फिरती रही और भगाई हुई स्त्रीसे पैदा है।"

यह सुनतेही नन्दराम सन्न हो गया।

अर्जुनसिह बोले—"न करें व्याह—एक नहीं सौ दफे न करें। हमे क्या लडका नहीं मिलेगा। अब तो हम खुद उनके लड़केसे व्याह नहीं करेंगे।"

नन्दराम चुपचाप वहांसे हट आया। उसदिन अर्जुनसिके घरमें इस बातका बड़ा चर्चा रहा। जस्सोके कान तक भी यह बात पहुंची, इस समाचारसे उसे हर्ष तथा विषाद दोनों हुआ। हर्ष इस बातके लिए हुआ कि उसका व्याह रुक गया। विषाद इस कारणसे कि ठकुराइनने अपने लड़के का व्याह करना अस्वीकार करके उसका अपमान किया।

सबसे अधिक दुख नन्दरामको हुआ। उसके हृदयमें इस बातने बड़ा आघात पहुंचाया। वह अकेला अपने कमरेमें बैठा हुआ सोच रहा था—"क्या मेरे पापोंका फल मेरी जस्सोको भोगना पड़ेगा ? इसमें सन्देह नहीं कि यह बात जो फैली है तो जहां जहां जस्सोके व्याहकी बात चीत लगेगी वहां तक यह अवश्य पहुंचेगी। और जो यह बात सुनेगा, वह फिर कदापि विवाह न करेगा। तो क्या मेरे पापों के कारण मेरी जस्सो कुमारीही रहेगी।"

यह एक ऐसी बात थी जिसपर कि नन्दरामने आजके पहले कभी विचार ही नहीं कियाथा। आज उसने इसकी गम्भीरताको समझा। आज उसके कानोंमें कोई एक विकट व्यङ्गके साथ कह रहा था—नन्दराम देख—अब तेरे पापोंका प्रायश्चित आरम्भ हुआ है। जिसे तू प्राणोंसे भी अधिक प्यार करता है वह संसार द्वारा तिरस्कृत की जा रही है—जिसे तू सुखी बनाना चाहता है उसके सामने दुःखका समुद्र लहरें ले रहा है। नन्दराम चिल्ला उठा—मैंने पाप किया—कदापि नहीं, कौन कहता है मैंने पाप किया—मैंने कौनसी बात ऐसी की जिसे पाप कहा जा सकता है।

उसके कानोंमें पुनः किसीने एक विकट हास्यके साथ कहा—र. तूने अपने स्वतन्त्रतापूर्ण कार्यसे मोनाके माता पिताको कितना क्लेश पहुंचाया—यह तू नहीं जानता? तेरे वियोगमें तेरे माता पिता ने कितना दुःख भोगा—तेरी माता रोते-रोते अंधी हो गई—उसको अंधी बनानेका उत्तरदायी कौन है? तू है नन्दराम। क्या तू इसे पाप नहीं समझता? और अपनी प्यारी कन्याको इस परिस्थिति में डालनेका अपराधी कौन है? तू है।

नन्दराम व्याकुल होकर रोने लगा और अपने ही आप बोला—हाँ हाँ मैं मानता हूं यह पाप है। परन्तु मैंने पाप किया है उसका दण्ड मुझे मिले, मैं उसे सहन करनेको तैयार हूं, परन्तु मेरी निरपराध जस्सोको है। यह अन्याय है। यह अत्याचार है।

२६

उपर्युक्त घटनाके पन्द्रह दिन पश्चात अर्जुनसिंहको रामनाथके विवाहका निमंत्रण पत्र मिला। साथमें रामनाथके पिताका लिखा हुआ एक पत्र भी था। पत्रमें अर्जुनसिंहसे परिवार सहित आनेका अनुरोध किया गया था। अर्जुनसिंहने नन्दरामसे कहा—"मैं तो जाऊँगा नहीं—तुम चले जाओ और जस्सोको ले जाओ।" नन्दरामने इस बातको स्वीकार किया।

नन्दराम उसी समय अन्तःपुरमें पहुंचे और अपनी मातासे बोले—"माँ, रामनाथ बाबूका विवाह है—वहाँसे बुलाव आया है। चलोगी ?"

नन्दरामकी माता बोली—"चलूं तो सब कुछ, पर मुझे सूझ तो पड़ता ही नही—वहाँ जाके कहूंगी क्या ? किसे-किसे बुलाया है ?"

"उन्होंने तो घरभरको बुलाया है।"

"वह क्या कहते है ?"

वहका तात्पर्य नन्दरामके पितासे था।

नन्दरामने उत्तर दिया—"वह तो कहते है कि मैं और जस्सो चले जांय।"

"हाँ बस यही ठीक है। मैं तो जस्सोको भी न भेजती, पर वह वहाँ इतने दिनों रही है, न जायगी तो उन्हे लगेगा।"

नन्दरामने किञ्चित् मुस्कराकर कहा—"तुम न चलोगी ?"

"बेटा, मेरेमें तो अब कहीं परदेसमें आने-जानेका बूता नहीं रहा। वहाँ जाके और उनपर बोझ बन जाऊंगी। ब्याह काजका घर है—वहाँ जाऊँ और कुछ उनका हाथ बटाऊँ तो अच्छा भी लगे—उलटे उनसे अपनी सेवा कराऊँ—यह क्या अच्छा लगेगा।"

नन्दरामने कहा—"बात तो ठीक है। अच्छा मैं और जस्सो चले जांयगे।"

"कब जाओगे, ब्याह कबका है?"

"तीन-चार दिनमे जाना चाहिए—ब्याहके दस दिन है। बरात जानेके दो-तीन दिन पहले पहुंचना चाहिए।"

"हाँ और क्या। अच्छी बात है। दो-तीन दिनमे तैयारी कर दूँगी।"

"तैयारी? तैयारी क्या करोगी।"

"रामनाथकी बहूके लिए कुछ भेंट भी ले जायगा या योंही हाथ हिलाता जा बैठेगा।"

नन्दराम बोल उठा—"हाँ यह तो तुमने ठीक कहा, इसका तो मुझे ध्यान ही नहीं था।"

"तुझे ध्यान कैसे रहे, तूने कभी अपने हाथसे कोई काम-काज किया हो तो ध्यान रहे—तू इन बातोंको क्या जाने।"

"तो कोई बढ़िया चीज़ होनी चाहिए। हमने उनका नमक खाया है—यह ध्यान रखना?"

"मुझे सब ध्यान है, तेरे बतानेकी जरूरत नहीं है।"

इधर तो नन्दराम रामनाथके विवाहमें जानेकी तैयारीमें लगे।

उधर जस्सोने जो सुना कि रामनाथका विवाह हो रहा है तो उस अबला पर वज्रपात-सा हुआ। उसे स्वप्नमें भी यह आशा नहीं थी कि रामनाथ .अपना विवाह किसी अन्य स्त्री से करनेके लिए तैयार हो जांयगे। रामनाथ किसी अन्य स्त्री से कभी विवाह नहीं करेंगे—इस आशाके सुदृढ गढमे वह एक प्रकारसे निश्चिन्त-सी बैठी थी। परन्तु, आज वह गढ ताशके पत्तोंके मकानकी भाँति ढेर हो गया और निराशाके भीषण आक्रमणसे वह अधीर हो उठी। उसने सोचा—"क्या पुरुषोंके प्रेमकी सीमा यहीं तक होती है ? क्या पुरुषों की बातें इतनी बनावटी तथा कपटपूर्ण होती है ?"

वह रातभर पडी यही बाते सोचती। कभी रोती थी, कभी संसारकी अस्थिरता पर हंसती थी। पहले उसने यह स्थिर किया कि वह रामनाथके विवाहमे जानेसे इन्कार कर दे। परन्तु फिर उसने सोचा कि यह बात उचित न होगी। प्रथम तो यदि उसका पिता, बाबा तथा दादी उससे वहाँ न जानेका कारण पूछेंगे तो वह क्या उत्तर देगी। दूसरे उसके हृदयमे यह उत्सुकता भी उत्पन्न हुई कि वह अपनी आँखोंसे देखे कि रामनाथको इस विवाहसे कितना हर्ष :तथा आनन्द प्राप्त होता है। वह स्त्री, जिसे रामनाथकी पत्नी बननेका सौभाग्य प्राप्त हो रहा है कैसी है। उसके (जस्सोके) साथ अब रामनाथका क्या व्यवहार होगा।

यह सब सोच-समझकर जस्सोने अपने पिताके साथ जाना निश्चित कर लिया।

—:*:—

२७

बाबू रामनाथकी बरात जानेमें चार दिन शेष थे। घरमें विवाह की चहल-पहल थी—बाहरसे मेहमानोंका शुभागमन हो रहा था। आज ब्रजकिशोर आनेवाले है। रामनाथ बडी बेचैनीके साथ उनके आगमनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। ब्रजकिशोर पेशावर मेलसे पौने चार बजे बनारस स्टेशन पर पहुचे। बाबू रामनाथकी गाडी स्टेशन पर उनके लिए पहलेहीसे खडी थी। उसपर सवार होकर सवा चार बजेके लगभग ब्रजकिशोर रामनाथके मकान पर पहुच गये। रामनाथ ने उन्हे देखते ही कहा—"क्यों जनाब, अब आपको फुर्सत मिली ?"

ब्रजकिशोर बोले—"क्या कहूँ। इसके पहले आही न सका।"

"बडे नालायक हो। यहाँ प्रतीक्षा करते करते आँखे पथरा गईं।" रामनाथने मुंह बनाकर कहा।

"तो भले आदमी क्या महीना भर पहले बुलाकर बिठानेका इरादा था। अभी तो बरात जानेमें चार दिन बाकी है। बल्कि सच पूछो तो मैं अब भी जल्दी आया—मुझे परसों आना चाहिए था।"

"जी हाँ, सीधे वहीं आ जाते—यहाँ क्यों आये ?"

"क्यों जनाब, मेहमानोंका स्वागत इसी तरह किया जाता है।" ब्रजकिशोरने मुस्कुराकर कहा।

"मेहमान। तुम मेहमान हो ? ऐसे मेहमानकी ऐसी तैसी।"

"हाँ हाँ गालियाँ भी दे लो, (अपने हाथकी छड़ी रामनाथकी

ओर बढ़ाकर) और यदि पीटनेकी इच्छा हो तो यह छड़ी हाज़िर है।"

"अभी जाओ, बड़े ख़राब आदमी हो। तुमसे न जाने कितनी बातें करनी थीं।"

"तुम्हारी बातोंका थैला तो कभी ख़ाली हो नहीं सकता।"

"अच्छा चलो, कपड़े-वपड़ उतारो। फिर बातें होंगी।"

ब्रजकिशोरने कपड़े बदले, हाथ-मुँह धोया और कुछ जलपान करनेके पश्चात् पहले बाबू श्यामनाथसे भेंट की। बाबू श्यामनाथने उन्हे देखकर पूछा—"आगये बेटा। घरमें सब ख़ैरियत ?"

"जी हाँ सब आपकी कृपा है।"

"डिप्टी साहब कब आवेंगे ?"

"वह तो शायद यहाँ न आ सके—एक रोज़के लिए सीधे वहीं आवेंगे।"

"आवेंगे ?"

"हाँ आवेंगे तो अवश्य।"

"अच्छा हुआ तुम आगये—अब सब प्रबंध तुम्हारे ही जिम्मे है। जैसा उचित समझो करो।"

"वह सब हो जायगा, आप कुछ चिन्ता न करें।"

रातमें रामनाथ और ब्रजकिशोर एकही कमरेमें लेटे।

रामनाथने कहा—"आख़िर तुमने घेर-घारकर बिवाह करा ही दिया।

"तो अच्छा ही किया, कुछ बुराई तो की नहीं।"

"बुराई तो नहीं की परन्तु।"

"परन्तु क्या ?"

"कुछ अच्छाई भी नहीं की।"

"क्यों ?"

"यार, क्या बताऊँ, मेरा अन्तःकरण कह रहा है कि मेरा विवाह करना उचित नहीं है।"

"बेवक़ूफ हो। हाँ, खूब याद आया। नन्दरामको निमन्त्रण भेजा कि नहीं ?"

"हाँ, पिताजीने भेजा है। मेरी तो इच्छा नहीं थी, पर मैं अपनी इच्छा प्रकट कैसे करता। पिताजीसे यदि कहता कि वहाँ निमन्त्रण मत भेजो तो वह अपने मनमें मुझे बड़ा नीच समझते। जिसने इतने दिन यहाँ काटे, जिसके यहाँ मैं रह आया, उसे निमन्त्रण न भेजा जाय, यह बात पिताजी कभी अच्छी न समझते।"

"अच्छी थी भी नहीं। नन्दरामसिंहको जब पता लगता कि तुम्हारा विवाह हो गया तो उसे कितना दुख होता। अपने जीमें कहता कि देखो हमे सूचना तक न दी, इतनी जल्दी भूल गये। निमन्त्रण भेज दिया गया यह अच्छा हुआ। कौन-कौन आवेगा ?"

"बुलाया तो घर भरको है—देखो कौन-कौन आता है।"

"आखिर तुम निमन्त्रण भेजनेके खिलाफ़ क्यों थे ?"

"मैं नहीं चाहता कि जस्सोको मेरे विवाहकी सूचना मिले।" रामनाथने एक दीर्घ निश्वास छोड़ कर कहा।

"सूचना तो उसे निमन्त्रण न भेजने पर .भी मिल ही जाती।"

"हाँ, पर विवाह हो जानेके बहुत दिनों पश्चात् मिलती। वहां कौन कहने जाता।"

"नहीं रामनाथ—यह किसी भी दशामें ठीक न होता। नन्दराम सिंह तुम्हारे यहां कितने दिनों रहा है—यह तो सोचो। वह अब भी तुमको उसी दृष्टिसे देखता है और तुम्हारा उतना ही आदर तथा सम्मान करता है। वह तुम्हारी प्रसन्नतामें प्रसन्न और तुम्हारे दुखमें दुखी होने वाला आदमी है। इस अवसर पर उसे भूल जाना बहुत बड़ी ग़लती होती।"

"हाँ यह तो तुम्हारा कहना ठीक है। परन्तु क्या बताऊँ मित्र, इस विवाहसे मैं सुखी नहीं हूं।"

"पागल हो। सुखी न होनेका कारण ?"

"मैं जस्सोके प्रति अन्याय कर रहा हूं।"

"बिलकुल ग़लत है। यह जो कुछ हो रहा है—स्वाभाविक हो रहा है। तुम किसीके प्रति अन्याय नहीं कर रहे हो।"

इसी प्रकार दोनों मित्र बहुत रात गये तक बातें करते रहे।

प्रातः काल उठकर और नित्य-क्रियासे निवृत्त होकर ब्रजकिशोर दावतके प्रबन्धमें लग गये। आज विवाहके उपलक्ष्यमें दावत थी। उसका सारा प्रबन्ध-भार ब्रजकिशोर पर था।

दिनके ग्यारह बजेके लगभग जब कि रामनाथ अपने कमरेमें बैठे हुए समाचार पत्र पढ़ रहे थे हरद्वारीने आकर उनसे कहा—"बाबू-जी, नन्दराम सिंह आगये।"

रामनाथ चौंक पड़े। उन्होंने पूछा—"और कौन-कौन आया है ?"

"खाली नन्दराम सिंह और जस्सो बीबी आई हैं—और कोई नहीं आया।"

जस्सोका नाम सुनकर रामनाथका कलेजा धकसे हुआ। हृदयमें एक मीठी टीस उत्पन्न होगई।

वह शीघ्रता पूर्वक उठे और सीधे ब्रजकिशोरके पास पहुँचे। ब्रजकिशोर उस समय मीठी तथा नमकीन तश्तरिया लगवा रहे थे। रामनाथने उन्हे अलग लेजाकर कहा—"भाई ब्रजकिशोर, जिस बातका मुझे भय था वही बात आगे आई।"

"कौनसी बात?" ब्रजकिशोरने भ्रुकुटी चढाकर पूछा।

"जस्सो आई है।"

"और कौन आया है?"

"नन्दराम सिह आया है।"

"तो फिर? आये हैं तो आने दो।"

"यार मैं जस्सोके सामने क्या मुहँ लेकर जाऊँगा।"

"फिर वही बेढङ्गी बाते करने लगे।"

"मित्र तुम नही जानते कि मेरे हृदयपर क्या बीत रही है। जस्सोके आनेसे हृदयका घाव, जो सूख चला था, फिर हरा हो गया।"

"तुम्हारी इन व्यर्थ बातोंको सुननेके लिए मेरे पास समय नहीं है। मुझे अभी बहुत काम करना है।"

इतना कहकर ब्रजकिशोर पुनः अपने काममें लग गये। रामनाथ म्लान मुख होकर अपने कमरेमें लौट आये और बेचैनीके साथ टहलने लगे।

थोड़ी देर पश्चात् नन्दराम सिंह आया। उसने आतेही रामनाथके चरण छूनेके लिए हाथ बढ़ाया।

रामनाथ उसे बीचहीमें रोक कर बोले—"नन्दराम तुम अपनी यह हरकत नहीं छोड़ते—मुझे यह बात बुरी लगती है।"

नन्दराम हाथ जोड़कर बोला—"बाबूजी आप मेरे मालिक—।"

रामनाथ मुँह बनाकर बोले—"वह बात अब भूल जाओ।"

"वह तो मैं इस जीवनमें कभी नहीं भूल सकता।"

"अच्छा खैर, घरमें सब कुशल है?"

"हां सब आपकी दया है।'

"पिता जी, माता जी, सब मज़ेमें?"

"हा सब अच्छी तरह हैं।"

"वे क्यों नहीं आये?"

"माताजीको तो, आप जानिए, दिखाई ही नहीं पड़ता—पिता जी भी कुछ अस्वस्थ रहते हैं।"

"अच्छा जाओ, कपड़े-वपड़े उतारो, सफ़रसे आ रहे हो।"

नन्दराम चला गया।

रामनाथ चुपचाप कमरेमें टहलते रहे। हठात् चम्पाने उनके कमरेमें प्रवेश करते हुए कहा—"भइया, जस्सो आगई।"

रामनाथ चौंक पड़े; परन्तु चम्पाको सम्मुख देखकर उन्होंने स्वयम्‌को संभाला और बोले—"आगई तो अच्छी बात है।"

"इस बार तो बड़े ठाठ-बाटसे आई है।"

"तो क्या हुआ, ज़मींदारकी लड़की है।"

"ठाठ-बाटसे चाहे जितनी हो, पर पहलेसे दुबली हो गई है, यहां

अब थी, बहुत स्वस्थ थी, वहां जाकर तो रोगी-सी हो गई। जिस पर लोग देहातका जलवायु अच्छा बताते हैं।"

रामनाथके हृदयमें एक टीस उठी। उन्होंने चम्पासे उत्सुकता-पूर्वक कहा—"आखिर उसके रोगी होनेका कारण तो कुछ होगा ही। तूने उससे पूछा नहीं ?"

"अभी तो आकर बैठी है—अब पूछूंगी।"

"हां पूछना।"

चम्पा जाने लगी। रामनाथने कहा—"देख उसे आरामसे रखना, कोई कष्ट न होने पाये।"

"आपके कहनेकी आवश्यकता नहीं, मुझे स्वयम् इसका ध्यान है।" इतना कहकर चम्पा चली गई। रामनाथ एक दीर्घ निश्वास छोड़कर कुर्सीपर बैठ गये।

२८

जस्सोके आनेसे रामनाथका हृदय डावाँ-डोल हो उठा। विवाह के प्रति उनके हृदयमें अरुचि उत्पन्न हो गई। परन्तु अब वह इतना आगे बढ़ गये थे जहाँसे लौटना उनके लिए असम्भव था। अन्य अवसरपर तो वह कदाचित चेष्टा करके जस्सोसे बातचीत करते, परन्तु इस अवसरपर वह इस बातकी चेष्टा करते थे कि जस्सोसे उनका साक्षात न हो। परन्तु वैवाहिक रसूमातके अवसरपर अन्य स्त्रियोंके साथ जस्सो भी उनके सम्मुख आई। रामनाथने उसकी दृष्टि बचाकर उसकी ओर देखा। जस्सोके मुखपर उदासीनताके स्पष्ट चिन्ह थे; परन्तु उसकी उदासीनतामें सात्विकता थी—रोष तथा क्रोधका लेश मात्र भी नहीं था। रामनाथको वह मूर्तिमान करुणा दिखाई पड़ी। रामनाथका कलेजा हिल गया। आज उन्होंने पूर्ण रूपसे यह अनुभव किया कि विवाह करके वह जस्सोके साथ विश्वासघात कर रहे हैं। रसूमातसे छुट्टी मिलते ही वह अपने कमरेमें आकर बैठ गये और अपने कार्यपर मनन करने लगे।

सोचते-सोचते उनके नेत्रोंसे अश्रु बहने लगे। हठात् इसी समय ब्रजकिशोर आ गये। इन्हे आते देख रामनाथने झटपट आँसू पोंछ डाले। ब्रजकिशोरने पूछा—यहां अकेले कैसे बैठे हो?

रामनाथने सिर झुकाये हुए कहा—कुछ नहीं—ऐसे ही बैठा हूं।

ब्रजकिशोरने रामनाथकी ठोढी पकड़कर उनका मुंह ऊपर

उठाया—रामनाथके नेत्र लाल हो रहे थे और उनमे आंसू छलछला रहे थे। ब्रजकिशोरने विस्मयपूर्ण स्वरमें पूछा—"यह क्या मामला है।"

रामनाथने गद्गद कंठसे कहा—"कुछ नहीं।"

"कोई बात तो अवश्य है। जान पड़ता है जस्सोसे भेट करके आये हो।"

"नहीं, मैं अब इस योग्य ही नहीं जो उससे बात तक करनेका साहस कर सकूं।"

"अच्छा! यह क्यों?"

"जब मैं उसके प्रति, अपने प्रेमके प्रति विश्वासघात कर रहा हूं तो उससे क्या मुंह लेकर भेंट करूँ।"

ब्रजकिशोर समझ गये कि जस्सोकी उपस्थितिसे रामनाथके हृदयने पुनः पलटा खाया। ब्रजकिशोरने कहा—तुमने तो सब प्रकार करके देख लिया—इससे अधिक तुम कर ही क्या सकते थे।

"हाँ, परन्तु कम-से-कम एक कार्य मुझे और करना चाहिये था।"

"वह क्या?"

"विवाह न करना चाहिए था। यदि मैं विवाह न करता तो कोई बात नहीं थी; परन्तु अब तो मैं विश्वासघाती बन गया।"

"विवाह कुछ तुम थोड़ा ही कर रहे हो, तुम्हारे माता-पिता कर रहे हैं।"

"यदि मैं करना स्वीकार न करता तो माता-पिता क्या कर सकते थे?"

"यदि तुम विवाह करना अस्वीकार करते तो जानते हो क्या होता।"

"क्या होता ?

"बहुत बुरा होता। तुममें और माता-पितामे वैमनस्य हो जाता। उनको दुःख होता और यह स्वर्ग-तुल्य घर नर्क-तुल्य हो जाता।"

"मेरे लिए तो अब भी नर्क तुल्य ही है।"

"यह तुम्हारी भावुकता है।"

"सम्भव है ऐसा ही हो, परन्तु ब्रजकिशोर, मैं तुमसे सत्य कहता हूं कि मैं सुखी नहीं हूं।"

"सुखी न हों तुम्हारे शत्रु, कैसी व्यर्थ बात मुंहसे निकालते हो ?"

"यदि तुम जस्सोको दशा देख लो तो तुम्हे पता लगे।"

"क्या दशा है ?"

"वह सुन्दर पुष्प जिसे इस अवस्थामें पूर्ण विकसित तथा सौरभपूर्ण होना चाहिए था—इस समय शुष्क तथा कुम्हलाया हुआ है।"

"परन्तु उसे विकसित तथा सौरभपूर्ण करना तुम्हारे वशकी बात नहीं है।"

"है, ब्रजकिशोर। यदि मैं विवाह न करूँ तो—।"

"विवाह तो अब रुक नहीं सकता।"

"हां, और इसलिए कि मैं कायर हूं—स्वार्थी हूं।"

"नहीं। इसलिए कि तुम प्रेम करते हो परन्तु प्रेमान्ध नहीं

हो ; इसलिए कि तुम माता-पिताके प्रति अपना कर्त्तव्य समझते हो, इसलिए कि जस्सोसे तुम्हारा विवाह होनेकी कोई आशा नहीं।"

"परन्तु यदि मैं विवाह न करता तो जस्सोको सन्तोष रहता और सम्भव है कभी ऐसा समय आ जाता जब हम दोनों स्वतन्त्र हो जाते।"

"यह सब व्यर्थकी बातें है। ऐसा समय तभी आ सकता था जब न तुम्हारे ऊपर कोई बड़ा बूढ़ा होता और न उसके ऊपर। तो क्या, रामनाथ, मैं यह समझू कि तुम अपना स्वार्थ साधन करनेके लिए अपने और जस्सोके परिवारका नाश चाहते हो। क्या तुम उस दिनकी प्रतीक्षा करते हो जब तुम्हारे परिवारमें केवल तुम और जस्सोके परिवारमें केवल जस्सो रह जाय ? रामनाथ मुझे विश्वास है कि अभी तुम इतने पतित नहीं हुए हो।"

रामनाथ व्याकुल होकर बोले—"नहीं भाई, ऐसा तो मैं कभी भी न चाहूंगा।"

"तो फिर इन बातोंसे क्या लाभ ? ईश्वरकी जो इच्छा है वह हो रहा है। तुम भी वीरता और साहसके साथ सब सहन करो। रही जस्सो, सो उसका भी कहीं न कहीं विवाह हो ही जायगा। यदि तुमसे उसे इतना प्रेम होता कि तुम्हारे बिना वह संसारमें रह ही न सकती तो वह तुम्हारे विवाहके प्रस्तावको इस लापर्वाहीसे कभी न ठुकरा देती। तुमने तो सब कुछ करके देख लिया—तुम्हारा अब कोई दोष नहीं।"

"परन्तु मेरी आत्मा कहती है कि मुख्य दोषी मैं ही हूं।"

"मैं फिर कहता हूं यह तुम्हारी भावुकता है।"

"अच्छा भाई, भावुकता हीसही।"

ब्रजकिशोर अत्यन्त गम्भीर होकर बोले—"रामनाथ, ईश्वरकी दयासे तुम सुशिक्षित हो, बुद्धिमान हो। तुम्हे इस प्रकार किंकर्त्तव्य-विमूढ़ होना शोभा नहीं देता। यदि तुम अपनी ऐसी दशा बनाओगे तो जानते हो क्या होगा? जस्सो भी तुम्हे दोषो समझेगी। तुम्हें तो उचित है कि अपना व्यवहार ऐसा रक्खो जिससे जस्सो तुम्हे दोषी न समझकर अपने ही को दोषी समझे।"

"यह कैसे हो सकता है ब्रजकिशोर? जब मैं उसके सामने जाता हूं तो मेरी आंखें नीची हो जाती है। मैं उस समय अनुभव करता हूं कि मैं विवाह करके जस्सोके साथ अन्याय कर रहा हूं।"

"तुम्हे उस समय यह अनुभव करना चाहिए कि जस्सोने तुम्हारे विवाहके प्रस्तावको अस्वीकार करके तुम्हारे साथ अन्याय किया है।"

"परन्तु उसने अस्वोकार तो कभी नहीं किया। उसने केवल यह कहा कि वह अपने घरवालोंको अनुमतिके बिना विवाह नहीं कर सकती।"

"तुम भी तो अपने माता-पिताके ज़ोर देनेसे विवाह कर रहे हो। जो उसने किया वही तुम भी कर् रहे हो।"

"हां यह बात तो तुम्हारी किसी अंश तक ठीक है।"

"तो फिर यह स्त्रियोंकी भांति टसुए बहाना छोड़ो। मर्दोंकी तहर काम करो।"

"आह ब्रजकिशोर तुम नहीं जानते—यह दुष्ट प्रेम बड़े-बड़े वीरोंको तिनके चुनवा देता है, बड़े-बड़े बलवानोंको स्त्रियोंकी भाँति निर्बल बना देता है।"

"बना देता होगा। मैंने तो कभी किसीसे प्रेम नहीं किया। अतएव मैं ये बातें क्या जानूँ। मेरे लिए तो प्रेमका दूसरा नाम आत्माकी कमजोरी और भावुकता है।"

"इसी लिए तुम सुखी हो।

"यदि मेरे जैसे विचार तुम्हारे भी हो जाँय तो तुम भी सुखी हो सकते हो।"

"हाँ, परन्तु मेरा हृदय तुम्हारे हृदयकी भाँति प्रेमशून्य नहीं है। अतएव मेरे विचार तुम्हारे जैसे नहीं हो सकते।"

"अच्छा विवाह हो जाने दो, फिर तुम्हारे विचारोंको देखूँगा।"

२६

निश्चित समय पर बाराततने कानपुरसे प्रस्थान किया। उस दिन रामनाथके कुछ रिश्तेदार भी बाहरसे आ गये थे। इन रिश्तेदारोंमें दो रामनाथके समवयस्क थे। इन्होंने तथा कुछ स्थानीय मित्रोंने रामनाथ की उदासीनताको ताड़ा। उनमेसे एकने प्रश्न किया—"क्यों भाई रामनाथ, तुम कुछ उदास दिखाई पड़ते हो?"

"उदास कैसा?" रामनाथने आश्चर्यका भाव दिखाते हुए पूछा।

"यही कि विवाहके प्रति तुम कुछ उत्साहित तथा आनन्दित नहीं दिखाई पड़ते।"

"उत्साह तथा आनन्द दिखानेके लिए क्या करना होता है?"

"करना कुछ नहीं होता—वह तो मुखसे ही प्रकट हो जाता है।"

"हो जाता होगा। मैं कुछ बच्चा तो हू नहीं जो खुशीके मारे कूदने लगू।"

इसपर सबने अट्टहास किया। एक बोला—"यह हमने आज ही सुना कि विवाहकी खुशीके मारे कोई कूदने भी लगता है।"

रामनाथ कुछ लज्जित होकर बोले—"आप लोगोंको तो सूझा है मजाक़ और मैं इस समय मजाक़के 'मूड' (मौज) में नहीं हूं।"

"हो भी कैसे कहते हो, नोन-तेल-लकडीकी चिन्ता जो सवार हो गई।"

इस पर पुन. सबने अट्टहास किया।

"भई यह उन लोगोंमे नही है जो गा-बजाकर फाठमे पाव देते है।" एक बोला।

दूसरेने पूछा—"तो यह किन लोगोंमे है ?"

"यह उन लोगोंमे है जो गत-झोकते भविष्यकी चिन्ताके बोझा-बोझमे पड़कर विवाह करने जाते हैं।"

"इसीलिए बाल-विवाहको पुराने लोग अच्छा समझते हैं। उस समय कुछ चिन्ता नहीं रहती—विवाहका पूरा आनन्द मिलता है।"

"बिलकुल ठीक कहते हो—यही कारण है।"

इसी प्रकार जब मित्र-मण्डली रामनाथका उपहास कर रही थी, केवल व्रजकिशोर इस मण्डलीमे सम्मिलित नहीं थे। वह प्रबन्ध-कार्यमे इतने मग्न थे कि उन्हे इन बातोंके लिए अवकाश ही नहीं था।

बेचारे रामनाथ चुपचाप बैठे अपने हँसते हुए मित्रोंका मुह ताक रहे थे और सोच रहे थे—'इन लोगोंको क्या पता कि मेरे हृदयपर क्या बीत रही है। ये लोग तो मुझमें भी वही उत्साह तथा हर्ष देखना चाहते है जो ऐसे समयमें बहुधा नवयुवकोंमें हुआ करता है। परन्तु मुझमें वह बात कैसे हो सकती है। मेरा तो हृदय बैठा जाता है। मुझे ऐसा मालूम होता है कि मैं वह काम करने जा रहा हूं जो मुझे न करना चाहिए। ब्रजकिशोर दुष्ट इसे भावुकता

बताता है। परन्तु मेरा हृदय कहता है यह भावुकता नहीं है। चौबीस घंटोंके पश्चात्—हां केवल चौबीस घंटोंके पश्चात मेरे और जस्सोके बीचमे एक ऐसी गहरी खाई खुद जावेगी कि मेरा और उसका विवाह सम्बन्ध सदैवके लिए असम्भव हो जायगा।'

इसी समय उनके कानोंमे यह शब्द सुनाई पड़े—'भई इस समय यह किसी गहरी चिन्तामे है—अधिक मत छेड़ो।'

रामनाथ चौंक पड़े। उन्होंने जबरदस्ती हसनेकी चेष्टा करते हुए कहा—"मेरी समझमे नही आता कि आप लोग चाहते क्या है।"

"हम लोग यह चाहते है कि आप जब हंसे या मुस्करावे तो उसमे कुछ आनन्द और प्रसन्नताकी झलक हो। आपकी हसी देखकर तो रोनेको जी चाहता है। ऐसी रोनी-सूरत हॅसी तो मैंने आजतक किसी दूल्हेके मुखपर नहीं देखी।"

"देखा क्यों नही, मेरे मुखपर तो देख रहे हो।" रामनाथने विषाद-पूर्ण मुस्कानके साथ कहा।

"यह एक नया तथा विचित्र अनुभव हुआ है।"

"अनुभवोंका कभी अन्त नही होता और नये अनुभव सदैव विचित्र प्रतीत होते है।" रामनाथने कहा।

एक मित्र अन्य साथियोंकी ओर देखकर बोला—"सुना आपने ? क्या तत्वकी बात कही है।"

दूसरा बोला—"ज्ञानवायुमें आदमी ऐसी ही बातें करता है।"

इस पर पुनः सबने कहकहा लगाया।

रामनाथ बेचारे पुनः लज्जित होकर मौन हो गये।

उचित समय पर बारात निर्दिष्ट स्थान पर पहुंच गई। बारातका स्वागत खूब धूमधामसे हुआ।

पाणिग्रहण संस्कारके लिए जानेके कुछ पूर्व रामनाथने सोचा—"अब भी समय है।" परन्तु दूसरे ही क्षण उन्हे ध्यान आया—"अब समय कहाँ रहा। पीछे लौटना असम्भव है। चले चलो, ईश्वरकी यही इच्छा है।"

पाणिग्रहण संस्कारसे लौटकर रामनाथने ब्रजकिशोरसे बड़े ही नैराश्यपूर्ण स्वरमें कहा—"ब्रजकिशोर, आज समाप्त हो गया।"

"क्या ?" ब्रजकिशोरने पूछा।

"मेरे जीवनका सुख-स्वप्न। मेरे जीवनका वह नाटक जिसका मैं नायक और जस्सो नायिका थी।"

"नाटक समाप्त होनेके लिए ही आरम्भ होता है।"

"हाँ, परन्तु यह शीघ्र समाप्त हो गया—और—और जानते हो क्या हुआ ? मैं अपना पार्ट खेलनेमे असफल रहा। यदि मैं अपना पार्ट उचित रूपसे करता तो यह नाटक इतना शीघ्र समाप्त न होता।

"उस दशामें तुम्हारा नाटक सुखान्त नहीं, दुःखान्त होता।"

"दुःखान्त तो अब भी हुआ है।"

"अभी तुम्हे ऐसा ही प्रतीत होता है।"

"अभी क्या, सदैव प्रतीत होता रहेगा।"

"आगे क्या होगा, यह कोई नहीं बता सकता। वह भविष्यके गर्भमें अन्तर्निहित है।"

"अधिकतर भविष्य वर्त्तमानपर निर्भर होता है। वर्त्तमान

समयमे जो कुछ किया जाता है, भविष्य उसीके अनुसार बनता है।"

"हाँ ऐसा भी होता है, पर सदैव नही। अतएव इसे नियम नहीं बना सकते।"

"जब नहीं होता तब वह अपवाद कहा जाता है। प्रत्येक नियममे अपवाद होता है—और अपवाद ही नियमका अस्तित्व प्रमाणित करता है।"

"देखिये, आगे चलकर पता लगेगा।"

"जिसे पता लगेगा वह जानेगा, तुम्हे क्या ?"

"मुझे ? मुझे सबसे पहले पता लगेगा।"

"ब्रजकिशोर, एकाध बेर मेरे हृदयमें यह प्रश्न उठा है कि तुम मेरे मित्र हो या शत्रु।"

"अच्छा। यह क्यों ?"

"मेरे तथा जस्सोके प्रेमपर तुम सदैव कुठाराघात करते रहे हो।"

"मैं कुठाराघात करता रहा हू। अरे क्यों अन्धेर करते हो, तनिक ईश्वरसे डरो। तुम्हारे लिए मैं चन्द्रपुर गया था—यह कदाचित् तुम भूल गये ?"

"परन्तु उससे लाभ क्या हुआ ?"

"अब इसे मैं क्या करूं, यह तुम्हारे भाग्यका दोष है।"

"यह विवाह करानेमें भी तुम्हारी भरपूर कोशिश रही है।"

"यह भी बिल्कुल ग़लत है। यह काम तुम्हारे पिताजीका है।"

"नहीं, मेरा तात्पर्य यह है कि तुम्हींने मुझे विवाहके लिए उद्यत किया।"

"नहीं तो तुम विवाह न करते ?"

"न करनेका प्रयत्न अवश्य करता।"

"अजी बस बैठे भी रहो, प्रयत्न करते अपनी ऐसी-तैसी। पिताजीके सामने बोलते तो घिग्घी बँधती है—प्रयत्न करते। और क्यों जनाब, मैंने जो आपको समझाया तो क्या बुरा किया ? यदि आप कुछ हिमाक़त कर बैठते तो—?"

"इससे तो फिर भी अच्छा ही होता।"

"होता तुम्हारा सिर। न कुछ होता न हुवाता—होता वही जो हुआ है। मेरे समझाने-बुझानेसे इतना हुआ कि, तुम्हे मुझपर दोषारोपण करनेका बहाना मिल गया।"

"बहाना क्यों, सच्ची बात है।"

"तो भाई साहब, यदि आप मुझसे यह आशा रखते थे कि मैं आपको यह परामर्श देता कि आप विवाह कदापि न करें—यदि पिता जी न माने तो नन्दरामकी तरह घर छोड़कर भाग जाँय—तो यह आपकी भूल थी। मैं ऐसी सलाह कभी नहीं दे सकता। ईश्वर की दयासे अभी मेरा दिमाग खराब नहीं हुआ है। इसके अतिरिक्त मैं यह भी जानता था कि तुमसे यह होगा भी नहीं। अतएव तुम्हे उसके लिए प्रोत्साहित करना व्यर्थ था। जब मैं चन्द्रपुरसे लौटकर आया था, उस समय तुमने क्या कहा था—याद है ?

"मुझे इस समय कुछ याद नहीं है। मैं केवल एक बात जानता हूं, और वह यह है कि मैंने विवाह करके अच्छा नहीं किया।"

"यह तो तुम तीन सौ साठ बार कह चुके हो, और विवाह होनेके

पहलेसे कहते चले आ रहे हो ; परन्तु, मित्र, विवाह तो अब हो ही गया। और इस विवाहसे आपकी कोई बहुत बड़ी हानि नहीं हुई। यदि अवसर मिले तो जस्सोसे भी विवाह कर लेना। हिन्दुओंमें, तुम्हारे भाग्यसे अभी बहु-विवाहकी प्रथा प्रचलित है।"

"परन्तु वह कोई अच्छी प्रथा नहीं।"

"अच्छी प्रथाएं तो बहुत-सी नहीं है, परन्तु वे सब चालू है। इसी प्रकार यह भी चालू है।"

"परन्तु मैं तो उस प्रथाके अनुसार कार्य नहीं करना चाहता।"

"यदि तुम्हारे प्रेममे कुछ बल होगा तो झख मारके करोगे।"

इसी समय कुछ अन्य लोग आ गये—अतएव दोनों मित्रोंका वार्त्तालाप समाप्त हो गया।

उधर तो यह हो रहा था इधर जस्सो बेचारीपर जो बीत रही थी उसे वही जानती थी। रामनाथकी तरह उसे इतनी सुविधा भी प्राप्त नहीं थी कि वह अपने हृदयकी बात किसीसे कहे। इस कारण रामनाथकी अपेक्षा उसकी दशा अधिक दयनीय थी। परन्तु वह अपने इस मानसिक क्लेशको जिस धैर्य तथा दृढताके साथ सहन कर रही थी वह सर्वथा प्रशंसनीय था। वह विवाहके आनन्दोत्सवमे भाग लेती थी। स्त्रियोंके साथ गाती थी, हंसती थी। परन्तु जितना वह सबके साथ हंसती थीं उससे अधिक एकान्तमें बैठकर रोती थी। उसे ऐसा जान पड़ता था कि मानों संसारमे उसका कोई नहीं हैं। रामनाथ बाबू पर उसने अपना भविष्य, अपना सुख, अपना जीवन, अपना सर्वस्व निर्भर किया था; परन्तु अन्तमें उन्होंने भी आंखें फेर लीं। अब

संसारमें उसका कौन है ? परन्तु इतना होते हुए भी रामनाथके प्रति उसका प्रेम किञ्चिन्मात्र भी कम न हुआ था। वह रामनाथको सर्वथा निर्दोष समझती थी—दोष समझती थी वह केवल अपने भाग्यका।

उचित समय पर बारात लौट आई। नव-वधूको देखकर सबको प्रसन्नता हुई। वह यथेष्ट सुन्दर थी। जस्सोने मुँह-दिखाईमें नव-वधूको एक सुन्दर नकलेस हार, जिसका मूल्य तीन सौ रुपयेके लगभग होगा और एक जरीके कामकी सुन्दर साड़ी भेंट की। रामनाथकी माता बोलीं—"अरे बेटी इतनी भारी चीज देनेकी क्या जरूरत है।"

जस्सोने उत्तर दिया—"माताजी मैं आपको देने योग्य कब हूं, मैं तो खुद आपका अन्न खाकर पली हूं।"

"बस तेरी यही बात मुझे बुरी लगती है। तू यह बात न कहा कर।"

चम्पा बोल उठी—"इसे वही बात कहनेमें आनन्द आता है—जो हमें बुरी लगे।"

"अच्छा अब न कहा करूँगी—बस ? और, यह तो दादीजीने दिया है—मैं देनेवाली कौन हू।"

"दादीजीका नाम लेती है, कर्त्ता-धर्त्ता तो तू ही है, उन्हें तो आँखोंसे नहीं सूझता।" चम्पाने कहा।

रामनाथकी माता बोलीं—"लाख आँखोंसे न सूझे, मुँहसे तो बता सकती हैं। जब घरमें बड़ा-बूढ़ा मौजूद है तो उसके होते हुए छोटा कर्त्ता-धर्ता कैसे हो सकता है। यह जो कुछ करती होगी उन्हींकी आज्ञा से।

माताकी बातसे चम्पा निरुत्तर हो गई।

बारात लौटनेके पाँचवे दिन सोहाग-रात थी। इस दिन जस्सो सवेरेसे ही चैतन्य हो गई। दासियोंके रहते हुए भी उसने अपने हाथसे नव-वधूके उबटन लगाया, उसे नहलाया। चम्पाने पूछा—"अरी यह क्या करती है।" जस्सोने विषादयुक्त मुस्कराहटके साथ उत्तर दिया—"जिसमें मुझे सुख मिलता है वही करती हूं।"

"इसमें क्या सुख है पगली ?"

"तुम्हे क्या बताऊं।

चम्पाने अपनी मातासे जाकर कहा—"यह जस्सो बड़ी पागल है। सवेरेसे भूतकी तरह जुटी है। और किसीको हाथ ही नहीं लगाने देती।"

माताने आकर कहा—"अरे बेटी, तू क्यों हलकान हो रही है—यह तेरा काम थोड़ा ही है।"

"माताजी आज मुझे जी भरके सेवा कर लेने दो, ऐसा सौभाग्य फिर कहाँ मिलेगा।

इतना कहते-कहते जस्सोके नेत्रोंमें आँसू छलछला आये। अपने आँसुओंको छिपानेके लिए उसने सिर झुका लिया।

नव-वधूका सिर गूधनेमें उसने काफ़ी समय लगाया। चोटी धते-गूँधते वह ज्ञान-शून्य-सी हो जाती और उसकी उंगलियाँ रुक जातीं उस समय नव-वधू कहती—"क्या कर रही है—मैं तो बैठे बैठे थक गई।" उस समय जस्सो चौंककर पुनः जल्दी-जल्दी उंगलियाँ चलाने लगती! नव-वधू सोचती यह लड़की कुछ पागल सी जान पड़ती है।

सिर गूँधकर उसने हाथ फेरते हुए कहा—"बहू तुम बड़ी भाग्य-वान हो।"

नववधूने कुछ विस्मित होकर उसकी ओर देखा और कहा—"क्यों ?"

जस्सो मुस्कराकर बोली—"भाग्यवान न होतीं तो इस घरमें व्याहकर क्यों आतीं।"

"दुर पगली। कहकर नव-वधू उठ खड़ी हुई।

हठात् जस्सो घबरा उठो। उसने कहा—"ओ। जरा ठहरो।"

"क्यों ?"

"एक कसर रह गई।"

"कौन सी कसर ?"

"माँग तो भरी नहीं।"

"अच्छा, चल बैठ, रहने दे।"

"तुम्हे मेरी कसम—दो मिनिटका काम है।"

नव-वधू मुस्कराकर बैठती हुई बोली—"तूने तो आज मेरे प्राण ले लिये।"

"तो बदलेमें अपने प्राण भी तो तुम्हें सौंप रही हू।"

"मैंने तो तुमसे कहा नहीं, तू अपने आप ही जुटी हुई है।"

जस्सो हँसकर मौन हो गई। वह शीघ्रतापूर्वक जाकर सिदूर लाई और मांग भरने बैठी। सिदूरमें उँगली डुबोकर उसने नव-वधूको दिखाते हुए कहा—"देखो कितना लाल है—बिल्कुल रक्त मालूम होता है।"

नव-वधू बोली—"सिन्दूर लाल तो होता ही है।"

हाँ लाल ही होता है। यह कहते हुए जस्सोने माँगमे सिदूर भरना आरम्भ किया।

हठात् उसने पूछा—भला कोई रक्तसे भी माँग भरता होगा ?

"रक्तसे भला कौन भरेगा। क्यों ?"

"ऐसे ही पूछती हूं। जब सिदूरका चलन न हुआ होगा तब काहेसे माँग भरी जाती होगी ?"

"यह तो कोई इतिहासका जाननेवाला ही बता सकता है—मैं क्या जानू।"

"छोटे बाबू जानते होंगे, उन्होंने इतिहास पढ़ा है। पूछना तो।"

नव-वधूने कुछ लज्जित होकर जस्सोके गाल मसल दिये और बोली—"तूही न जाकर पूछ ले।"

"मुझे भला वह क्यों बताने लगे।" जस्सोने कुछ उदास होकर कहा।

माँग भर जानेके पश्चात् जस्सोने अपनी ही लाई हुई साड़ी भी पहनाई। साड़ीका प्रश्न उठनेपर उसने स्वयम् चम्पाकी मातासे यह प्रार्थना की कि वही साड़ी पहनाई जावे। चम्पाकी माताने कह दिया :—जो तेरा जी चाहे पहना, आज तो तू ही सब कर रही है—साड़ी भी अपने मनकी पहना।

पूर्ण श्रृङ्गार हो जानेके पश्चात् जस्सो एक बेर नव-वधूको सिर से पैरतक देखकर बोली—"आज तुम्हे देखकर छोटे बाबू सब कुछ भूल जायँगे।"

नव-वधूने जस्सोकी इस बातका मर्म्म न समझकर कोई उत्तर न दिया, केवल मुस्कराकर रह गई।

रातमे पत्नीको देखकर रामनाथ संतुष्ट हुए। साडीको देखकर रामनाथने पूछा—यह साडी तो बडी सुन्दर है, कहाँसे मिली ?

"यह साडी जस्सोने दी है और यह नेकलेस दिया है।

"अच्छा।" कहकर रामनाथ मौन हो गये—उनका मुख मलिन हो गया। हठात् पत्नी पूछ बैठी—"यह जस्सो कौन है ?"

"कोई नहीं।" रामनाथने अन्यमनस्कतासे उत्तर दिया।

"कोई नहीं। कोई तो होगी ही ?"

रामनाथ चौंक पडे और सिटपिटाकर बोले—"हाँ वह जातिकी ठाकुर है। उसका बाप घरसे लडकर हमारे यहाँ चला आया था और कुछ दिनों नौकरी करता रहा था, फिर उसका बाबा आकर सबको ले गया था।"

"लडकी है मुहब्बतवाली। आज सवेरेसे मेरी ही सेवामें लगी रही। नहलाया-धुलाया, कंघी चोटी की, कपडे-वपडे पहनाये—सब उसीने किया।"

रामनाथके हृदयपर एक धक्का लगा। वह भीतर ही भीतर तिलमिला उठे। उन्हे ऐसा प्रतीत हुआ कि जस्सोने उनकी पत्नीके शृङ्गारमें अपना हृदय ओत-प्रोत करके उनके सामने रख दिया है। उन्होंने इस समय महसूस किया कि जस्सो कितनी महान् है और वह कितने क्षुद्र। उनके हृदयमें अशान्तिकी ज्वाला धधक उठी। सुसज्जित तथा विदयुत्प्रकाश-पूर्ण कमरेमें कोमल शय्यापर नव-

यौवना सुन्दरीके समीप बैठे हुए भी उन्हे यह प्रतीत हुआ कि वह किसी मरुभूमिमें अकेले पथभ्रष्ट बैठे हैं। चारों ओर शृंगारकी सामग्री होते हुए भी उनके हृदयमें इस समय वैराग्य उमड़ रहा था।

उनकी पत्नीने उनकी इस अन्यमनस्कता तथा उदासीनताको देखा, परन्तु वह नव-वधूचित लज्जाके कारण उसका कुछ कारण न पूछ सकी, सिर झुकाये चुपचाप बैठी रही।

रामनाथ सोच रहे थे :—"क्या सोचा था क्या हुआ। विधनाके लेखको कौन मेट सकता है। मैंने तो बहुत चेष्टा की, परन्तु भाग्यमे यही लिखा था। अभागी जस्सोको दुख भोगना ही बदा है, और, मेरे हृदयमें भी यह कांटा जन्म भर खटकता रहेगा।"

रामनाथ इसी प्रकारकी बातें सोच रहे थे। हठात् पत्नीको खाँसी आनेसे उनकी मग्नता भंग हुई। उन्होंने चौंककर कुछ क्षणों तक उसकी ओर देखा तत्पश्चात् मुँह बनाकर बोले—"आज मेरे सिरमें पीड़ा हो रही है।"

यह कहकर वह लेट रहे।

इधर जस्सो अपनी चारपाईपर पड़ी थी। उसके पास ही दूसरी चारपाईपर चम्पा लेटी हुई थी। जस्सो सोच रही थी—रामनाथ बाबूका क्या दोष है—सारा दोष मेरे भाग्यका है। उन्होंने तो अपनी तरफ़से सब कुछ किया। व्याहका संदेश तक भेजा; परन्तु जिस प्रकारसे वह चाहते थे उस प्रकारसे व्याह कैसे हो सकता था। और कोई युक्ति भी तो नहीं थी। उनके माता-पिता व्याह करनेको कभी राज़ी न होते—मेरे बाबा भी राजी न होते। हाय, मैं किस बुरी घड़ी-

इनके द्वारपर आई थी। खैर, यह भी अच्छा ही है कि जो कुछ दुःख है वह मुझे है। रामनाथ बाबूको भगवान सुखी रक्खे, उन्हें सुखी देखकर मुझे भी एक प्रकारसे सुख ही रहेगा।"

हठात् चम्पाने करवट लेकर कहा—"जस्सो तेरा व्याह कब होगा?"

जस्सोने एक दिर्घ निश्वास छोड़कर कहा—"मेरा व्याह तो इस जन्ममे हो चुका।"

"क्यों?" चम्पाने विस्मित होकर पूछा।

"भिखारिणीसे कौन विवाह करेगा?"

"भिखारिणी जब थी तब थी, अब तो नहीं है।"

"भिखारिणी तो अब भी हू।"

"भिखारिणी नहीं है—व्यर्थ बाते बनाती है।

"कलंक तो सदाके लिए लग गया।"

"इसमे कलंककी कौन बात है?"

"तुम क्या जानो, चम्पा बीबी—यह ससार बड़ा विलक्षण है।"

"तेरा सिर विलक्षण है। पगली, समझती है कि जन्मभर कुँवारी रहेगी।"

"देख लेना।"

"देखा है। तेरे बाप-बाबा तुझे कुँवारी रहने देंगे न?"

"जब कोई व्याह करेगा ही नहीं तो क्या करेंगे।"

"तेरे जैसी-से कोई ब्याह न करेगा!"

"क्यों, मुझमें कोई विशेषता है क्या ?"

"क्यों, है क्यों नहीं। तेरेमे कौन सी बात नहीं है। सुन्दर तू है, अच्छे खानदानकी तू है, पैसे-वाली तू है—इससे अधिक और क्या होता है ?"

"इससे अधिक भाग्य होता है—चम्पा बीबी, भाग्य खोटा होता है तो कोई बात काम नहीं देती।"

"भाग्य खोटा हो तेरे बैरीका।"

जस्सो केवल एक लम्बी साँस लेकर रह गई। थोडी देरतक दोनों मौन रहीं। हठात् जस्सोने पूछा—"तुम्हारा व्याह कब होगा ? अपनी तो कहो।"

"मेरा व्याह जब माता-पिता करेंगे तब होगा।"

"अपने व्याहमें मुझे बुलाओगी ?"

"पहले तो तेरा होगा, तू बुलायेगी तो मैं भी बुलाऊँगी।"

"हाँ, मेरा व्याह होगा तो जरूर बुलाऊँगी।"

"तू बुलायेगी तो मैं भी बुलाऊँगी, तू न बुलायेगी तो मैं भी न बुलाऊँगी।"

कुछ देर तक दोनों इसी प्रकारकी बातें करती रहीं। इसके पश्चात चम्पा सो गई, परन्तु जस्सोको नींद नहीं आई—वह पडी करवटें बदलती रही।

३०

बारात लौटनेके एक सप्ताह पश्चात् नन्दरामसिंहने घर जानेकी अनुमति चाही। इस बीचमे रामनाथ तथा जस्सोसे एक क्षणके लिए भी स्वतन्त्रतापूर्वक साक्षात् नही हुआ। रामनाथ तो विवाह करनेके कारण इतने भीरु हो गये थे कि जस्सोके सम्मुख जाते हुए उन्हे भय मालूम होता था। इधर जस्सो यह समझती थी कि उसने रामनाथका विवाहका प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया, इससे रामनाथ उसपर रुष्ट है, अतएव उसका साहस भी नहीं होता था कि वह उनसे कुछ वार्त्तालाप करनेका प्रयत्न करे।

नन्दरामसिंहके अनुमति माँगनेपर रामनाथके पिताने कहा—"अभी कौन जल्दी पड़ी है, चार-छः दिन रहो।"

नन्दरामने कहा—चार छः दिन क्या, मैं चार छः महीने रहूँ, पर वहाँ पिता जी चिन्तित होंगे।

"चिन्तित क्यों होंगे, वह तो जानते ही हैं कि यहाँ आये हो।" बाबू श्यामनाथने कहा।

"जानते अवश्य हैं, परन्तु आजकल वहाँके काम-काजका सारा भार मुझपर है, घरका काम-काज जस्सो देखती है—माता जी को तो सूझता ही नहीं, उन्हे भी बडी असुविधा हो रही होगी।"

बाबू श्यामनाथने रामनाथको बुलाकर कहा—"अरे भई रामनाथ, यह नन्दराम जानेके लिए कह रहा है।"

रामनाथने पूछा—"क्यों भई, क्या जाना चाहते हो ?"

"मैं क्या जाना चाहता हूं। वहां घरपर प्रतीक्षा हो रही होगी; इसलिए जाना पड़ रहा है।"

"दो चार दिन और रहते।"

"नहीं, अब जाने ही दीजिए।"

रामनाथने पितासे कहा—"तो जाने दीजिए, मजबूरी है।

बाबू श्यामनाथ बोले—अच्छी बात है, कल चले जाना, कमसे कम आज तो और रहो।

"अच्छी बात है, कल सही।"

नन्दरामके जानेकी बात जानकर बाबू रामनाथको प्रसन्नता हुई। प्रसन्नता इसलिए हुई कि नन्दरामके साथ जस्सो भी चली जायगी। जस्सोके रहनेसे उन्हे कष्ट था। एक कष्ट तो यह था कि जस्सोकी उपस्थितिके कारण उनका चित्त उदास रहता था। वह जस्सोको भूलनेकी चेष्टा करते थे, परन्तु जहां उसका नाम सुनते अथवा उसकी झलक देखते तो उनके हृदयमें टीस होने लगती थी। दूसरा कष्ट यह था कि वह घरमे स्वच्छन्दतापूर्वक आ-जा नही सकते थे, जस्सोके सामने जाते हुए उन्हे भय तथा लज्जा मालूम होती थी, इस लिए उन्हे अधिकतर मकानके बाहरी भागमे पड़े रहना पड़ता था। जस्सोके चले जानेसे इन दोनों कष्टोंसे छुटकारा मिल जायगा, अतएव वह प्रसन्न थे।

कितना विकट परिवर्त्तन। एक दिन वह था जब जस्सोको अपने यहां रखनेके लिए उन्होंने कितना प्रयत्न किया था और उसमें असफल

होने पर उन्हे कितनी हार्दिक पीड़ा हुई थी। परन्तु आज वह प्रसन्न हैं और इसलिए प्रसन्न है कि जस्सो चली जायगी, उनकी आँखोंके सामनेसे टल जायगी। रामनाथने भी अपने इस परिवर्त्तनको महसूस किया और एकान्तमें बैठकर इसपर मनन भी किया। बहुत देर सोच-विचार करनेके पश्चात् उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि आरम्भसे लेकर अबतक वह परिस्थितिके दास रहे। परिस्थिति उन्हे जैसा नाच नचाती रही वैसा नाच वह नाचते रहे।

दूसरे दिन दोपहरके समय जब कि जस्सो चलनेकी तैयारी कर रही थी तो चम्पाने पूछा—"अब कब आवेगी ?"

जस्सोने विषादपूर्ण मन्द मुस्कानके साथ कहा—"जो जीवित रही तो तुम्हारे व्याहमें आऊँगी।"

चम्पा किञ्चित् लज्जायुक्त मुस्कराहटके साथ बोली—तब तो आवेगी ही, बीचमें नहीं आवेगी ?"

"बीचमें ? बीचमें आकर क्या करूँगी ?"

"ऐसे ही घूम-फिर जाना "

जस्सो दीर्घ निश्वास छोड़कर बोली—"अब आना कहाँ होगा। इस बेर तुम हमारे यहाँ आओ।"

"मैं तो तेरे व्याहमें आऊँगी।"

"नहीं पहले एक बेर आओ।"

"पहले तो आना कठिन है।"

"क्यों ?"

"यहाँसे कोई काहेको आने देगा।"

"मैं लिखूगी तब भी नहीं जाने देंगे ?"

"हां तुम लिखो तो चाहे जाने दें।"

"हां मैं लिखूगी, अपनी भाभीको भी साथ लाना।"

"भाभीको।"

"हां, क्यों ? कोई हर्ज है क्या ?"

"नहीं, हर्ज तो नहीं—भाभीको भेजेंगे तो उन्हें भी लेना आऊंगी।"

"मेरी बड़ी इच्छा है कि एक बेर तुम और तुम्हारी भाभी वहां आओ।"

"देखो, बदा होगा तो आवेंगे ही।"

जस्सो म्लान मुख होकर बोली—हां, बदेको तो सारी बात ही है।

इधर तो जस्सो चम्पासे बातें कर रही थी। उधर नन्दरामसिंह बाबू श्यामनाथ तथा रामनाथसे विदा हो रहा था। नन्दराम कह रहा था —"अब देखिये, कब आप लोगोंके दर्शन हों। अपना कुशल समाचार देते रहियेगा, ऐसा न हो भूल जाइये।"

रामनाथ मौन रहे। वकील साहब बोल उठे—"नहीं, भूल कैसे सकते हैं। तुम भी चिट्ठी-पत्री लिखते रहना। हां, यह तो बताओ, लड़कीका विवाह कब करोगे ? कहीं बातचीत लगी है ?"

नन्दराम बोला—बातचीत पक्की तो नहीं हुई, परन्तु ऐसी आशा है कि जल्दी ही पक्की हो जायगी।

"हमारे योग्य जो काम हो बताना।"

"आप लोगोंका तो भरोसा ही है।"

"और जब कभी वहाँसे जी ऊबे तो यहाँ आ जाया करना—दस-पाँच दिन रहकर चले जाना।"

"हाँ आ जाऊँगा।"

इसी समय पालकी गाडी आगई और असबाब लादा जाने लगा। बाबू श्यामनाथने रामनाथसे पूछा—"स्टेशन तो जाओगे न ?"

रामनाथ इस प्रश्नपर पहले ही से विचार कर रहे थे। यद्यपि उनको बहुत इच्छा थी कि स्टेशन तक जाँय, परन्तु साहस न होता था।

इस समय बाबू श्यामनाथके प्रश्न करनेपर वह सोचने लगे कि क्या कहूँ, परन्तु उनके कुछ कहनेके पूर्व ही नन्दराम बोल उठा—"क्या करेंगे, व्यर्थ कष्ट होगा।"

"नहीं कष्टकी कौन सी बात है।" रामनाथने कहा।

नन्दराम बोला—"तो कोई आवश्यकता भी तो नहीं।"

वकील साहब बोल उठे—"तो हर्ज क्या है ?"

"नही, दोपहरका समय है। आराम करने दीजिए।"

रामनाथ चुप रह गये। वह इस समय कि-कर्त्तव्य-विमूढ हो रहे थे। नन्दरामके मना करनेपर उन्होंने अपने चित्तको संतोष देनेके लिए सोचा मैं तो जानेको तैयार हूँ, पर यह आवश्यकता नहीं समझता तो न सही।

जस्सो सबसे गले मिलकर बिदा हुई। रामनाथकी पत्नीसे वह विशेष रूपसे बडे प्रेमपूर्वक गले मिली और नेत्रोंमें आँसू भरकर बोली—"इस गरीबनीको भूल न जाना।"

उसने मुस्कराकर जस्सोके कानमे कहा—तुझे कैसे भूलूगी, उस दिन (अर्थात—सोहागरात-वाले दिन) मुझे कितना हैरान किया था—याद है ?

"याद है, और जन्म भर याद रहेगा। वही दिन तो मेरे जीवनका एक दिन था"। जस्सोने हर्षपूर्ण विषादके साथ कहा।

जस्सो आकर गाडोमे बैठी। चम्पा उसे बाहर तक पहुचाने आई। रामनाथ गाडीके ठीक सामने बरामदेम खडे थे। चम्पाने रामनाथसे पूछा—"भइया, स्टेशन नही जाओगे क्या ?"

रामनाथने मानो प्राण पाये। मनही मन चम्पाके इस प्रश्नपर प्रसन्न होकर उच्च स्वरसे जिसम जस्सो सुन सके, बोले—"मैं तो तैयार था परन्तु नन्दरामने मना कर दिया।"

चम्पा बोली—"वह लाख मना करे, तुम्हारी इच्छा होती तो जरूर जाते।"

रामनाथकी सारी प्रसन्नता मिट्टीमे मिल गई। ठीक इसी समय जस्सोने थोडा-सा मुँह निकालकर उनकी ओर देखा। एक क्षणके लिए रामनाथकी ओर उसकी दृष्टि मिल गई। जस्सोके मुखपर हल्की सी विषादपर्ण मुस्कराहट थी। रामनाथ उस दृष्टिको सहन न कर सके, उनका हृदय डूबने लगा। उन्होंने अपराधीकी भाँति सिर झुका लि

गाडी चल दी।

\+ + + +

जस्सो ट्रेनमें बैठी हुई प्लेटफार्मके उस स्थानको स्थिर दृष्टिसे

देख रही थी जहाँ रामनाथ उस दफ़ा खड़े थे जब कि वह उसे पहली बेर पहुंचाने आये थे। आज वह स्थान, यात्रियोंकी भीड़के रहते हुए भी, जस्सोके लिए सूना था। यह जानते हुए भी कि रामनाथ नहीं आये, उसकी दृष्टि उन्हें ढूढ रही थी।

गाड़ी झटका देकर चली। जस्सोकी दृष्टि उसी स्थानपर लगी रही। प्लेटफार्म अदृश्य हो गया, परन्तु वह उसी ओर ताकती रही। पिछली घटनाएं उसके मस्तिष्कमें एक-एक करके आती थीं और रेलवे लाइनके किनारे लगे हुए तारके खम्भोंके साथ साथ विलीन हो जाती थीं। अपना पिछला जीवन उसे एक स्वप्न-सा प्रतीत हो रहा था, परन्तु आह! वह स्वप्न कितना मधुर था, कितना सुख-दायक था! और यह जागृति? कुछ नहीं! संसार असार है। उतना ही अस्थिर और परिवर्त्तनशील जितना कि दौड़ती हुई ट्रेनके भीतर-से दिखाई देनेवाला बाहरका दृश्य। कानपुर प्रति क्षण दूर हटता चला जा रहा था। उसके साथ ही जस्सोके हृदयकी अभिलाषाएं और आशाएं भी हटती चली जा रही थीं। और हटता चला जा रहा था संसारका मोह, जीवनका मोह, अपने अस्तित्वका मोह! कानपुरके मिलोंकी गगन चुम्बी चिमनियाँ भी अदृश्य हो गई थीं—केवल आकाशके कुछ भागमे तैरता हुआ उनका धुआँ इस बातकी सूचना दे रहा था कि इसीके नीचे कहीं कानपुर विद्यमान है। "यह थोड़ा सा धुँआ क्या इतने बड़े नगरका धुँआ है। उसी धुएँके नीचे क्या कानपुर नगर है? वह कानपुर जिसमे मेरे हृदय-देवता रामनाथ रहते हैं? होगा! अपनेसे क्या? और रामनाथ मेरे हृदय-देवता क्यों

अपनी पत्नीके हृदय देवता होंगे। वह उसे मुबारक रहें, उन्हे वह मुबारक रहे। ऐं। अब तो धुंआ भी नहीं दिखाई पड़ता। वह भी अदृश्य हो गया। गया, वह भी गया? जाने दो। सब भ्रम था, न कहीं कानपुर है और न कहीं रामनाथ। ऐ। यह मैं क्या सोच रही हू। धुआँ न हो, कानपुर न हो, परन्तु रामनाथ। वह भी है, वह न सही—उनकी मूर्ति तो हृदयमें विराजमान है और सदा रहेगी। कानपुरको मैं भूल सकती हू, संसारको भूल सकती हू परन्तु रामनाथको भूलना मेरे वशकी बात नहीं आह। यदि मैं उन्हे भी भूल सकती तो—। गाड़ीमें बैठकर जब मैंने उन्हे देखा था—वह बरामदेमें खड़े थे। मुझसे दृष्टि मिलते ही उन्होंने सिर नीचा कर लिया था। स्टेशनपर पहुचाने तक न आये। हाँ अब क्यों आते। मैं उनकी कौन हूं जो आते। वह मुझे भूलनेकी चेष्टा कर रहे हैं—अच्छा है। भूल जाँय तो अच्छा ही है। यदि वह मुझे भूलकर सुखी हो सकते है तो उन्हे अवश्य भूल जाना चाहिए। मुझे इस बातपर संतोष है।"

जस्सोकी आँखोंमें आँसू भर आये। "ऐं, यह क्या? फिर वही हृदय-दुर्बलता। मैं उनका ध्यान ही क्यों करती हूं? वह हैं कहाँ? कोई दूसरी बात सोचनी चाहिए। हाँ, दादीजी प्रतीक्षा करती होंगी। मेरे पहुँचने पर वह कितनी प्रसन्न होंगी। विवाहकी सब बातें पूछेंगी। सब बताऊंगी। हाँ, बताऊँगी, परन्तु संक्षेपमें। विस्तारमें तो मुझसे न बताया जायगा! फिर वही बातें याद आवेंगी। और याद क्यों न आवें? वे बातें भुलाई थोड़ा ही जा सकती हैं। विशेष करके सोहाग-

वाला दिन। वह तो जन्म भर याद रहेगा। उस दिन मैंने बहूका श्रृंगार कैसा किया था। रामनाथ बाबू देखकर चकित रह गये होंगे उन्हें क्या पता कि किसने श्रृंगार किया था। बहूने बताया थोडा ही होगा। वह बेचारी है तो बड़ी नेक, मुझसे बडे स्नेहका व्यवहार किया। अच्छा है, बेचारी फले-फूले, जीवनका सुख देखे। रामनाथ बाबू इसके प्रेममे पडकर सब भूल जायेंगे।"

एक झटकेके साथ ट्रेन रुक गई। जस्सो चौंक पडा। नन्दराम बोल उठा—"एक स्टेशन निकल आये ?"

जस्सोने पूछा—"यहाँसे कानपुर कितनी दूर है ?"

"यहाँ कोई तीन-चार कोस होगा।" नन्दरामने उत्तर दिया।

जस्सोने सोचा—"बस तीन-चार कोस! मुझे तो ऐसा जान पड़ा कि सैकडों कोस पीछे छूट गया।" दो मिनिट पश्चात् गाडी पुनः चली, जस्सो भी पूर्ववत् ध्यान मग्न हो गई।

३१

उपर्युक्त घटना हुए तीन वर्ष व्यतीत हो गये। रामनाथ आजकल विकालत करते है। उनके एक दो वर्षका पुत्र है। चम्पाका विवाह भी रामनाथके विवाहके एक वर्ष पश्चात् हो गया था। चम्पा आजकल अपनी ससुरालमे है। चम्पाके विवाहमें नन्दरामके यहाँसे कोई नहीं आया था, क्योंकि उसे कोई सूचना नही दी गयी थी। रामनाथके विवाहके पश्चात् नन्दराम सिंह तथा रामनाथमे दो तीन बार परस्पर पत्र-व्यवहार हुआ—तत्पश्चात् बन्द हो गया था। बन्द होनेका कारण यह था कि रामनाथने नन्दरामके दो-तीन पत्रोंका उत्तर नहीं दिया था अतएव नन्दरामने भी पत्र लिखना बन्द कर दिया।

इधर नन्दरामके परिवारमे भी बड़ा उथल-पुथल हो गया। रामनाथके विवाहके एक वर्ष पश्चात अर्जुनसिंहकी मृत्यु हो गई। अर्जुनसिंहकी मृत्यु जस्सोका विवाह न हो सकनेके कारण हुई। जस्सोका विवाह नहीं हुआ। जिस जिस जगह अर्जुनसिंहने जस्सोका विवाह संबन्ध करना चाहा वहीं उनके शत्रुओंने नन्दरामसिंहके पिछले जीवनकी पोल खोलकर उन्हे भड़का दिया। इस अपमानसे उन्हे और नन्दराम-सिंहको घोर मानसिक क्लेश हुआ। परन्तु जस्सो इससे प्रसन्न थी। उसने निश्चय कर लिया था कि वह आजन्म कुमारी रहेगी। इस कारण उसके इस निश्चयकी पूर्ति बड़े सरलता पूर्वक हो रही थी। जिसे उसका पिता तथा बाबा अपना घोर अपमान समझते थे उसे

जस्सो अपने निश्चयके प्रति ईश्वरीय सहायता समझती थी। इससे आत्माभिमानी अर्जुनसिंहके हृदयपर बड़ा सदमा पहुचा। वह बीमार पड गये और एक मास तक रोग-शय्याका सेवन करके इस संसारसे विदा हो गये।

पिताकी मृत्युके पश्चात् नन्दरामने एक कुलीन परन्तु दरिद्र ठाकुरको दहेजमें एक गाँव देनेका प्रलोभन देकर, अपने पुत्रके साथ जस्सोका विवाह करनेके लिये राजी कर लिया, परन्तु जस्सोने विवाह करना अस्वीकार कर दिया। उसने अपने पितासे स्पष्ट कहा कि—"यदि तुम मेरा शेष जीवन दुःख-मय नहीं बनाना चाहते हो तो मेरा विवाह करनेका विचार त्याग दो।"नन्दरामने जस्सोको बहुत समझाया-बुझाया, परन्तु वह किसी प्रकार भी राजी न हुई। उसने यहाँ तक कह दिया कि—"यदि तुम मुझे विवाहके लिए अधिक दबाओगे तो मैं कुछ खाकर सो रहूंगी।" विवश होकर नन्दरामसिंह-ने जस्सोके विवाहका विचार छोड़ दिया। परन्तु इससे नन्दरामको बहुत दुःख था। पतिके मृत्युके दो वर्ष पश्चात् नन्दराम सिंहकी माताका भी देहान्त हो गया। वह भी अन्त समय तक जस्सोके विवाहका स्वप्न देखती रहीं। नन्दरामसिंह माताकी अन्त्येष्टि क्रियासे छुट्टी पा चुका है। आजकल दोनोंका जीवन बड़ा अशान्तिमय है। नन्दरामसिंह दिन भर बाहरी कमरेमें पड़ा रहता है—जस्सो घरके भीतर पड़ी रहती है। नन्दरामसिंहके पास ज़मीदारी संबन्धी कार्यके अतिरिक्त वैसे लोग कम आते जाते हैं। केवल दो तीन व्यक्ति, जो नन्दरामसिंहके सच्चे शुभचिंतक हैं और दो चार ऐसे व्यक्ति जो खुशा-

मद तथा चापलूसी द्वारा अपनी स्वार्थ-सिद्धि किया करते है, उसके पास आते-जाते हैं। दिनमें इन लोगोंके आते-जाते रहनेसे उसका मन बहला रहता है। परन्तु रातमें उसका समस्त दुःख—उसके हृदयकी सारी अशान्ति जागृत हो उठती है। परन्तु जस्सो बेचारीको दिनमें भी मनबहलावका कोई साधन प्राप्त नहीं होता। जस्सोके पास दो एक टहलनियोंके अतिरिक्त गाँवकी और कोई स्त्री नहीं आती। कैसे आवे? सोनासे नन्दरामसिंहका विवाह विधिपूर्वक हुआ था या नहीं? यदि बिना विवाह हुए ही जस्सोका जन्म हुआ है तो? जस्सोसे कोई भलामानुस अपने लड़केका विवाह करनेको तैयार क्यों नहीं होता? ये तीन-चार प्रश्न ऐसे थे जो गाँव-वालोंके मनमें उठा करते थे। उन्हें इन प्रश्नोंका संतोषजनक उत्तर नहीं मिलता था।

हृदयकी सारी अशान्ति जागृत हो उठती है। परन्तु जस्सो बेचारीको

जस्सो बेचारी कभी अपनी मृत अभिलाषाओंपर आँसू बहाया करती, कभी संसारकी अस्थिरता तथा असारतापर हँसा करती थी—यही उसकी दिनचर्य्या थी। इधर नन्दराम भी जब अकेला होता तो अपने पिछले जीवनपर विचार करके दुःखी हुआ करता था। एक बातका उसे बडा ही पश्चात्ताप था। और वह बात यह थी—कि उसने अपने मित्रका कहना न माना। यदि वह मित्रका कहना मानकर उसके गाँवमे स्थायी रूपसे स्थित हो जाता तो उसे भीख न मागनी पडती। माता-पितासे शीघ्र मेल भी हो जाता। बाबू रामनाथके यहा आश्रय लेनेका अवसर न आता। रामनाथसे जस्सोका प्रेम न होता, अतएव वह विवाह कर लेती। इतना हो जानेसे उसका जीवन इतना दुःखपूर्ण न होता। समय रूपी जर्राहने सोनाका विरह-घाव भर ही दिया था—अब केवल चिन्ह मात्र रह गया था। अतएव अब उसका जीवन सुखसे नहीं तो संतोषके साथ व्यतीत हो सकता था। परन्तु केवल एक भूलके परिणाम स्वरूप आज उसका जीवन घोर दुःखपूर्ण हो गया। आज वह इस बातको पूर्णतया महसूस करता है कि सोनाको भगा ले जाकर उसने पाप किया था। यदि वह पाप नहीं था तो उसे इतना दुःख क्यो मिला और मिल रहा है? दुःख पापसे ही मिलता है, पुण्यसे नही। परन्तु, यदि उसने पाप किया भी तो संसारकी दृष्टिमें। ईश्वरकी दृष्टिमें तो उसने कोई पाप नहीं किया। परन्तु समाजके प्रचलित नियमों तथा क़ानूनोका उल्लंघन करना भी पाप ही है। यदि पाप नहीं तो उसका दण्ड क्यों मिलता है। निस्सन्देह सोनाको भगा लेजाना पाप था। उसके जीवनके बहुत थोडे दिन सुखमें बीते, और वे

दिन वह थे जब वह सोनाके साथ कलकत्तेमे था, परन्तु अब तो उस समयकी स्मृति भी हृदयको उत्फुल्लित करनेके बदले पीड़ित करती है। दु ख तथा अशान्तिके समय सुख और शान्तिकी स्मृति सुख नहीं पहुंचाती। आह! यदि वह अपने जीवनको फिर नये सिरेसे आरम्भ कर सकता तो—।

नन्दराम सिहका एकान्त समय इन्हीं विचारोंमे व्यतीत होता था। जस्सोको देखकर उसका दुःख और भी बढ जाता था। जस्सो पूर्णवयस्क थी, यौवनका विकास पूर्णतया हो चुका था। यह वह समय था जब उसे जीवनका सुख उठाना चाहिए था। परन्तु जब वह उसे घरके एक कोनेमे तिरस्कृता, अनादृता, कलङ्किताकी भाँति पड़े देखता था तो उसका हृदय विदीर्ण होने लगता था। उस समय नन्दरामको जस्सो अपने पापोंका मूर्त्तिमान प्रायश्चित्त दिखाई पड़ती थी।

इसी प्रकार कुछ दिन व्यतीत हुए। अन्तमे जब दोनों अपने इस जीवनमे ऊब उठे तो एक दिन नन्दराम सिहने जस्सोसे कहा—बेटी, क्या तू अपना सारा जीवन इसी तरह बितायेगी? मुझसे तो अब तेरी यह दशा नहीं देखी जाती। यदि तू रामनाथसे ही विवाह करके सुखी हो सकती है तो मैं तेरा विवाह उनसे करनेको तैयार हूं। मैं उनके पास जाऊंगा और उनसे प्रार्थना करूंगा कि वह विवाह करलें। जस्सोने विषादपूर्ण मन्द मुस्कानके साथ कहा—परन्तु वह तुम्हारी बात क्यों मानने लगे?"

"मैं उन्हे मनाऊँगा—जैसे मानेगे वैसे मनाऊँगा।"

"परन्तु उनका तो विवाह हो चुका।"

"तो क्या हुआ। एक आदमीके क्या दो विवाह नहीं होते ?"

"वह मान भी ले, परन्तु मैं तो नहीं मानूंगी।"

नन्दराम चौंक पड़ा। उसने आश्चर्य भरे नेत्रोंसे जस्सोको देखकर कहा—"क्या कहा ? तू नहीं मानेगी ?"

"नहीं।"

"तो क्या अब तू उनसे भी विवाह करनेको तयार नहीं।"

"नहीं।"

"क्यों ?"

"उनका विवाह तो हो चुका।"

"हो चुका तो क्या हुआ, एक और हो सकता है।"

"परन्तु उस विवाहसे क्या मैं सुखी हो सकूंगी। पिताजी, यदि आप ऐसी आशा करते हैं तो भूल करते हैं। स्वयम् तो सुखी हो ही न सकूंगी, उनके भी सुखमय जीवनके नाशका कारण हो जाऊंगी। मैं ऐसा काम नहीं करूंगी। अपने साथ उनका सुख नष्ट-भ्रष्ट नहीं करूंगी। उन्हें सुखी रहने दो पिता जी। भगवानने उन्हे संसारका सुख लूटनेके लिए ही बनाया है।"

"और तुझे ?" नन्दरामने उत्तेजित होकर पूछा।

"मुझे ? मैं यह तो अभी स्वयम् नहीं जान सकी कि भगवानने मुझे किस लिए पैदा किया। कदाचित दुःख भोगनेके लिए ही पैदा किया होगा।"

"नहीं, यह झूठी बात है। भगवान मुझे दुःख दे सकते हैं,

मैं उनका अपराधी हूं, परन्तु तुझे ? तुझे दुःख देनेका उन्हे कोई अधिकार नहीं। तूने उनका कौनसा अपराध किया है ?"

"एक अपराध अवश्य किया है।"

"वह कौन सा ?" ननन्दरामने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

"जिस सुखकी मैं अधिकारणी नहीं थी उस सुखको पानेकी आशा करके। बावन होकर चांदको पकडनेकी चेष्टा करना भी अपराध ही है पिता जी।"

नन्दराम चुप होकर जस्सोका मुह ताकने लगा। वह नहीं समझ सका कि जस्सोकी बातका क्या उत्तर दे। थोडी देर पश्चात् वह बोला –तो फिर अब तू करेगी क्या ? रामनाथसे भी विवाह न करेगी, और किसीसे भी विवाह न करेगी, तो शेष जीवन कैसे व्यतीत करेगी ? मैं तो इस जीवनसे ऊब गया—अपने जीवनसे ऊब गया, तेरे जीवनसे ऊब गया। मैं यदि मर जाता तो अच्छा था, अपनी आखों तेरी यह दशा तो न देखता।'

इतना कहकर नन्दराम रोने लगा। परन्तु जस्सोकी आँखोमें आँसूकी बूंद भी न आई। वह उसी प्रकार विषादयुक्त मन्दमुस्कानके साथ बोली रोनेसे यह दुःख दूर नहीं होगा। चाहे जितना रोओ, आँसुवोंमें डूब जाओ, पर कुछ लाभ न होगा। यदि इस दुःखसे छुटकारा पाना चाहते हो तो हंसो पिताजी, खूब हंसो। अपने ऊपर हंसो, संसारपर हंसो। अपनी भूलोंपर हंसो, अपनी लालसाओंपर हँसो। अपने प्रेमियोंपर हंसो, अपने द्रोहियोंपर हँसो। हँसनेमे ही कल्याण है। मैं जब रोती हूं तो दुःख मिलता है, हँसती हूं तो शान्ति

मिलती है। इसी लिए तुमसे कहती हूं, तुम भी हँसो, तुम्हे भी शान्ति मिलेगी।"

"परन्तु हँसनेका कौनसा कारण है बेटी ?"

"अपने ऊपर इस लिए हँसो कि तुमने ससारको नही समझा। संसारपर इस लिए हँसो कि संसारने तुमको नहीं समझा। अपनी भूलोंपर इस लिए हँसो कि उनका सुधार असम्भव है। अपनी लालसाओंपर इस वास्ते हँसो कि वे अनधिकार चेष्टा थी। अपने प्रेमियोंपर इस कारण हँसो कि उनका प्रेम मिथ्या था, अपने द्रोहियों-पर इसीलिए हँसो कि उनका द्रोह झूठा है। इससे अधिक हँसनेके और कौन कारण हो सकते है ?"

"परन्तु हँसना अपने बशकी बात थोडी ही है।"

"अपने बशकी बात हो सकती है, यदि तुम उसके कारणोंमें विश्वास करो और हँसनेका अभ्यास करो। मैंने अभ्यास किया है—रोते-रोते थक गई हू तब हँसनेका अभ्यास किया है। मुझे सफलता मिली है। तुम अभ्यास करो तुम्हे भी सफलता मिलेगी।

"परन्तु इस दशामे यहां रहनेसे तो मुझे कभी हसी नहीं आ सकती।"

"तो चलो, छोडो इस घरको और इसके मोहको। बाहर चल-कर संसारको देखो और उसपर हंसो। तुम्हे याद होगा पिताजी, हम तुम जब तक घूमते फिरते रहे और भिक्षावृत्ति करते रहे तब तक इतने दुखी कभी नहीं रहे। जबसे हमने उसे छोड़ा और सुखको प्राप्त करनेकी चेष्टा की तभीसे दुःखने हमारा पल्ला पकड़ा।"

नन्दराम कुछ क्षणों तक विचार करके बोला --बात तो तू ठीक कहती है, परन्तु इस सम्पत्तिका क्या होगा ?"

"सम्पत्तिको भी छोड़ो। जो वस्तु सुख और शान्ति नहीं दे सकती उसका मोह क्यों करते हो ? वह तुम्हारे कामकी नहीं। जिनको उसकी आवश्यकता है, जिन्हे वह सुख और शान्ति दे सकती है—उन्हे दान करदो। यही उसका सदुपयोग है। अपने पास रखना उसका दुरुपयोग करना है।"

"अच्छा सोचूगा, तेरी बातपर विचार करूंगा। यदि इसके अतिरिक्त और कोई उपाय न सूझेगा तो यही करूंगा।

३६

सायंकालके छः बजे हैं, बाबू रामनाथ अपनी कोठीके बरामदेमें एक आराम-कुर्सीपर लेटे हुए एक पुस्तक पढ रहे हैं। उनसे थोडी ही दूरपर एक दासी उनके पुत्रको खेला रही है। सहसा टेलीफोनकी घंटी बजी। रामनाथ पुस्तकपरसे दृष्टि हटाकर टेलीफोनकी घंटी सुनने लगे। इसी समय हरद्वारी टेलीफोनपर पहुंच गया। रामनाथ पुनः पुस्तक पढने लगे। एक मिनिट पश्चात् हरद्वारी आकर बोला—"आपको बाबू ब्रजकिशोर टेलीफोनपर बुला रहे हैं।" रामनाथ पुस्तकको कुर्सीपर रखकर टेलीफोन पर पहुंचे और रिसीवर उठाकर बोले "हलो, ब्रजकिशोर! हाँ—कहाँ चलोगे? राट, डोण्ट बी सिली (वाहियात-बेवकूफ मत बनो) अच्छा, यह बात है। आलराइट, एज यू लाइक (अच्छा, जैसी तुम्हारी इच्छा) तो यहीं आ जाओ, खाना यहीं खा लेना—घंटे दो घंटे गप-शप रहेगी, फिर एक साथ चले चलेंगे। नहीं, खाना तो यहीं खाना पडेगा—अरे भई मैं घरमें कह चुका हूं। नो, नो, कम एटवन्स लाइक ए गुड बाय। (नहीं नहीं, भले आदमीकी तरह तुरन्त चले आओ) यस दैट्स राइट (हाँ यह ठीक है)।

रामनाथ पुनः कुर्सी पर आ बैठे और हरद्वारीको बुलाकर बोले—"देखो, घरमें कह दो—बाबू ब्रजकिशोर भी खाना खायेंगे।" यह कहकर वह पुनः पुस्तक पढ़ने लगे।

बीस मिनिट पश्चात् बाबू ब्रजकिशोर अपनी मोटरकारपर आ पहुंचे। मोटरसे उतरकर उन्होंने शोफ़रसे मोटर वापस ले जानेको कहा। तत्पश्चात् खटपट करते हुए रामनाथके पास आये। रामनाथ पहलेहीसे सम्हलकर बैठ गये थे। रामनाथकी कुर्सीके बराबर ही एक दूसरी कुर्सी पड़ी हुई थी। उसपर बैठते हुए ब्रजकिशोर बोले "क्या हो रहा है?"

रामनाथ बोले— "एक नाविल पढ़ रहा था। हाँ, आज आपको यह थियेटर देखनेकी क्या सूझी?"

अरे भई, मुझे क्या सूझी। कम्पनीवालोंने दो काम्पलीमेन्टरी टिकिट भेज दिये—मैंने सोचा चलो देख आवें।

"हां भई, डिप्टी-कलक्टर ठहरे कि दिल्लगी। तुम्हें न भेजेंगे तो क्या हमें भेजेंगे।

"डिप्टी-कलेक्टरीकी बात नहीं। मैनेजर मुझे पहलेसे जानता है। जब पिताजी यहाँ डिप्टी कलेक्टर थे तो उन्होंने कम्पनीका कुछ काम करा दिया था तभीसे मैनेजर मानता है।"

"तुमने भी कोई काम निकाला कि नहीं, या मौरूसी खाता ही चल रहा है।"

"अभी तक कोई काम ही नहीं पड़ा।"

"चलो सस्ते छूटे।"

हठात् ब्रजकिशोरकी दृष्टि रामनाथके पुत्रपर पड़ी। वह बोले— "क्यों बे बदमाश क्या कर रहा है? चल इधर आ।"

बालक ब्रजकिशोरको देखकर हँसा और हाथ फैलाकर डगमगाते

हुए पैरोंसे ब्रजकिशोरकी ओर चला। ब्रजकिशोरने लपककर उसे गोदमे उठा लिया और उसका मुँह चूमते हुए रामनाथकी ओर संकेत करके बोले—"यह कौन है? इसे जानता है।"

बालक बोला—"बाबू।"

"यह बाबू नही, भंगी है।"

बालक बोला—"बंगी।"

"हाँ, यह ठीक है।" ब्रजकिशोर मुस्कराकर बोले।

"और यह लालभंगी है।" रामनाथने बालककी ओर देखते हुए ब्रजकिशोरकी ओर उंगली उठाकर कहा।

इसी प्रकार कुछ देर तक ब्रजकिशोर बालकको खेलाते रहे। तत्पश्चात् उसे दासीके पास छोड़कर पुनः रामनाथके पास आ बैठे और बोले—"और क्या समाचार है—आपके घरमे अब तबीयत कैसी है?"

"अब तो बिल्कुल ठीक है।"

थोड़ी देरतक दोनों मौन रहे। हठात् ब्रजकिशोर बोले—"हाँ, यह तो बताओ—कुछ चन्द्रपुरका समाचार भी मिला?"

रामनाथका मुख मलिन हो गया। वह बोले—"फिर तुमने शैतानी की।"

ब्रजकिशोर मुस्कराकर बोले—"यार तुम्हे इतनी निष्ठुरता तो न करनी चाहिए। कमसे कम उनका कुशल समाचार तो लेते रहा करो।"

"क्यों दिल दुखाते हो यार। तुम्हे क्या इसमे कुछ आनन्द आता है? यह सब काँटे तुम्हारे ही बोये हुए हैं।"

"क्यों , मेरे क्यों बोये हुए है ?"

"तुम्हींने मुझे पट्टी पढा-पढाकर निष्ठुर बना दिया।"

"जो हाँ, बजा फर्माते हैं आप। मैंने आपसे यह कब कहा कि आप पत्र-व्यवहार भी न रक्खें।"

"उससे फायदा क्या ? उलटा तबीयतको रंज होता है।"

"रंज होनेका कारण ? अब तो वह घाव अच्छा हो चुका।"

"हा, परन्तु दाग तो बाकी है।"

"हुआ करे। दागसे कुछ कष्ट थोडा ही पहुचता है।"

"हाँ, परन्तु उस दागपर नख-प्रहार करते रहनेसे वह फिर घाव बन सकता है।"

"अजी बस रहने भी दो—अब वह घाव बन चुका। मगर उस्ताद, न कहोगे ? मेरी भविष्यवाणी अक्षरशः पूरी उतरी। कमसे कम यह तो तुम्हे मानना ही पडेगा कि मैं जितना तुम्हे समझता हू इतना तुम स्वयम् अपनेको नहीं समझते। मैं आरम्भसे जानता था कि यह खेल तुम्हारे खेलनेका नहीं है।"

"खैर जी, होगा भी। इस प्रसंगको हटाओ, तकलीफ़ होती है।"

"पता नहीं उसको तुम्हारी बाबत क्या सोचती होगी।"

"जब मैं उसके प्रेमके अयोग्य सिद्ध हुआ तो जो कुछ भी सोचे ठीक है।"

"परन्तु भाई, मैं तो यही कहूंगा कि जो कुछ हुआ ठीक हुआ—कमसे कम तुम्हारे लिए।"

"हाँ ईश्वर जो करता है अच्छा ही करता है । इसमे भी कुछ अच्छाई थी—तभी ऐसा हुआ ।"

"अच्छाई तो प्रत्यक्ष है—आनन्द कर रहे हो ।"

रामनाथने प्रसंग बदलनेके अभिप्रायसे पूछा—"थियेटर साढे न से आरम्भ होगा न ?"

"हा ।"

"तो यहाँसे नौ बजे चलना चाहिए ।"

"सवा नौ पर, दस मिनटका तो रास्ता ही है ।"

"इस समय क्या बजा होगा ?"

ब्रजकिशोर अपनी रिष्टवाच देखकर बोले—"सवा सात बजा है ।"

"भूख लगी हो तो खाना खालो ।"

"नहीं जी इतनी जल्दी भूख क्या लगेगी । कोर्ट (कचहरी) से आकर जलपान किया ही था । हाँ, कल एतवार है, कल बेशक सात सवा सात बजे भूख लग आयेगी, क्योंकि दिन भर घरमे रहनेसे शामको जलपानकी आवश्यकता नहीं पडती ।"

"तो फिर आठ बजे भोजन करेंगे—क्यों ?"

"हाँ, वही तो समय है ।"

"अच्छा चलो कमरेमें बैठें ।"

दोनों उठकर कमरेमें पहुंचे ।

पन्द्रह मिनिट पश्चात् हरद्वारीने शामकी डाक लाकर रामनाथके सन्मुख मेज़पर रख दी । रामनाथ अपने पत्र पढ़ने लगे । ब्रजकिशोरने

'लोडर' का अङ्क उठा लिया और देखना आरम्भ किया। सहसा उनके मुखसे निकला—"अरे।"

रामनाथ एक कार्ड पढ़ रहे थे। कार्ड परसे दृष्टि उठाकर उन्होंने पूछा—क्यों, क्या कोई ख़ास बात है ?

"बेशक।"

"क्या है, सुनाओ।"

ब्रजकिशोरने पढ़ना आरम्भ किया। समाचार इस प्रकार था।

अभूत पूर्व दान।

एक जमींदार और उसकी कन्याका अनुपम त्याग।

अपनी समस्त जमींदारी किसानोंको दान कर दी।

"इलाहाबाद जिलेमे चन्द्रपुर ग्रामके प्रसिद्ध जमीदार ठाकुर अर्जुनसिंहके पुत्र ठाकुर नन्दराम सिंह और उनकी अविवाहिता कन्या कुमारी यशोदा कुँवरिने अपनी समस्त जमींदारी, जिसका मूल्य डेढ़ लाख रुपयेके लग-भग और वार्षिक आमदनी ६ सहस्रके लगभग है, गरीब किसानोंको दान कर दी। और अपनी गृहस्थीका समस्त जेवर तथा कपड़ा इत्यादि गरीब कन्याओंके विवाहके लिए दान कर दिया। इसके अतिरिक्त पचास सहस्र रुपये नक़द अपने गाँव चन्द्रपुरमे एक पाठशाला तथा एक धर्मशाला बनवानेके लिए दान किये।"

रामनाथने चकित हो पत्र ब्रजकिशोरके हाथसे छीन लिया और उक्त समाचारको तीन-चार दफ़ा पढ़ा। ब्रजकिशोर चुपचाप बैठे रामनाथका मुँह ताक रहे थे। रामनाथने पत्र मेज़पर रख दिया और ब्रजकिशोरकी ओर देखकर बोले—"यहाँ तक नौबत पहुंच गई, कमाल है।

"वाक़ई कमाल है ।"

"इससे तो यह प्रकट होता है कि जस्सोने विवाह नहीं किया ।"

"यह भी कमालका काम किया ।"

"बेशक ।"

"एक साधारण देहाती लडकीने तुम्हे परास्त कर दिया ।"

"क्यों न करे, जब कि आप जैसे हमारे मित्र हों, जो सदैव हतोत्साहित ही करते रहे—प्रोत्साहनका कभी एक शब्द भो न कहा ।" रामनाथने किञ्चित रोषके साथ कहा ।

"मेरा जो कर्त्तव्य था वह मैंने किया—उससे आप हतोत्साहित हुए या प्रोत्साहित—यह आप जानें ।

रामनाथ ब्रजकिशोरकी बातपर ध्यान न देकर अपने ही आप बोले—"अब तो असम्भव हो गया ।"

"क्या असम्भव हो गया ।"

"जीवनकी इस घटनाको भूलना । यदि जस्सो विवाह कर लेती तब तो सम्भव था, परन्तु अब असम्भव हो गया । जस्सोने इस कार्यसे मेरे हृदयपर अपनी अमिट छाप कर दी है ।"

ब्रजकिशोरने अविश्वास और सन्देह-पूर्ण स्वरमें कहा—"अच्छा। ऐसी बात है ? कमसे कम उसका यह सर्वस्व त्याग तो मुझे भी जन्मभर याद रहेगा । यदि आपका तात्पर्य भी यही है तो मैं आपकी बात मानता हूँ ।"

ब्रजकिशोरकी बातपर कुछ न कहकर रामनाथ स्वतः बोले—आरम्भमें भी भिखारिणी थी और अन्तमें भी भिखारिणी ही रही।

"जन्मभर ही समझिये—अन्त अभी से कहाँ हो गया, कुछ बुढ़िया थोड़ा ही है ?" ब्रजकिशोरने बड़ी गम्भीरता-पूर्वक कहा।

"हाँ यह भी ठीक है।"

दोनों थोड़ी देरतक मौन बैठे रहे। रामनाथके मुखपर गहरी गम्भीरता थी।

सहसा घडीने टनाटन आठ बजाये। ब्रजकिशोर घडीकी ओर देखकर बोले—आठ बजा।

रामनाथ भी चौंक पड़े। उन्होंने उदासीनता-पूर्वक कहा—"खाना खालो।"

"चलो।"

"मैं तो न खाऊँगा, मुझे भूख नहीं है। तुम खालो।"

"तो मुझे भी भूख नहीं है।"

"नहीं, तुम खालो।"

"मैं खाऊँगा तो आपको भी खाना पड़ेगा।"

"मेरी तो इच्छा नहीं है।"

"तो जाने दो, मैं भी नहीं खाऊँगा।"

"तुम क्यों न खाओगे ?"

"आप क्यों न खांयगे ?"

रामनाथ मौन रहे।

ब्रजकिशोरने कहा—तुम बड़े भावुक हो रामनाथ। मान लो तुमने इस समय खाना न खाया तो इससे क्या होगा ?

"होना-हुवाना क्या है।"

"तो फिर ?"

"इस समय जरा तबीयत रञ्जीदा हो गई।"

"बेवकूफ़ हो। चलो उठो, इन बातोंमे क्या धरा है।"

"भगवान जाने तुम्हारा हृदय काहेका बना है।"

"मेरा हृदय उस वस्तुका बना है जो व्यर्थकी भावुकतासे प्रभावित नहीं होती। चलो उठो।"

ब्रजकिशोर रामनाथको उठाकर खाना खानेके लिए ले गये।

* * * *

तीन मास पश्चात्।

मसूरी जाते हुए ब्रजकिशोर तथा रामनाथ दो दिनके लिए हरिद्वारमे ठहरे।

सवेरे गंगास्नान करके जिस समय ये दोनों प्लेटफार्म पर टहलते हुए लौट रहे थे—उसी समय रामनाथ हठात् सामनेसे आती हुई एक स्त्रीको देखकर ठिठुक गये। उस स्त्रीने पास आकर रामनाथकी ओर देखा। रामनाथके मुखसे निकला—"जस्सो! तुम यहाँ ?"

जस्सो खड़ी हो गई। उसने मृदु-मुस्कानके साथ कहा "बाबू रामनाथ, यहाँ कैसे ?"

"मसूरी जा रहा हूं, दो दिनके लिए यहाँ ठहर गया।"

"घरमें सब आनन्द-मंगल ?"

"हां सब अच्छी तरह हैं। मैंने तुम्हारा हाल अखबारमे पढ़ा था। यह तुम्हे क्या सूझा ?"

जस्सो हँसी। उसने कहा—"जो सूझना चाहिए था वही सूझा।"

"तुमने वह काम किया जो कोई नहीं कर सकता।"

जस्सो पुनः हँसी और बोली—"मैंने वह काम किया जो मेरी-सी परिस्थितिमें होनेवाले प्रत्येक आदमीको करना चाहिए।"

रामनाथ निरुत्तर होकर जस्सोका मुँह ताकने लगे।

ब्रजकिशोर भी गम्भीर बने हुए खड़े थे।

"नन्दराम कहां हैं ?"

"धर्म्मशालामें हैं।"

"किस [illegible] ?"

जस्सोने एक धर्म्मशालाका नाम लिया।

"दोपहरमें उनसे भेंट करने आऊँगा।"

"अच्छी बात है।"

"यहां कितने दिनों रहनेका विचार है ?"

भिखारियोंका विचार ही क्या—क्या जाने कब किस ओर चल दें।"

"रानी होकर तुमने भिखारिणी बनना पसन्द किया—यह दुःखकी बात है।"

"मैं रानी थी कब ? जब होश संभाला तब भिखारिणी ही थी। बीचमें कुछ समयके लिए अचेतसी होगई थी—उस समय क्या रही, मैं स्वयम् नहीं जानती। अब जब फिर चेत हुआ तो वही भिखारिणीकी भिखारिणी। जिसके भाग्यमें भिखारिणी रहना बदा है वह रानी कैसे हो सकती है ?"

रामनाथ हत-बुद्धि होकर मौन खड़े रहे।

जस्सोने पग आगे बढ़ाते हुए कहा—“घरमें सबसे मेरी राम राम कह देना।”

रामनाथ बोले—“जस्सो, तुम स्त्री नहीं देवी हो।”

जस्सो हंसी और बोली—“देवी! देवी होती तो मेरा कोई पुजारी भी होता।”

“मेरा हृदय सदैव तुम्हारी पूजा करता रहेगा।”

“विश्वास और श्रद्धाहीन हृदयकी पूजासे कोई मनुष्य देवता नहीं बन सकता।”

इतना कहकर जस्सो हंसती हुई चली गई।

रामनाथ म्लान मुख होकर खड़े ताकते रह गये। ब्रजकिशोरने उनके कंधेपर हाथ रखकर कहा—“चलो अब क्या देखते हो।”

रामनाथ एक दीर्घ निश्वास छोड़कर आगे बढ़े।

ब्रजकिशोरने पूछा—“नन्दरामसिहसे मिलने चलोगे?”

रामनाथने उत्तर दिया—अब मैं कहीं न चलूंगा—अब सीधे मसूरी चलो।

“क्या आज ही?”

“हां आज ही। बल्कि इसी गाडीसे।”

तो शीघ्र चलो। ट्रेनका समय आ रहा है।

दोनों शीघ्रतापूर्वक अपने निवास-स्थानपर पहुंचे और असबाब लेकर स्टेशनकी ओर चल दिये।

समाप्त

उग्र-लिखित

क्रान्तिकारी कहानिया और उपन्यास

तीसरा संस्करण — मूल्य बारे आने

एक सालके अन्दर तीन बार छपनेका सौभाग्य यदि हिन्दीमें किसी पुस्तकको प्राप्त हुआ है तो उग्रजीकी अमर रचना इस "चन्द हसीनोंके खतूत"को ही प्राप्त हुआ है। कलकत्ताके सन् १९२६ के हिन्दू मुस्लिम दंगेका सजीव वर्णन और सच्चे प्रेमकी प्रतिमा 'नरगिसका' चरित्र इतना हृदयग्राही है कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता।

हिन्दू-मुसल्मानोंके आपसी कलहने इस देशके बड़ेसे बड़े नेताको भी विचलित कर रखा है। इन दंगोंसे किसका नुकसान होता है? ये दंगे कैसे रोके जा सकते हैं? ये प्रश्न इस समय पराधीन भारतकी प्रधान समस्या हैं। यदि आप इनका सत्य-सत्य उत्तर जानना चाहते हों तो उग्रजीकी इस पुस्तकमें ढूंढ़िए।

उग्रजीकी सभी रचनायें स्थाई ग्राहकोंको पौने मूल्यमें दी जाती हैं। बड़ा सूचीपत्र और स्थायी ग्राहक होनेके नियम हमसे मंगाइए।

मैनेजर, बीसवीं सदी पुस्तकालय गऊघाट, मिर्जापुर सिटी।

उग्रजीकी सर्वतोमुखी प्रतिभाका यह एक सुन्दर उदाहरण है। नाटक, उपन्यास, कविता आदि साहित्यके सभी अङ्गोंको चुनी हुई रचनाओंके कारण साहित्य पारखी इसे 'अमर कृति' कहनेके लिए बाध्य होंगे इसमें ज़रा भी अत्युक्ति नहीं।

उग्रजीकी अलौकिक प्रतिभा तथा उनकी गगनविहारिणी कल्पना शक्तिने इसमें हिन्दू समाजकी आजकलको सर्व प्रधान समस्या अछूतोद्धारका बड़ा मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। अघोड़ी मनुष्यानन्दकी यौगिक शक्तियों और विभूतियोंका वर्णन पढ़कर तबीयत फड़क उठती है। मनुष्यको वास्तविक मनुष्यताका ऐसा सजीव चित्रण और कहीं मिलना असंभव है—हां असंभव है।